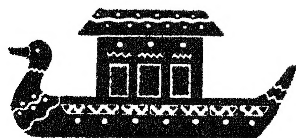
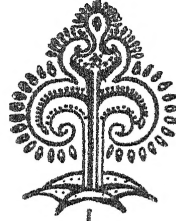
लायली आसमान





प्रथम संस्करण	१९६५
प्रकाशक	साहित्य भवन प्रा० लि० इलाहाबाद-३
मुद्रक	पियरलेस प्रिंटर्स इलाहाबाद
आवरण	शि० गो० पाण्डेय
मूल्य	**आठ रुपये**

अनुवादक
वीरेन्द्रनाथ मिश्र

यह लायली आसमान की कहानी है !

लायली आसमान के ओढ़ने की कहानी !

लखनऊ वाली लायली आसमान !

लखनऊ के नवाब वाजिद अली शाह को बन्दी बनाकर कलकत्ता के मटियाबुर्ज में रखा गया। फिर, वहाँ भी एक छोटा-मोटा लखनऊ बस गया।

लेकिन, लखनऊ के नवाब के सितारे की तरह लखनऊ का भी सितारा डूब गया। उसी आखिरी सितारे की आखिरी चमक थी लायली आसमान।

लायली की कहानी, एक नारी के दुख, दर्द और असंतोष की कहानी, बंगला की महान कथा-शिल्पी महाश्वेता देवी की सधी हुई कलम से और भी रंगीन हो गई है।

विश्वास है कि एक बार लायली की यह कहानी पढ़ कर पाठक इसे बरसों न भूल पायेंगे और वह मन ही मन कहीं टीसती रहेगी।

साहित्य भवन ने विभिन्न भारतीय भाषाओं के श्रेष्ठ कथा-साहित्य को हिन्दी में प्रकाशित करने की जो योजना बनाई है, 'लायली आसमान' का प्रकाशन उसी दिशा में एक अभिनव प्रयास है।

लायली आसमान

एक

लायली आसमान का आईना। जी हाँ! लखनऊ वाली लायली आसमान का। आलिशाह ने उसे तोहफा दिया था।

दीवार पर टँगे आईने की तरफ कुन्दनलाल ने देखा। बड़ा आईना। अण्डाकार। बेशकीमती शीशा। चाँदी का फ्रेम एवं नक्काशीदार पत्तों के बीच-बीच में चित्रित गुलाब।

कुन्दन को याद आया। वह किस तरह भागा-भागा चीना बाज़ार गया था। रहमत नीलाम वाले को कितनी खोज-बीन के बाद वह ढूँढ़ सका था। पहले तो रहमत ने बात ही नहीं करनी चाही। बाद में कुन्दनलाल का परिचय पाकर वह थोड़ा डरा था।

डरते-डरते, शरीर झुकाकर, सलाम करके, वह माफी माँगता है। इसके बाद कहता है, 'किस तरह जानूँगा,. बताइये तो! वह आदमी आपके घर से माल-मत्ता लूट लाया है।'

'क्या सब बिक गये?' यह पूछने में कुन्दन का गला भर आया।

'सब नीलाम पर उठा दिया था न!'

इसके बाद रहमत नौकरों को बुलाता है। कुन्दन को बैठाता है और आप भी बैठ जाता है। पान और शरबत मँगाता है। कुन्दन कुछ भी नहीं लेता। सिर्फ सर थामे बैठा रहता है और चिन्ता करता है। लायली के व्यवहार, शौक और पसंद की सब चीजें! इतरदान, गुल्दान, पोशाक, जाम वगैरह सब कुछ भी न रहा। उन चीजों को देखने और उलटने-पलटने से ही कुन्दन को थोड़ी राहत मिलती।

रहमत आग्रह-पूर्वक कुन्दन के चेहरे की ओर देखता रहता है। शायद वह समझने की कोशिश कर रहा है कि यह आदमी क्या सोच रहा है।

कुछ देर बाद, दबी आवाज़ में वह बोलता है, 'कुन्दन बाबू, सिर्फ यही एक बच गया है।'

कुन्दन आँखें उठाकर देखता है। रहमत कहता है, 'बस केवल यही आईना, देखिये, यह आप ले जाइये।'

कुन्दन कुछ न बोलकर जेब में हाथ डालता है। रहमत बोल उठता है, 'नहीं, नहीं! दाम मैं नहीं ले सकूँगा। इसे आप ले जाइये।'

वह आईना ले आया। बेल-बूटे का काम किया हुआ ढक्कन मैला हो गया है। खुद ही आईने को मोड़ कर उसने कुन्दन के हाथों में थमा दिया और बोला, 'माल कौन-कौन खरीद ले गया है, मेरे खाते में उन लोगों का नाम पता दर्ज है। मैं क्या.......।'

कुन्दन ने हाथ हिलाकर उसे मना कर दिया। आईना लेकर जब वह गाड़ी पर चढ़ने लगा, उस समय रहमत थोड़ा आनाकानी करके बोला, 'कुन्दन बाबू, आईना, क्या आप इस्तेमाल करेंगे?'

लाल-लाल आँखों से कुन्दन ने देखा। रहमत साहस का काम कर बैठा था। वह कुन्दन का हाथ पकड़कर बोला, 'माफ करेंगे, अकेले........रात-बिरात आईना न देखने से ही शायद........।'

अचानक कुन्दन की दोनों आँखें एक अस्वाभाविक रोशनी से

चमक उठीं। वह बोला, 'क्यों! ऐसी बात क्यों?'

रहमत गले की ताबीज छूकर बोला, 'मैं नहीं जानता। लेकिन एक दिन एक बाबू आये थे। उन्हें कमरे में बैठा कर मैं दूसरे कमरे में आया था।' वह आवाज धीमी कर के बोला, 'बाबू अचानक डर गये। बाहर निकल आये। मुझे बिना कुछ बताये ही भाग खड़े हुए।'

कुन्दन इस बार हँसा। कुन्दन के मुँह पर हँसी देखकर सभी डरते हैं, रहमत भी डरा। कुन्दन बोला, 'यह रुपया रखो। मैं खुश हुआ हूँ।'

कुन्दन की गाड़ी जब खिदिरपुर के 'प्रमोद भवन' में घुसी, उस समय शाम हो रही है। शाम की रोशनी केवल आकाश के पश्चिमी कोने में सिमटी हुई है। आषाढ़ के दिन। आकाश के कोने-कोने में मलिन रोशनी फैलकर करुण और दुःखित छाया की तरह छायी रहती है।

कुन्दन को देख माली और नौकर सब भागे आये। सभी से चले जाने को कुन्दन ने कहा। फिर ऊपर चढ़ गया। लायली का कमरा खोला।

बहुत बड़ा कमरा। अन्धकार। गलीचे और पर्दे पर धूल। दीवार पर कुन्दन ने आईना टाँग दिया।

दीवार पर सिर टिकाये वह खड़ा रहा। फिर आँखें खोलकर दीवार की तरफ उसने देखा।

उसकी छाती में दर्द हो रहा है। मोटी-मोटी उँगलियों को उसने छाती पर दबाया। तत्पश्चात् रुँधे गले से अस्फुट शब्दों में पुकार उठा 'लायली!'

इसके बाद बड़ा हताश-सा कुन्दन ने सिर हिलाया। लायली नहीं है, लायली नहीं है, लायली नहीं है, लायली कहीं भी नहीं है। कुन्दन ने जोरों से सिर के बाल पकड़ लिए।

कुछेक क्षण उसने कच्चे-पक्के बाल खींचे। इसके बाद वह गलीचे

पर चहलकदमी करने लगा। थोड़ी देर बाद ही उसे ऐसा लगा कि उसका दम घुट रहा है। उसने देखा। उसके पाँव की चोट से गलीचे से धूल उड़ती है। उसने एक खिड़की खोली।

बाहर वर्षा हो रही है। रिमझिम, रिमझिम। बूँदाबूँदी। कुन्दन ने खिड़की से बाहर झाँका। फिर लौट आया। आईने के सामने एक चौकी खींचकर बैठ गया।

यही कमरा। आषाढ़ की ऐसी ही एक शाम। कितनी ही बातें याद आ रही हैं।

याद आती हैं, केवल याद आती हैं। स्मृति भी महान कष्ट दे सकती है। दिन-ब-दिन मनुष्य को जरा-जरा जला सकती है।

आज बहुतेरी बातें याद आ रही हैं। स्मृति में डुबकिया लगा कर क्या वह शान्ति पा रहा है? नहीं। शान्ति नहीं, जलन, बस केवल जलन ही जलन। लेकिन इस जलन में जलने का एक आकर्षण तो है ही।

लायली की बातें याद आती हैं। इसी आइने के सामने बैठ कर लायली आसमान उसे गाना सुनाया करती थी। कितनी ही शाम, कितनी सुबह। लेकिन केवल लायली की ही तो नहीं। और भी एक आदमी की याद आती है।

बजरंगी, बजरंगी, बजरंगी!

कुन्दन के हृदय में एक मूक ध्वनि जाग उठी।

बजरंगी सारंगीवाला। श्याम रङ्ग, काली भौहें, काली आँखें, दोनों आँखों में भय-मिश्रित प्रार्थना। कोमल और कातर दृष्टि।

ऐसा लगता है, लायली गाना गा रही है और मुँह नीचे किये सारंगी के तार बजरंगी खींच रहा है। बीच-बीच में आँखें उठाता है और लायली की आँखों से आँखें मिलाता है। उसी समय उसकी आँखों में जैसे रोशनी जल उठती है। कुन्दन दोनों को ही देख रहा है। कुन्दन की आँखों में एक प्रेमपूर्ण प्रश्रय-भाव है।

'बजरंगी, तुम्हें मैं पहचानता हूँ। तुम शमा देखने वाले भोले परवाने हो। पंख पसार कर उड़ गये। बजरंगी, तुम्हारे बारे में मैं सोचता रहता हूँ। हर समय सोचता रहता हूँ। तुम्हें मैंने पहचाना है, लेकिन लायली!'

लायली ने एक दिन भी बजरंगी को प्रश्रय नहीं दिया। उसी एक दिन, उसी भीषण और भयानक शाम को, जिस दिन बजरंगी की सारंगी की आवाज़ हमेशा-हमेशा के लिये खो गयी। लायली ने कहा था, 'आज मेरे जशन की रात है।'

उस दिन लायली पानी में इत्र डाल कर नहायी थी।

एक-एक कर अंग-अंग में कितने ही गहने उसने पहने थे। हीरा व पन्ना की कंठी, मुक्ता का सात लड़ियों वाला हार, चुन्नी-मुक्ता का हार। हाथ, बाँह, उँगली, कमर, पैर सभी में गहने।

उस दिन ऊपर की सभी भाड़-बत्तियों को जलाया गया था। खिड़की से पर्दा उतारकर बेले के फूल की मालाओं की भालर लटकायी गयी थी। सारंगी वाले को दरवाजे के एक कोने में बैठा दिया गया था। खुद कुन्दन की छाती पर सिर रखकर शराब पी थी। शीशे का गिलास दीवार पर दे मारा था और तालियाँ बजाकर हँसते हुए बोली थी, 'क्या सुरीली आवाज है!'

उस रात लायली ने कितने गाने गाए थे। लायली के गानों से वह रात जैसे नशे में झूम-झूम उठी थी। खिड़की से बाहर झाँकने पर कुन्दन को ऐसा लगा था, आकाश के तारे भी झूल रहे हैं, चाँद झूल-झूल कर पास आता है, दूर चला जाता है और फिर पास आता है।

लेकिन लायली को निकट पाने से ही क्या लायली को समझा जा सकता है? कुंदन ने क्या लायली को पहचाना था? यदि पहचानता होता तो फिर वह लायली को खो कैसे देता? क्या हुआ था लायली को?

लायली को क्या हुआ था ? लायली ने किसी से कुछ नहीं बताया था। शहर भर में धूम मच गयी थी। जो लोग लायली को पहचानते थे, उन्हें आश्चर्य हुआ था। जो उसे नहीं पहचानते थे, उन्हें दुख हुआ था। कौतूहल हुआ था।

धीरे-धीरे खबर मटियाबुर्ज के नवाब के महल भी पहुँची। नवाब-महल में हरेक आदमी एक दूसरे से कहता था, 'सुना है ? लायली के बारे में सुना है ? अरे वही लायली आसमान !'

वाज़िदअली शाह आलबोले का नल हाथ में लिये बैठे हैं।

कौन बतायेगा उनसे ?

उस समय ग्यारह बज रहे थे।

फाटक पार होते ही लगता है, जैसे यही लखनऊ हो। इस फाटक के बाहर १८६५ ई० का कलकत्ता शहर। वहाँ धुँआं-धक्कड़, मनुष्यों का शोरगुल, एक भद्दी व्यस्तता।

फाटक के अन्दर कदम रखते ही चैन की साँस ली जा सकती है। इधर-उधर छोटे-छोटे घर। वहाँ पर बैठे, कोई कोई नवाब के लिखे गजल और शेर की नक़ल करते हैं। कोई नवजवान शायर उर्दू-शायरी लेकर इन्तजार कर रहे हैं, बस एक बार नवाब को सुनावेंगे। अवध केवेलरी के बूढ़े घुड़सवार काले घोड़े को प्यार से चना खिला रहे हैं। कहीं बैठकर कारीगर टोपी सी रहे हैं, बेल-बूटे काढ़ रहे हैं, जरी का काम कर रहे हैं।

फौवारे से पानी निकल रहा है। गुलाब-बाग में माली कार्य-व्यस्त हैं। किशोर दास चीनी बुलबुल और श्यामा पक्षी को दाना चुगा रहा है। बैठकखाने में गवैये गाना गा रहे हैं, सितार पर धुन बाँध रहे हैं। कहीं पर बूढ़े मौलवी साहब क़ुरान की नकल कर रहे हैं।

कभी-कभी इस बड़े कमरे में रोशनी जलती है, कालीन बिछायी जाती है। पाथुरिया घाट और जोड़ासांको की ठाकुरबाड़ी के गवैये आते हैं। शहर के संगीत-रसिक बंगाली पालकी व गाड़ी पर चढ़कर

गाना सुनने आते हैं। नवाब की प्रिय भैरवी की फरमाईश करते हैं। लेकिन नवाब साहब वह भैरवी नहीं सुन सकते। 'बाबुल मोरा नैहर' सुनते-सुनते उनकी आँखें लाल हो उठती हैं, आँखों के कोने में आँसू चमकने लगते हैं। वह भैरवी उनके दिल के खून से लिखी हुई है। लखनऊ छोड़कर बाहर आने के सभी दुःख दर्द भरकर उन्होंने यह भैरवी लिखी थी।

नवाब अकेले हैं। उनका दिल दर्द के बोझ से व्याकुल है। उनका दुःख कौन समझेगा? कोई भी नहीं समझता।

नवाब को जब खबर दी गयी, उनके हाथ से आलबोले का नल गिर पड़ा। प्रौढ़ नवाब अचानक होने वाले इस आघात से जैसे विमूढ़ हो जाते हैं। वह पूछते हैं 'किसने? कौन यह खबर लाया है?'

इसके बाद हाथ के इशारे से खबर लाने वाले को बिदा कर देते हैं।

बहुत देर तक चुपचाप बैठे हैं। इसके बाद धीमी आवाज में बोलते हैं, 'अब क्या होगा? मेरे ईश्वरलाल की अमानत वह किसके हाथों सौंप गयी, किसके हाथों?'

महल में सभी को आश्चर्य हुआ था। 'तो क्या लायली आसमान के प्रति नवाब का....?'

'होगा ही! उसे बार-बार बुलाते जो थे!'

'रूप जो था आग की तरह! नवाब क्या....?'

इसी तरह की नाना किस्म की बातें एक दूसरे के मुँह से निकली थीं।

नवाब की बातें सुनकर सभी को चैन मिली। नहीं, लायली नहीं! लायली के गीत जो खो गये, इसलिये उनका मन हाहाकार कर उठा है।

वाज़िदअली शाह सोच रहे थे। लायली के बारे में नहीं। ईश्वर-लाल की बात। उनके यौवन का दोस्त ईश्वरलाल, जिसकी तरह गाना

गाते और किसी को नहीं सुना। ईश्वरलाल, लायली की माँ मेहरून को प्यार करता था। प्यार में अपनी गान-विद्या उसने मेहरून को उपहार-स्वरूप दी थी।

वाज़िदअली शाह बोले थे, 'यह क्या किया, ईश्वरलाल ! किसे तुमने अपनी गान-विद्या दे दी ?'

'आलिज़ाह, मैं जिससे मुहब्बत करता हूँ।'

'ईश्वरलाल, तब तुम उससे शादी कर लो। तुम दोनों की संतान इस गान विद्या को संभाल कर रखेगी। लेकिन यह क्या कह रहा हूँ ? ऐसा तो नहीं हो सकता। तुम हिन्दू जो हो।'

'आलिजाह, उसके लिये मैं धर्म भी छोड़ सकता हूँ। पर वह राज़ी नहीं होती। लेकिन चिन्ता की क्या बात है ? मेहरून की बेटी को दूँगा। वह मेरी विद्या को संभाल कर रखेगी।'

'उसकी बेटी, कौन ?'

'लायली, लायली आसमान !'

लायली, बाईस वर्ष की लायली ! उसके गले में ईश्वरलाल की गान-विद्या सुरक्षित थी। शीशे का जाम, जिस प्रकार यत्नपूर्वक बहुमूल्य एवं दुष्प्राय मदिरा धारण किये रहता है, यह लायली भी तो वैसी ही थी।

वही लायली चली गई।

लायली चली गई। जाम फूट गया। ईश्वरलाल की वही अनन्य, अतुलनीय गान-विद्या आज खो गयी।

वाज़िदअली शाह ने सिर हिलाया।

आलबोले का नल उठा लिया। तत्पश्चात लंबी साँस छोड़ कर बोले, 'परम् करुणामय, दयालु भगवन ! अब मुझे पास बुला लो। इस शरीर को क्या सुख, क्या दुख, बहुत दिनों तक ढोता रहा हूँ। इस बार तुम मुझे अपना लो। यह शरीर मिट्टी हो जाये। एक-एक कर सभी चले जा रहे हैं, मैं तो और भी अकेला होता जाता हूँ।'

एक बार वह बोले, 'क्यों रे, लायली मर क्यों गयी ? तुम लोग जानते हो ?'

इसके बाद बोले, 'नहीं, नहीं, कहने की जरूरत नहीं, रहने दो।'

नवाब ने जानना नहीं चाहा था।

लेकिन शाम के समय, वीरान घर के अन्धकार में, किसी चिन्ता ने कुन्दन का मन भारी कर दिया। उसे सुनाई पड़ा, जिस प्रकार एक चिड़िया अंधेरा देख कर पिंजड़े में छटपटा कर पँख फड़फड़ाती है, उसी प्रकार, ठीक उसी प्रकार एक प्रश्न कुन्दन के हृदय में बार-बार पँख मार रहा है।

लायली क्यों मरी ? लायली को उसने क्या नहीं दिया ? क्यों मरी लायली ?

कुन्दन उठ खड़ा हुआ। दीवार के हुक से उसने डोरी खींची। इसके बाद टुंग-टुंग, रिमझिम शब्द हुआ। शीशे का फानूस उतर आया। उसने झाड़ की एक मोमबत्ती जलाई। मोमबत्ती निकाल ली और फिर चिरागदान में बैठा दी। चिरागदान को दीवाल के ताखे पर रख दिया। इसके बाद आईने का पर्दा हटाया।

नहीं ! आईने में वह अपनी सूरत नहीं देख पा रहा है। शीशे में क्या इतनी धूल जमी है ? कुन्दन रूमाल से आईने की धूल पोंछने लगा।

ऊँहुँ। किसी तरह साफ ही नहीं होना चाहता।

उस समय कुंदन को याद आया ! उसने घंटा बजाया। नौकर आया। एक गिलास पानी लाया। एक बंडल कागज लाया। पानी में कागज गीला कर वह आईना पोंछने लगा। नौकर कुछेक क्षण अवाक हो खड़ा रहा, फिर बाहर निकल गया।

शीशे को घिस-घिस कर कुंदन ने चमका दिया।

शीशे पर अब जरा भी धूल नहीं।

लेकिन कोई प्रतिछवि भी तो नहीं !

कुन्दन को आश्चर्य हुआ। इसके बाद उसके शरीर से, रीढ़ से होकर जैसे एक बिजली की लहर दौड़ गयी।

आईने में उसके चेहरे की परछायीं भी तो नहीं पड़ती है। परछांयीं नहीं पड़ती है, प्रतिबिम्ब नहीं है।

कुन्दन मंत्र-मुग्ध सा देखता रहा। उसका माथा जैसे झमझम कर रहा है। उससे सभी अंग जैसे किसी की प्रतीक्षा में लीन, व्याकुल हैं। अब कुछ अलौकिक घटना घटेगी। मृत्यु के उस पार से परदा ठेल कर वह आगे बढ़ेगी। लायली आसमान कुन्दन को दर्शन देगी।

कुन्दन को लगा, जैसे बड़ी दूर से तानपुरा बाँधने की रिमझिम आवाज सुनाई पड़ रही है।

चमेली की सुगंध ? चमेली के इत्र की सुगंध ! अति क्षीण, अति मृदु वह गंध जैसे धीरे-धीरे फैलती जा रही है।

चमेली का इत्र ? हाँ, चमेली के सिवा तो और किसी फूल का इत्र वह व्यवहार नहीं करती थी। तब वही आयी है।

कुन्दन पर जब नशा छा गया है। उसकी नाक में इत्र की गंध समा रही है। कान में बाजे की आवाज आ रही है। रिमझिम, रिमझिम ! क्या केवल बाजा ही ? उसके साथ गाना भी क्या नहीं सुनायी पड़ रहा है ?

कुन्दन को ऐसा लगा जैसे उसे गाना भी सुनायी पड़ रहा है, कदाचित् आवाज बड़ी ही धीमी है। शायद वह आवाज हल्के पैरों से तैरती हुई जा रही है। फिर भी वह सुन सकता है।

'लगता नहीं है जी मेरा........'

यह तो वही गाना है! यही गाना तो वह बार-बार गाती थी।

कोमल और गोरी-गोरी उँगलियों से वह अपनी काली चोटी सामने खींच लिया करती। चोटी में लगे हुए सोने के फूलों को छूती-छापती यही गाना गा-गा कर वह चहलकदमी करती।

लायली !

तब क्या लायली ही आयी है ? सहसा कुन्दन के मन के सभी संदेहों का तीव्र तिरस्कार करती हुई जाने कितनी रेखायें आईने पर उभर आयीं। जैसे आईने पर कोई पानी की लकीर खींच रहा हो।

कुन्दन ने बत्ती उठा ली। उसका हाथ ठंडा और आँखें खुली हैं। लायली नहीं, लायली नहीं है।

कुन्दन ने देखा सारंगी रख कर पता नहीं किसने सिर उठाया। चेहरा उसका जाना-पहचाना है।

कपाल पर लटें झूल रही हैं। यह कपाल उसका जाना-पहचाना है। इन दो आँखों को भी वह पहचानता है। चंचल आँखें प्रसन्नता से भरी आँखें। उन आँखों की दृष्टि बहुत ही कोमल और करुण है।

कुन्दन देखता रहा। 'मैं तुम्हें पहचानता हूँ। मैंने क्या तुम्हें प्यार नहीं किया है ? प्यार किया है ! कुन्दन का प्यार अति हिंस्र, अति निर्मम। वह प्यार जिस पर पड़ता है, उसी को खाना चाहता है। तुम यह बात भूल गये। अपने अधिकार की सीमा तुम पार कर गये। लायली के मुँह पर तुम्हारी दोनों आँखें स्थिर रहतीं।'

'बजरंगी !'

कठोर गले से कुन्दन ने डाँटा। लेकिन बजरंगी आज उसकी डाँट सुन कर चौंक नहीं उठा। उसकी दृष्टि हताश और करुण है। बजरंगी ने कुन्दन की ओर देखा और फिर सिर झुका लिया।

काँपते-काँपते कुन्दन ने बत्ती रख दी। उसका शरीर थक-सा गया। थर-थर कर देह काँप रही है। वह एक बार बरामदे में गया। फिर कमरे में वापस आया। वह आईने के सामने खड़ा हो गया। आईने का शीशा ठंडा है। लायली का आईना जो है। लायली आसमान के हृदय में कितना उत्ताप था !

हाँ ! दिख ही तो रहा है। जिज्ञासा-यन्त्रणा में कातर एक मुखमंडल, कुन्दन का अपना ही चेहरा।

तब क्या सब झूठ है ?

वह आवाज ।

कुन्दन के हृदय में वह सुर बज रहा था । चमेली की वह सुगंध ! वह भी क्या उसके विभ्रान्त, दिगभ्रम हृदय की कल्पना थी ? लायली से इत्र सुवासित कुन्तल की सुवास नहीं ?

लायली, लाँयली, लायली !

कुन्दन के निराश गले की पुकार ने कुन्दन से ही व्यंग किया । आईने के सामने बेल-बूटेदार पर्दा कुन्दन ने लगा दिया । जीवन में लायली उसके लिए सहज नहीं हुई । मरने के बाद भी वह परिहास ही करेगी, इसमें आश्चर्य ही क्या ?

सिर झुकाये कुन्दन बैठा रहा । हृदय के अन्दर उसकी कितनी ही बातें, कितने ही गाने, कितनी ही कली, छोटे-छोटे बुदबुदे की तरह बनती-बिगड़ती हैं ।

शमादान की बत्ती एक बार बुझ गयी । उस समय खिदिरपुर के रास्ते पर रात फैल चुकी है । बहुत दूर मस्जिद में कोई नमाज पढ़ रहा है । शायद दिन भर समय ही नहीं मिला था । और कुन्दनलाल की फुलवारी की जूही-चमेली की झाड़ियों से भींगकर हवा झपट्टा मार-मार कर सुगन्ध फैला रही है ।

सब कुछ वैसा ही है, जो तीन वर्ष पहले था । केवल लायली आसमान के शौक की जूही-चमेली की माला अब झाड़ से नहीं झूलती रहती है । और न तो लायली के शयन-कक्ष की खिड़की से मूर्ख बजरंगी सारंगी छेड़कर अब लायली के गानों के ही सुर की भेंट भेजता है ।

'कोई बेदरदी गुले-बुलबुल को न सताना ।'

'कोई बेदरदी गुलाब का काँटा बुलबुल को तकलीफ न दे ।'

लेकिन कुन्दन क्या एक अबोध बागवान है ? उसी बाग का माली है ।

यदि ऐसा नहीं है तो फिर वह क्यों आज अकेला बैठा है ? कठोर दिल गुलाब और भोली-भाली बुलबुल दोनों ही चले गये हैं।

उसके लिये क्या केवल इस टूटी हुई महफिल में बैठे रहने भर की बात थी ?

कुन्दन बाहर निकल आया। माली से बागानबाड़ी का दरवाजा बन्द कर लेने को कहा। आज की रात ही वह घर लौट जायेगा। वापस जाकर शिरीन को बुलायेगा। पूछेगा, वह क्या जानती है ? क्यों लायली आसमान बजरंगी की मृत्यु की खबर सुनकर हँस पड़ी थी ? वह क्यों इस तरह धोखा देकर चली गयी है ? शिरीन क्या इसका जवाब जानती है ?

दो

शिरीन से कुन्दनलाल का जब परिचय हुआ, तब शिरीन की उम्र काफी हो गयी थी। शिरीन को कुन्दन ने जिस समय देखा, उस समय शिरीन का बड़ा बुरा समय था। प्रौढ़ उम्र में उसने निसार से मुहब्बत की थी।

निसार, प्यारे खाँ का भाई। प्यारे खाँ एक प्रसिद्ध सितार वादक। वाजिदअली शाह लखनऊ और कलकत्ते के जिन कलाकारों के गुणों पर मुग्ध थे, प्यारे खाँ उनमें से एक हैं।

लायली कहा करती, 'जानते हो कुन्दन, शिरीन के बारे में सोच कर मुझे दुःख होता है। शिरीन इतनी भली है, लेकिन यह कैसी बेवकूफी की, बताओ तो ?'

शिरीन हसीन नहीं है।

मैला रंग, शान्त व कोमल चेहरा। अच्छी खासी स्वस्थ गठन। शिरीन का मन है नरम। धर्म में मतिगति। गरीब और फकीर पर

दान-ध्यान करती रहती है। बिहार के मखदुमपुर और राजस्थान के अजमेर-तीर्थ करने वह हर वर्ष जाती है।

शिरीन के मुँह पर लावण्य की एक स्निग्ध चमक दृष्टिगत होती। जिससे बहुतेरे उसे खूबसूरत समझने की भूल भी कर बैठते।

शिरीन का नाम हर व्यक्ति की जीभ पर रहता। उसका कारण था शिरीन का अपरूप, कंठ-लावण्य। गाना सीखने के लिये उसने बड़े ही कष्ट उठाये। पुरुष गायक तो शिष्यत्व स्वीकार करने भर से ही गाना सीख सकते हैं। शिरीन के लिये यह सरल न था। उसे बहुत कीमत चुकानी पड़ी है। बहुत अपमान भी सहना पड़ा है।

तदन्तर एक दिन वह साधना में उत्तीर्ण हुयी। शिरीन का गाना सुनने से ऐसा लगता है, जैसे उसकी आवाज में कोई दुर्लभ माया है। वह माया थकावट दूर कर देती है, शान्त कर देती है।

शिरीन के यहाँ बहुतेरे गाना सुनने आते हैं। एक दिन निसार भी आया था।

गाना खतम हो गया, अचानक नशे के झोंक में उसने बोलना आरम्भ किया, 'ऐसी आवाज कभी नहीं सुनी। सुर जैसे टलटल, छल-छल करता है। जैसे एक बड़ी सी शान्त झील का पानी। प्यासा राही उस झील का पानी पीकर सब दुःख-तकलीफ भूल जाता है। शिरीन बाई का गाना बीच-बीच में सुन सकने से मैं भी सब दुःख-दर्द भूल सकूँगा।'

उन दिनों शिरीन ने कोई प्रश्रय नहीं दिया था।

निसार के सिर पर जैसे भूत सवार हो गया। वह वक्त-बेवक्त भी शिरीन के दरवाजे पर बैठा रहता। गाना सुनना उसे अच्छा लगता है या नहीं, नहीं कहा जा सकता। लेकिन कभी-कभी रो-धोकर आँखों के आँसुओं में दिल डुबो दिया करता। कहा करता, 'वाह, जिन्दगी में अब और कोई दुख न रहा।'

एक दिन पता चला कि शिरीन, निसार को अपने घर ले गयी है।

सुनते ही लायली उसके पास गयी। बोली, 'देखती हूँ, तुम पगली बन गयी हो। तुम्हारी इज्जत, तुम्हारे मन की शान्ति, सब कुछ वह नष्ट कर देगा। उसे तुम नहीं जानती।'

दूसरी कोई होती तो गुस्सा हो जाती, लेकिन शिरीन नहीं हो सकी।

शिरीन जमीन की ओर देखती रही। इसके बाद बोली, 'पता नहीं, क्योंकर, क्या का क्या हो गया?'

लायली बोली, 'यह तुमसे उम्र में कितना छोटा है, जानती हो?'

'जानती हूँ लायली। यही कोई सात-आठ वर्ष छोटा होगा।'

लायली ने निसार को बुलाया। बोली, 'निसार, शराब के लिये क्या अब तुम्हें पैसे नहीं जुटते? अन्त में भले आदमी के कंधे पर सवार हो गये?' शिरीन डर गयी।

सोचा, बस, मारपीट होगी अब।

लेकिन निसार ने चुपचाप लायली की बातें सुनीं। फिर बोला, 'हूँ, क्या करूँगा? चला जाऊँगा? वह जाने देगी?'

लायली बोली, 'तुम बड़े ही कम्बख्त हो। सभी के पास जाकर इसी तरह छलछलाती आँखों से बातें करते हो, सभी सोचते हैं, आह, बेचारा कितना दुखी है। मैं क्या तुम्हें नहीं पहचानती हूँ? शिरीन भला चाहती हो तो उसे भगा दो।'

निसार बोला, 'हाँ शिरीन! वही अच्छा होगा। तुम मुझे भगा ही दो।' छलछलाती आँखों से शिरीन ने एक बार लायली और एक बार निसार की ओर देखा। तत्पश्चात् बोली, 'क्या दोपहर में जाना अच्छा है?'

लायली उस समय हँसी।

तीव्र विद्रूप एवं गम्भीर करुणा एक ही साथ उसकी हँसी में ध्वनित हुई। उसने कहा, 'शिरीन, उसे जाने देने के लायक ठीक समय तुम्हें और नहीं मिलेगा। सभी समय तुम्हें असमय जँचेगा। मैं जाती हूँ।

फिर भी एक बात कहे जाती हूँ, उसे ज्यादा सिर न चढ़ाना। उसके हाथों में अधिक रुपये भी न देना। उसके भाई, माँ, कोई उसे बरदाश्त न कर सका। तुम क्या कर सकोगी।'

भरे गले से शिरीन बोली, 'मैं उसे प्यार करती हूँ, लायली।'

'उसके बड़े भाई, उसकी माँ सभी उसे प्यार करते थे शिरीन! प्यार उसने बहुत ज्यादा पाया है। आसानी से ही पाया है। इसलिये वह प्यार की क़ीमत नहीं जानता। जो उसे प्यार करते हैं, बार-बार उन्हें ही वह दुःख पहुँचाता है।

लायली चली आयी। कुन्दन से बोली, 'शिरीन को देखकर बड़ा दुख होता है। एक-एक कर वह सब कुछ खो देगी। सम्मान, शान्ति सब कुछ।'

शिरीन ने निसार को जरा-जरा पहचाना है।

इस उम्र में मुहब्बत की आग ने शिरीन को जरा-जरा जलाया है!

मन का सुख गया, शान्ति गयी। इतने दिनों बाद रूप-सज्जा का जादू भी उसे सीखना पड़ा। सफेद केश किस तरह काले बनाए जाते हैं, आँखों में कौन-सा सुर्मा लगाने से सुन्दर दिखता है, यह सब भी सीखना पड़ा।

बाद में डर-डर कर सजती-सँवरती। आँख-मुँह पर एक डरा-डरा भाव। उसमें एक महान् आत्मसह शान्ति थी। वह कहाँ चली गयी?

तदनन्तर उसका शृङ्गार-प्रसाधन देख कर निसार ने कितना निर्मम व्यंग्य किया था!

शिरीन समझ गयी है, लायली का प्रत्येक शब्द सत्य है। सचमुच निसार हृदय-हीन है। नारी-हृदय के साथ वह स्वतन्त्रतापूर्वक खेला करता है।

जब जिस स्त्री से उसकी घनिष्ठता होती है, उसके साथ ही हमेशा

रहता है। उसका ही पैसा लेकर जुआ खेलता है। उसके पैसे से ही शराब पीता है। इसके बाद एक दिन अलग हो जाता है।

अलग हो जाता है, चला जाता है। जिसे छोड़ कर चला जाता है, उसे फिर याद भी नहीं करता।

लेकिन निसार सिर्फ अपना ही हाथ नहीं भरता।

बदले में वह भी देता है, देना चाहता है।

निसार कवि है, कविता भी लिखता है।

१८६०-६२ के कलकत्ता में उर्दू शायरी व गज़ल के समझने वाले ही कहाँ थे ? लेकिन वाजिदअली शाह के मटियाबुर्ज के महल में बीच-बीच में कई शायर दिखायी पड़ते थे।

बीच-बीच में मुशायरा भी होता। आशिक बुलबुल और मासूम गुलाब, सिंहासन-च्युत नवाब के दुःख, नवाब के विरह में लखनऊ नगरी की विरह वेदना, भगवद् प्रेम आदि विषयों को लेकर शायर शेर बनाते।

लेकिन इससे पेट नहीं भरता।

निसार भी कवि है। वह धीरे-धीरे कुन्दन के निकट आया। कुंदन बोला, 'तुम्हें लज्जा नहीं आती ? छिः छिः, इससे अच्छा तुम कोई काम क्यों नहीं करते ?'

निसार ने जवाब दिया, 'काम करेंगे मूर्ख। मैं काम क्या करूँगा ? जानते हो, मैं काम करता हूँ, सुनकर शिरीन को बहुत दुख होगा।'

नशे के झोंक में बहुत सारी बातें निसार कह गया।

सामने बैठकर निसार बोला, 'मैं बड़ा ही बुरा आदमी हूँ। चिकनी चुपड़ी बातें कर मैं शिरीन का मन भुला देता हूँ।'

ये चिकनी-चुपड़ी बातें, सुन्दर शायरी, ने ही क्या शिरीन को युवा बनाकर रखा है ?

लायली ने कहा, 'शिरीन मूर्ख है, शिरीन बेवकूफ है।'

निसार बोला, 'ऐसा ही होगा। नहीं तो मुझ जैसे नकली शीशे

को देखकर वह क्यों अपने को भूल बैठती, कहो तो ?'

कुन्दन ने निसार और लायली की बातें मन देकर नहीं सुनीं। वह तकिया का सहारा लेकर बैठा रहा है और मन ही मन व्यवसाय की बातें सोचता रहा।

क्या पता, मसाले की नाव बाबूघाट पर खलास की गई या नहीं। चचेरा भाई त्रिनिदाद गया है, कब वापस आयेगा, पता नहीं चलता। कुन्दन की बड़ी इच्छा है कि वह लौट आये। बड़ा बाजार की गद्दी पर इस बार भतीजे को ही बैठा देगा।

व्यवसाय की बातें सोचते-सोचते कुंदन ने निसार को बीच-बीच में देखा।

निसार उस समय उठ खड़ा हुआ। बोला, 'मैं बड़ा ही शैतान हूँ। मुझे भगा देना। जूते मारकर बाहर निकाल देना।'

जाते समय उसने कुंदन से रुपये माँगे। उसी समय लायली बोली, 'उसे फिर रुपये मत देना। उसे घुसने भी मत देना। सचमुच में घुसने न देना।'

कुंदन ने हँसकर कहा, 'तुम जो उसे प्यार करती हो, लायली ?'

लायली ने जवाब दिया, 'यह बात सच है। प्यारे साहब को देखा है न! उन्हें बड़ा भाई कहा करती हूँ। वह लखनऊ में रहते हैं। जब कभी आते हैं, उससे नहीं मिलते। वह उसका सौतेला भाई है। उसे आदमी बनाने की कितनी कोशिश की है। उसे बड़ा प्यार करते हैं। अपने लड़के से भी ज्यादा। निसार की माँ को मैं दूध-अम्मा कहा करती हूँ। मुझे लड़कपन में दूध पिलाया है। बड़े भाई को वह कितना बकती झकती हैं। कहती हैं—तुम उसे बड़ा ही प्यार किया करते हो। प्यार न किया करो।—अन्त में अपनी माँ के गहने लेकर ही गाड़ी से उतना भागा। उसी दिन से बड़े भाई ने उससे सब संबंध तोड़ लिये। बोले—वह जिस दिन आदमी बनेगा, उसी दिन उसे पास बुलाऊँगा। मैं उसका हाड़-हाड़ पहचानती हूँ, कुंदन।'

इसके बाद लायली बोली, 'मैं तो उसे पहचानती हूँ! लेकिन तुम उसे बढ़ावा क्यों देते हो?'

'यह तुम कहती हो?' कुंदन का गला भारी और उदास हो उठा।

'क्या जानूँ? नहीं समझती। तुम हिसाबी आदमी हो, व्यवसायी आदमी हो। तुम उसे जब यों ही रुपये दिया करते हो तो मुझे जैसे हैरत-सी होती है। तुम क्या मुझसे मुहब्बत करते हो?'

लायली के गले व आँखों में प्रगाढ़ कौतुहल था।

कुंदन लायली की तरफ देखता रहा। अपना दिल खोल कर लायली को दिखाने की उसे इच्छा होती है। प्रेम करना वह जानता नहीं। प्रेम उसे मिला भी नहीं। कुंदन के समस्त जीवन में एक ही आदमी ने कुंदन को प्यार किया है। निःस्वार्थ भाव से। और सब कुछ उसे रुपये देकर ही खरीदना पड़ा है।

लायली को उसने प्यार किया है। लेकिन यह बताने में उसे डर लगता है। यदि लायली कह बैठे कि जिस दिन मुझे लाये थे, उसी दिन मैंने क्या जबान दी थी, याद करके देखो, कुंदन, उसी दिन बोली थी, मुहब्बत मैं नहीं कर सकूँगी। लेकिन तुम मुझे इतना धन देते हो, मैं तुम्हारे साथ बँधी रहूँगी। और किसी के पास नहीं जाऊँगी। जितने दिनों तक मेरी कीमत दे सकोगे, उतने दिनों तक मैं तुम्हारी ही बनी रहूँगी।

इसलिये उसे जवाब देने के पहले कुंदन ने थोड़ा सोचा।

सोचकर बोला, 'तुम्हें खुश करने के लिए कितना ही तो किया करता हूँ। क्या हुआ, उसे भी कुछ रुपये दे दिये।'

इसी समय कुंदन शिरीन को पहली बार देखता है। देखकर उसे बुरा लगता है। क्यों बुरा लगता है, वह नहीं जानता। बाद में सोचकर देखा, शिरीन की उम्र ढल गयी है। लेकिन उम्र का शान्त एवं शीतल भाव नहीं। जाने कैसा उखड़ा-उखड़ा स्वभाव। देखने में अच्छा नहीं लगता। मुँह फेर लेने की इच्छा होती है। कुन्दन स्त्रियों में उखड़ा-

उखड़ा भाव देख नहीं सकता। अपने घर के अन्तःपुर में वह कम ही जाता है। खास-खास दिन वह ताई, चाची या दादी के पास जाकर खाना खाआता है। फिर भी रात के सिवा उसे समय नहीं मिलता।

कुन्दन दिन में कुछ भी नहीं खाता। सिर्फ एक बार ही खाता है और वह भी रात में।

फिर भी इसके लिये बहुत भारी आयोजन होता है। बहुत से आदमी तरह-तरह के स्वादिष्ट भोजन बनाने में व्यस्त रहते हैं।

बड़ी रात बीते कुंदन का नौकर घंटा बजाता है। रसोइया खाना परोस कर खड़ा रहता है। दादी आकर चौकी पर बैठती है। चाँदी की थाल के दोनों तरफ मोमबत्ती जलती रहती है। एक बूढ़ी दासी धीरे-धीरे हवा करती रहती है। मोमबत्ती की रोशनी नहीं बुझती, लेकिन कुंदन के थाल में हवा लगती है। कुंदन गरम खाना नहीं खा सकता।

जिस दिन वह अन्तःपुर में जाता है, उस दिन सुबह से ही दासियाँ घर-द्वार, दीवाल, दरवाजे और खिड़कियाँ घिस-घिस कर साफ सुथरा रखती हैं। स्त्रियाँ केश बाँधकर साफ कपड़े पहन, तटस्थ होकर घूमती फिरती हैं। यहाँ तक कि बच्चे भी अच्छी पोशाक पहिने दिखायी पड़ते हैं।

शिरीन को देखकर कुंदन भौंहें सिकोड़ कर मुँह फेर लेता है। लायली से कहता है, 'यही तुम्हारी शिरीन, मुझे जरा भी अच्छी नहीं लगती।

लायली पेट के बल लेटी थी। औंधी होकर उसने अपने हाथ फैला दिये थे। एक दासी उसके हाथ की उँगलियाँ और नाखूनों को मेंहदी से रंग रही थी।

कुंदन की बातें सुन कर लायली खूब हँसी। बोली, 'अभी उसे देखने से अच्छी न लगेगी, कुंदन। अभी उसका बड़ा ही बुरा समय है। निसार से मुहब्बत करके वह बड़ी मुश्किल में फँस गयी है। अभी वह चोर-बालू में फँस रही है। जिस चोर-बालू में फँस रही है, उसके

कारण जल्दी ही सर्वनाश दिखाई पड़ेगा, कुंदन। शिरीन को देख कर से मुझे भी जैसे डर लगता है।

तीन

शिरीन ने भी निसार को पहचान लिया है।

लायली की भविष्यवाणी सब सच हुई है। शिरीन के मन में शान्ति नहीं। वह अस्थिर, अशान्त है। मुहब्बत की भूख ने उसे खा लिया है। यह देखकर निसार ने व्यंग्य किया है। किसी-किसी दिन निसार सारा दिन और सारी रात बाहर बिता आता है। शिरीन बोली, 'जानते हो, मैंने खाया नहीं। तुम्हारे लिये बैठी थी।'

'अच्छा ही किया। बीच-बीच में उपवास रखना तो इस उम्र में अच्छा ही है।'

शिरीन ने कहा, 'तुम इतने जालिम हो? मुझे उम्र की बात सुना कर चिढ़ाते हो? जाओ, जाओ, यहाँ से निकल जाओ।'

निसार फर्श पर लेट गया। बोला, 'गुस्साओ मत। गुस्साने से आँखों के किनारे रेखाएँ उभर आती हैं, होंठ सिकुड़ जाते हैं।'

इसके बाद बोला, 'कुछ खाने के लिये तो दो। बड़ी भूख लगी है।'

शिरीन बोली, 'जाओ न, जहाँ थे, वहीं जाओ। आये ही क्यों?'

'वाह, कल लायली के पास था, वह मुझे खरी-खोटी सुना रही थी। जली रोटी और अचार देकर बोली थी—इससे अच्छा खाना मेरे लिये जुटाना उचित नहीं।'

'क्यों, लायली के पास क्यों?

'अच्छा लगता है, शिरीन। हजार हो पर गुस्साने, बकने, मुँह बिचकाने से भी सुन्दर तो लगती ही है।'

शिरीन ने लंबी साँस छोड़ी। दासी से बोली, 'जाओ, खाना यहाँ ले आओ।'

'मालकिन, आपका खाना भी लाऊँगी ?'

'बिना नहाये, फकीर-भिखारी को बिना खाना दिये मैं कब खाती हूँ ?'

निसार हँसा। बोला, 'अच्छा, बहुत अच्छा। इस उम्र में धर्म-कर्म करना अच्छा है। सच में शिरीन, एक बात कहूँ ?'

'कहो।'

'तुम बड़ी भोली हो। तुम्हारी बराबरी नहीं। तुम्हें छोड़ कर जाने की मेरी इच्छा नहीं होती। सिर्फ तुम में एक दोष है।'

'सर्फ़ एक ?'

'हाँ शिरीन। तुम मुझे बहुत प्यार करती हो, मुझसे बहुत आशाएँ भी करती हो। जानती हो, मेरे मन में क्या होता है ?

'क्या ?'

'लगता है, मैं जो चाहता हूँ, वह एक दिन अचानक ही पाऊँगा।'

'क्या निसार ?'

'अचानक एक दिन देखूँगा कि तुम अब मुझे अन्धे की तरह प्यार नहीं करती हो। हरामजादा, शैतान कहकर गालियाँ देती हो। जरूरत पड़ने पर दो धक्के भी। यदि ऐसा होता तो जिन्दगी कितनी सुखमय होती। तुम, तुम जैसी रहतीं और मैं अपने जैसा रहता।'

'समझी।'

'खाक समझी हो। मुहब्बत बड़ी ही सर्वनाशी चीज है। यही देखो न, तुम्हरा गाना बंद पड़ा है, मेरे कारण सब बर्बाद कर रही हो। अरे, मैं तो एक जानवर हूँ। मैं क्या इन्सान हूँ ?'

'तुम लायली के घर क्यों जाते हो ?'

'यही, खाने-पीने को देती है, कुन्दन शराब के लिये पैसा देता है।

क्यों लायली की बात क्यों ?'

शिरीन ने जवाब नहीं दिया। निसार को खाना दिया, उसकी सेवा की। बाद में फिर एक बार निसार और वह पास-पास बैठे। सुख-दुःख की बातें कीं। शिरीन बोली, 'तुम लायली के पास जाते हो, कुन्दन नाराज़ नहीं होता क्या ?'

कह देने के बाद ही जैसे उसने स्वयं को बड़ा ही छोटा समझा। निसार जरा चुप रहा। इसके बाद बोला, 'लायली तुम्हारी जाने कितनी प्रशंसा करती है।'

शिरीन एकान्त में रोयी। निसार बोला, 'मैंने ही तुम्हारे मन में यह सब नीचता भर दी है।'

उस समय शिरीन को सब कुछ असह्य-सा लगा। आँखों के आँसू पोंछ, भौंहें तानकर वह बोली, 'खुद को ही सर्वशक्तिमान समझते हो, क्यों ? तुमने ही मेरे मन में पाप भरा है। नहीं निसार, उतनी शक्ति तुममें कहाँ ! मुझमें ही यह दोष थे, आज मौका मिलने पर सभी दोषों ने फिर सर उठाया है।'

'आहा, यह सही बात नहीं है। फिर भी मुझसे जान-पहचान होने से तुम्हारी हानि ही हुई है, यह मानती हो तो ?

'नहीं जानती ?'

'एक दिन जान जाओगी, मेरे चले जाने पर जान जाओगी।'

'हाँ, तुम कब्र में जाओ, इसके बाद विचार करूँगी। इससे पहले नहीं।'

'लेकिन एक बात सुन लो। लायली से तुम ईर्षा मत करो। लायली के बनिस्बत अल्लाह तुम पर बड़े मेहरबान हैं।'

'इसके मतलब ?'

'उसे खुदा ने सिर्फ रूप ही दिया है। तुम्हें दिल भी दिया है। दया, माया, ममता, कितने ही जेवर जो दिये हैं, उन्हें क्या नहीं देख पाती हो, शिरीन ?'

'तुम देख पाते हो?'

'वह तो देख ही पाता हूँ। देखकर और भी तकलीफ पाता हूँ। मुझ जैसे अभागे के कारण तुम्हारा सब बर्बाद हो गया।'

'बर्बाद?'

'वाह, बर्बाद नहीं हो गया? तुम्हारे दूसरे सब गुणों की बात कौन याद रखता है? शिरीन! सभी कहते हैं, मुहब्बत के नशे में शिरीन पगली हो गयी है।'

'कहें।'

कुछ दिन तो बड़ी सुख-शान्ति से कटे।

फिर एक दिन निसार गायब हो गया। उसका कहीं पता नहीं लग सका। शिरीन के नौकर ने टिरेटी बाजार, जहाज-घाट, जान बाजार, सब जगह घूम-घूम कर निसार को खोजा।

उसकी आँखों से आँसू भी गिरे। दासी से बोली, 'आईना लाओ तो।'

आईना सामने रखकर देखा कि गाल पर चित्ती के दाग़, कनपटी के इर्द-गिर्द पके बाल। स्वयं को उपयाचिका के रूप में सजाते-सँवारते अपने आप से ही उसे घृणा उपजी। इसके बाद अच्छा कपड़ा पहन, केश बाँध कर, मुँह पर सफेदी पोत कर, वह गाड़ी में जा बैठी।

मानिकतल्ला के पास, पीर साहब के दरबार के सामने गाड़ी रुकवा कर उसने प्रार्थना की। चादर पर रुपये चढ़ाए। अल्लाह को पुकारा, पीर से दुआ माँगी। बोली, 'मेरे मन से यह कमजोरी दूर कर दो। तुम्हारे दरगाह पर मैं असली ज़री की चादर चढ़ाऊँगी, चाँदी का शमादान दूँगी। हे मालिक, मुझ पर दया करो। इस मुहब्बत ने मुझे नीचे खींचकर धूल में लपेट दिया है।'

इसके बाद उसकी गाड़ी लायली के घर गई।

लायली और निसार, निसार और लायली! किसे पता कि वे क्या

कर रहे हैं। शिरीन के दिमाग में सन्देह सर पटकता है। शिरीन ने सन्देह के लिये अपने आप पर घृणा की है।

लायली ने हर बार उसे आश्चर्यचकित किया है।

कभी शिरीन ने देखा है, लायली अपने शीशे के सामने बैठी है। दासी उसके जूड़े में फूल-माला पहना रही है। फूल की माला, फूल की बालियाँ, हाथों में बेले की कलियों की माला। कुन्दन ने कभी जरा सी आँखें खोल कर देखा है, नहीं तो आँखें बंद किये ही बैठा रहा है।

कभी देखा है लायली केश खोले, दोनों घुटनों में मुँह ढँके, बैठी है। दासी हवा कर उसका केश सुखा रही है।

कभी देखा है, वह हीरे-मुक्ते का हार फैलाये बैठी है। कभी देखा है, वह नंगे पैर कोमल घास पर चहलकदमी कर रही है।

शिरीन को देखते ही लायली खुश हुई।

बोली, 'अहा, कितना अच्छा लगता है। आओ, दिल खोल कर थोड़ी बातें करें।'

बेबस निगाहों से उसकी ओर शिरीन ने देखा। उस समय लायली ने लंबी साँस खींची। बोली, 'वह कम्बख्त, नीचे जो सो रहा है। जानती हूँ, तुम उसका पता लगाने ही आयी हो। सिर्फ निसार और निसार। क्यों, मेरे पास आने की तुम्हें इच्छा नहीं होती? फालतू बातें मत करो। जानती हूँ, तुम्हारी इच्छा ही नहीं होती। होगी भी भला क्यों?'

नीचे उतरते-उतरते वह बोली, 'जानती हो, तुम्हारे इस बढ़ते कदम को एक दिन खतम कर देने की इच्छा होती है। इच्छा होती है कि निसार को जबर्दस्ती लखनऊ भेज दूँ।'

'नहीं लायली, नहीं, ऐसा मत कहो।'

'ऐसा करने से ही शायद तुम्हारी भलाई होगी। खुद को बर्बाद कर रही हो, उसको पनाह देकर उसे भी बर्बाद कर रही हो।'

नीचे उतर कर शिरीन ने देखा, निसार सो रहा था। सुन्दर

बिछावन, एक आदमी पंखा खींच रहा था और एक आदमी पाँव दबा रहा था। लायली बाहर निकल आयी। कहा, 'देखा न, तुम्हारे सात राजों की सम्पत्ति इस एक मणि को मैंने कष्ट नहीं होने दिया है।'

शिरीन सर पर हाथ ठोंककर बोली, 'कहो तो मेरा कैसा भाग्य है ?'

शिरीन ने बड़ा ही दुःख दिखाया। बोली, 'मैंने बहुत बड़ा पाप किया है, मैं पापी हूँ।'

लायली के दोनों गुलाबी ओंठ विद्रूप भरी हँसी में टेढ़े हो गये। तीखे गले से हँसकर वह बोली, 'अधिक उम्र में मुहब्बत की क्या ज्वाला होती है, देखो। दिन भर चिड़िया दाना चुगती है, शाम को घोंसले में आकर पंख समेट कर बैठती है। जवानी मुहब्बत का समय है। जवानी बीत जाने पर धीरे-धीरे मन शान्त होना ही जरूरी है। जितना प्यार पाया है उतना लेकर ही खुश रहना अच्छा है। तब फिर बहुत से आदमियों का शोरगुल क्यों ? जिसे पाया है, उसके साथ जिन्दगी बिताने के लिये खुद को तैयार करो।'

'उम्र के बारे में कुछ मत कहो लायली। उम्र तुम्हारी भी नहीं रहेगी।'

'न रहे, न सही। लेकिन तुम्हें झूठमूठ में कड़ी बातें कह सुनायीं।'

लायली का गला उदास हो गया। वह धीरे-धीरे बोलती है, 'हम लोग एक अभागी जाति के हैं, शिरीन। जवानी और गुण रहने पर ही हम लोगों की क़द्र होती है। और फिर तो बदनसीबी ही बदनसीबी ?'

इसके बाद वह हँस पड़ी। बोली, 'निसार को इतना बढ़ावा मत दो। अपना तो सब कुछ बर्बाद कर ही चुकी हो। उस दिन आलिशाह, शायद चिन्ता करते थे।'

'क्या कहते थे ?'

'कहते थे, शिरीन गोंइठे में घी सुखा रही है।'

शिरीन को सुनकर दुःख हुआ। बोली, 'आलिशाह को क्यों कर

पता चला ?'

'हो सकता है, मैंने ही कहा हो।' लायली और भी हँसी। हँस-हँस कर कहती गई, 'निसार पर मुझे बड़ा गुस्सा है। लड़कपन से ही देखा है न! कीड़ा लगा हुआ एक अनार है वह।'

निसार की नींद टूट गई। वह भोले-भाले बच्चे की तरह बाल सँवार कर जूता पहने बैठा रहता है। शिरीन पर नजर पड़ते ही वह मुँह फेर लेता है। लायली कहती है, 'जाओ, घर जाओ। सुनो निसार, जिस दिन सुनूँगी कि तुमने शिरीन बहन के साथ शैतानी की है, उसी दिन तुम्हें मजा चखाऊँगी।'

बड़बड़ा कर निसार बोला, 'ओह, बड़ा साहस है! क्या करोगी तुम ?'

'देखोगे ?'

'बड़ी हिम्मत है, तुममें।'

'शिरीन बड़ी भोली औरत है। उस जैसी औरत तुम अब पाओगे कहाँ ? और इल्म है ही क्या ? यही कूड़ा-करकट शेर लिखते हो न! वह तो मैं भी कर सकती हूँ।'

'लायली, चुप रहो!'

'ओ, आँखें दिखाते हो ? रहो, इस बार कुंदन के मसाले वाले जहाज में तुम्हें हाथ-पाँव बाँधकर चढ़वा दूँगी। अफ्रीका में छोड़ आयेगा।'

शिरीन ने अवाक होकर सोचा। लायली को जाने कब क्या ख्याल आता है, कहना कठिन है। वह बोली, 'रहने भी दो, तुम दोनों बाद में झगड़ना। हम लोग अभी चलें।'

बाहर निकलते-निकलते पलट कर शिरीन बोली, 'सारंगी कौन बजा रहा है ?'

रोज ही उसने एक ही दृश्य देखा है।

लायली की खिड़की के नीचे एक पक्का चबूतरा है। बड़े-बड़े

गाछों की छाया, जूही और चमेली का लता-वितान।

चबूतरे पर बैठकर बजरंगी सिर झुकाये सारंगी बजा रहा है। कपाल पर केश झूल रहे हैं। शरीर पर सस्ती छींट की मिर्जई और धोती पहने हुए।

घास पर तितली उड़ रही है, मोर चर रहा है। किसी तरफ भी बजरंगी का ध्यान नहीं।

किसी तरफ नहीं देखना चाहिये। इसी तरह डूब जाना पड़ता है। बजरंगी आँखें क्यों नहीं उठाता है? क्यों नहीं ताकता है?

शिरीन ने निसार के होंठों पर कौतूहल की हँसी देखी है। निसार फूल की पंखुड़ियाँ नोच रहा है।

शिरीन अवाक होकर बोली, 'लगता नहीं है जी मेरा—बजा रहा है न? क्यों, यह गाना, वह क्यों बजाता है? यह गाना क्या तुम गाती हो लायली?'

लायली ने उसके सवाल का जवाब नहीं दिया, बोली, 'मजा देखोगी?'

वह घास पर उतर आयी। बजरंगी के सामने जा खड़ी हुई। पुकारा, 'बजरंगी!'

बजरंगी ने सारंगी छोड़ दी। आँखें उठा कर लायली का मुँह देखने के बाद वह दोनों आँखें फिर नीची न कर सका।

इसके बाद उसे लगा जैसे उसके सामने लायली खड़ी है। हठात् उसकी दोनों आँखें चमक उठती हैं। उसे असाधारण-सा लगा। वह जैसे इस पृथ्वी का आदमी ही न हो।

इसके बाद ही उसकी आँखें जैसे मंद पड़ गयी हों। उसने निगाहें नीचे कर ली हैं।

लायली बोली, 'बजरंगी, शिरीन बाई जानना चाहती हैं कि रोज तुम यह गाना क्यों बजाते हो?'

'रोज ही बजाते हो, शायद?'

'हाँ, रोज ही बजाता है, शिरीन। सिर्फ यही गाना बजाता है। क्यों बताओ तो ?'

'मुझे माफ करेंगी।'

'माफ क्यों करूँगी ? बजरंगी, इससे अच्छा तुम सच बात ही क्यों नहीं बता देते ? क्यों, इस गाने से प्यार हो गया है ?'

बजरंगी ने सिर झुका लिया। लायली बोली, 'जानती हो शिरीन, जानती हो क्या हुआ था ? एक दिन कुंदन यहाँ नहीं था। उस दिन, दिन भर में कुछ अनमनी-सी थी। ऐसा ही था न बजरंगी ?'

'मैं नहीं जानता।'

'नहीं जानते ?' हठात् लायली जोर से बिगड़ उठी। मुँह लालकर तीखी आवाज़ में बोली, 'मैं बहुत बार कह चुकी हूँ, बजरंगी, तुम्हें कोई बात याद नहीं रहती ? क्यों याद नहीं रहती ? क्यों भूल जाते हो ?'

परेशान होकर शिरीन बोली, 'मैं जाऊँ।'

'नहीं, नहीं, सुना ही जाये न !' निसार इतनी देर बाद बोला। लायली शिरीन का हाथ जोर से पकड़े हुए थी। ठंडा हाथ, पसीने से भींगा हुआ। लायली की छाती पर का हार उठता गिरता क्यों है ? निसार ही भला उस तरह क्यों हँसता है ? शिरीन नहीं समझ पाती।

लायली कहती है, 'उस दिन मेरा मन नहीं लगता था। इसलिये सुबह ही मैं बगीचे में चली आयी। मुर्गे की लड़ाई देखने लगी। बजरंगी मेरे साथ था। तुम मुर्गे की लड़ाई नहीं देख सकती हो, शिरीन तुम्हें तकलीफ होती है। मुझे तकलीफ नहीं होती। कितने सुन्दर दोनों मुर्गे थे। कुंदन उन्हें बैरकपुर के चिड़िया-मोड़ से लाया था। बात यों थी कि एक दिन हम और कुंदन लड़ाई देखेंगे। यही न बजरंगी ?'

'होगी ?'

'शिरीन देखो, देखो, वह किस तरह मेरी बातों का जवाब देता है, देखो। लेकिन मैं उसे कुछ न कहूँगी। कुंदन से [illegible]पऊँगी।'

'कहानी चलने दो, लायली।' निसार ने कहा।

'कहती हूँ। जानती हो शिरीन, मैं गाय के घी में काबुली मटर भिगोकर रखा करती। खा-खाकर दोनों मुर्गे कितने तेज हो गये थे। असल में उस समय उनके खेलने की उम्र नहीं हुई थी। और भी देर करना उचित था। लेकिन सुबह उठते ही देखती हूँ, बदली का दिन। मन जाने कैसा हो गया। इसलिये दोनों मुर्गों को बाहर निकाला गया। मैं नहीं, वह। बजरंगी ही उन्हें लाया। बजरंगी ही उन्हें खाना देता, देख-भाल करता था। वही मेरे हुक्म से मुर्गों को लाया। मेरे नजदीक। मैंने उन दोनों के पैरों में इस्पात की छोटी-छोटी छुरियाँ बाँध दीं।'

'बस, अब चुप रहो।' निसार ने कहा। निसार का चेहरा सफेद हो गया। लेकिन लायली उसकी बात पर ध्यान नहीं देती। उसका मुँह अभी बर्फ की तरह सफेद दिखता है। वह बोली, 'उस दिन कुंदन नहीं था। मेरे साथ वही था।'

बजरंगी का सिर झुका हुआ। कपाल पर पसीने की बूँदें। लायली कह चली है, 'दोनों मुर्गे लड़ते-लड़ते थक गये। तब, तब मैंने क्या किया जानती हो? उन दोनों को नशे में मात कर दूँगी, यही सोच कर शराब की बोतल में गेहूँ भिगोकर रक्खा था। वही गेहूँ खाने को दिया था। बताने पर विश्वास नहीं करेगी शिरीन, दोनों मुर्गे पंख फैला-फैला कर झपटने लगे। गले से, पेट से खून निकल रहा है फिर भी वे लड़ना चाहते हैं। मैं दोनों को पास लाती हूँ। मैं उन दोनों की आँखों में हूँ, दोनों आँखें जैसे लाल मणि का टुकड़ा हों। टकटक लाल दिख रही हैं। देख कर छोड़ दिया।....इसके बाद....अन्त तक वे लड़े। दोनों ही मुर्गे सफेद थे। धीरे-धीरे लाल खून झर-झर कर उनके पँख जैसे लाल हो गये।'

वह बजरंगी की तरफ देखती है। कहती है, 'तब मैंने क्या किया बजरंगी?'

'खुद ही बोलती है, 'मैंने रूमाल फेंक दिया। बोली, उन्हें ढँक दो। छिः, छिः तुम रो रहे हो ? आँखों से आँसू पोंछ डालो, जाओ।'

निसार लायली की ओर देखता है और हँसता है। क्रुद्ध हँसी, मलिन हँसी। कहा, 'लायली हम जायें ? बाकी कहानी तुम बजरंगी को ही सुनाओ। वह तुम लोगों का नौकर है। हम तो नौकर नहीं हैं।'

लायली बोली, 'तुम गुस्साते क्यों हो ? उस दिन बजरंगी को बड़ी तकलीफ हुई। दिन भर खाया नहीं। शाम को मैंने उसे बुलाया। शाम को आकाश बादलों से भरा था, निसार ! कौन कहेगा पूर्णिमा के दिन आकाश उस तरह बादलों से भरा होता है ! बजरंगी नहीं आया। ऊपर नजर दौड़ा कर देखती हूँ, आकाश में बाज उड़ते हैं, चीलें उड़ती हैं। पता नहीं मेरे मन में क्या आया, मैंने उसके दोनों पालतू कबूतरों को उड़ा दिया। बहुत कीमती कबूतर। कुन्दन उन्हें लाया था। जरा उड़ते न उड़ते बाज झपटकर दोनों कबूतर ले गया। आहा, बच्चे कबूतर !'

शिरीन गंभीर होकर बोली, 'लायली तुमने दो बार पाप किया है। निरीह प्राणियों को मार देना क्या अच्छा है ? कल ही तुम पीर की दरगाह में शिरनी भिजवा देना।'

लायली एक बार इसकी ओर और एक बार उसकी ओर ताकती है। बोली, 'उसी रात बादल छँट गया। चाँद की चाँदनी चारों ओर तैर गई। उस समय छत पर जा बैठी। दासी से कहा, बजरंगी को बुला लाओ। कहना, नहीं आने से मालिक से कहकर उसे सजा दूँगी।'

हठात् बजरंगी ताकने लगता है। बोला, 'कह क्यों न दिया ?'

'कहूँगी, एक दिन जरूर कहूँगी। लेकिन् उस रात की बात अभी मुझे करने दो, बजरंगी। शिरीन, मैंने गाया था—लगता नहीं है जी मेरा। वह सारंगी बजाता था।'

लायली फिर हँस पड़ी। बोली, 'एक ही रात बस वह गाना सुनता है। उसके बाद से केवल यही गज़ल बजाता है। शायद वह सोचता

है कि मैं उसे फिर बुलाऊँगी । एक ही गलीचे पर बैठने दूँगी । वह सोचता है, हम दोनों बैठे रहेंगे और फिर एक बार आकाश में चाँद, फीका हो जायेगा । मस्जिद में भोर की अजान सुन पड़ेगी । इसलिये यह ग़जल वह बजाता है । लेकिन यह भी क्या कभी होता है ? कुंदन कितनी ही बार तो नहीं रहता है । फिर भी मैं उसे नहीं बुलाती ।'

बजरंगी उठ खड़ा हुआ । सारंगी लेकर चला गया । लायली कहती गई, 'उसका कमरा सजाने के लिये कितनी ही चीजें कुन्दन ने भेज दी हैं । जाकर देखो, सब सामान एक कोने में पड़ा हुआ है ।'

'भगा तो सकती हो लायली ?' निसार बोला ।

'भगा देने की इच्छा तो होती ही है ।'

'फिर भगातीं क्यों नहीं ?'

'कुन्दन उसे बड़ा प्यार करता है । कुन्दन उसका बड़ा ऋणी है । कभी सुना है ? नौकर के लिये भी मालिक नौकर रखता है ? नौकर है, सजा कमरा है उसके लिए । कितने ही जूते-कमीज भी कुन्दन ने खरीद दिए हैं ।'

'आह, फिर क्यों टूटे-फूटे कमरे में रहता है, जी ?' शिरीन ने पूछा । यही प्रश्न किया ।

शिरीन और निसार गाड़ी पर चढ़ गये ।

उन्हें बिदा करने के लिये आकर, लायली खड़ी रही । बोली, 'बहुत अच्छा लगा । फिर आओ ।'

शिरीन बोली, लायली को मैं समझ नहीं सकी हूँ ।'

निसार बोला, 'समझने की जरूरत भी नहीं । वह इन्सान नहीं, पत्थर है । तुम उससे बहुत अच्छी हो । मेरी क्या इच्छा होती है, जानती हो....?'

'क्या ?'

'इस बजरंगी को वहाँ से ले आऊँ ।'

'ले जा सकोगे ?'

'नहीं, नहीं। कुन्दन को नहीं पहचानती हो? इसके अलावें, उसे रक्खूँगा भी कहाँ? खुद ही तो भिखारी हूँ। तुम्हारी दया पर बचा हुआ हूँ।'

'ऐसी बातें मत कहो।'

कोशिश करने पर और सब कुछ किया जाता है, सिर्फ प्यार नहीं किया जाता।

निसार दिन-दिन थोड़ी-थोड़ी उच्छृङ्खलता बढ़ाता रहा। जहाज-घाट जाता। चीनी और हब्शी खलासियों के साथ जुआ खेलता, शराब पीता। अंत में उसे तरह-तरह के रोग हो गए। भूख नहीं लगती, गले में दर्द होता है और कय हुआ करती है।

अन्त में पता चला कि गले में घाव हो गया है। कविराज ने बताया, भयानक रोग। हकीम ने कहा, इलाज नहीं।

उस समय निसार को जैसे शान्ति मिली। शिरीन से बोला, 'अब मैं लखनऊ जाऊँगा। बड़े भाई के पास, माँ के पास।'

उस समय शिरीन के मन में ममता उमड़ पड़ी, खेद हुआ। बोली, 'रोज दान ध्यान करो, धर्म करो, पुण्य होगा।'

निसार ने सारी बात हँसकर उड़ा दी। उसके मन में एक आश्चर्य-जनक उत्तेजना उत्पन्न हुई।

इतने दिनों बाद जैसे उसने जीवन के प्रति आग्रह का अनुभव किया है। उसके शरीर में एक ऐसा रोग पल गया है, जो स्पष्ट दिखायी नहीं पड़ता। इसके लिये उसे बड़ा ही घमंड है।

एक-एक दिन जो बेबरदाश्त तकलीफ भोगकर उसे मरना होगा, वह भी जैसे अच्छा है। शिरीन को बड़ा दुख हुआ।

मन में लगा, निसार जैसे हमेशा से बच्चा है। उम्र तो हुई है, लेकिन मन बड़ा नहीं हुआ है। उसके साथ रहकर ऐसा लगा है कि वह बड़े आदमी के लिये उपयोगी है। पक्की मुहब्बत की आशा

करना, शिरीन को बड़ा अच्छा लगा। निसार चला गया। बीच-बीच में बड़े भाई के साथ आलिशाह के यहाँ आता है, लेकिन शिरीन से मुलाकात नहीं होती।

शिरीन इन दिनों चुपचाप रहती है। अकेली-अकेली कितनी ही बातें सोचती रहती है। अब मन में होता है, यदि एक बच्चा होता उसे!

लायली के बारे में वह कम ही सोचती है। निसार के बारे में सोचना नहीं चाहती। बीच-बीच में याद आती है, फिर भी याद आती ही है।

आजकल उसके पास कोई नहीं आता। इसलिए दासी ने आकर जब कहा—कुन्दन आया है, वह हैरान हुई। झटपट बत्ती जलाने को बोली और बत्ती हाथ में लिये खुद ही कमरे में गई।

चार

कुन्दन ने देखा कि शिरीन के केश पक रहे हैं। सजने सँवरने की कोई चमक-दमक नहीं। सादे कपड़े, सादे जामे। लेकिन यहाँ जैसे क्या नहीं है? उम्र हो गयी है, लेकिन उम्र की शान्ति नहीं आयी है। शिरीन के आँख मुँह में रिक्तता, उदासीनता और जाने कैसा-सा हताश भाव!

कुन्दन ने हाथ से इशारा किया। शिरीन बैठ गयी। कुछेक क्षण शिरीन बोल ही न सकी।

कुन्दन को पहचानंने में कष्ट होता है। कुन्दन के चेहरे पर मद-मत्त पौरूष का रंग था। कुन्दन दोनों तरफ की मूछें ऐंठ कर ऊपर की तरफ उठा दिया करता था। उसके चेहरे पर चेचक के दाग, दोनों

कंधे बहुत चौड़े और भारी। उसका चलना-फिरना देखते ही लगता था कि यह आदमी इज्जत पाने का अभ्यस्त है।

अभी कुन्दन को देखने से ऐसा लगता है कि यह जैसे वह कुन्दन नहीं है।

उसके चेहरे और कपाल पर उम्र की रेखाएँ। आँखों के नीचे कालापन। कनपटी के केश पक रहे हैं।

लायली की मृत्यु से कुन्दन को कष्ट हुआ है। सोचने से भी अच्छा लगता है।

शिरीन बोली, 'कैसे हो?'

'अच्छा ही।'

कुन्दन हठात् सीधा होकर बैठ गया। बोला, 'यह क्या, कमरे में अँधेरा क्यों? रोशनी जलाओ।'

'रोशनी जलाऊँगी?'

'निश्चय। कलकत्ता शहर जैसे बदल गया है। कुछ ही महीने तो मैं यहाँ नहीं था। किसी के मन में फुर्ती नहीं, कोई आनन्द करना नहीं जानता।'

शिरीन बोली, 'ठीक ही कहते हो।'

उसने दासी को पुकारा।

रुपये लेकर नौकर बाहर भागा। आध घंटा बाद दासी आकर दरवाजे के पास खड़ी हुई। शिरीन उठ पड़ी। बोली, 'चलो।'

घर में जितनी बत्तियाँ थीं, सब जलायी गयीं।

दीवाल पर रोशनी। जीने और सीढ़ी पर रोशनी। ऊपर के बड़े कमरे में झाड़ जल रही है, चादर बिछी हुई है। काँच की मोतियों का पर्दा हटा कर कुन्दन भीतर गया। बोला, 'वाह, शिरीन वाह।'

बहुत दिनों से घर में कोई मेहमान नहीं आया। आज दासी ने अपनी इच्छा से घर सजाया है। उजली धप-धप चादर। सफेद तकिया। घर के कोने में एक गुलदस्ते में फूल। धूप का धुँआ, चन्दन

और इत्र की गंध। मज़लिस के बीच में कुछ फल, मेवे। दो गिलास और शराब की कई बोतलें।

शिरीन साड़ी बदल कर आई। आकर देखती है, कुन्दन की आँखों में हँसी। कुन्दन बोला, 'बैठो।'

दोनों ने थोड़ी-थोड़ी शराब पी। कुन्दन बोला, 'गाना तुम्हें नहीं गाना होगा। गाना भला मैं समझता ही कहाँ हूँ!'

'कब वापस आये कुन्दन?'

'अभी तो।'

'क्या हाल है, बोलो?'

'हाल क्या है? सुनो, मलिका को देखा है न?'

'कौन मलिका? ओ, मलिका फैजाबादी?'

'हाँ। उसे एक दिन बुलाऊँगा, सोचता हूँ।'

'खिदिरपुर में?'

'नहीं-नहीं, अपने श्यामनगर वाले मकान में, नहीं तो बजरा में।'

'अच्छा ही तो है। सुना है, अच्छा गाती है।'

'आह, तुम्हारी तरह थोड़े ही?'

'नहीं, नहीं! सच में अच्छा गाती है। देखने में भी सुन्दर है।'

'देखने में भी सुन्दर है?'

कुन्दन कुछेक क्षण सूनी-सूनी निगाहों से हाथ के गिलास को देखता रहा। इसके बाद मुँह उठा कर हँसने की कोशिश करके बोला, 'जानती हो, उसने ठीक इसी रंग की साड़ी माँगी थी। बहुत खोज-कर लाया था।'

शिरीन भौंहें सिकोड़ती है। कुन्दन को नशा नहीं हुआ है। शिरीन को भी नशा नहीं हुआ है। इसके बाद धीरे-धीरे शिरीन बोली, 'हाँ। पिघले सोने में शहद मिलाया हुआ रंग! उसे फबता है यह रंग।'

हठात् वह हँसती है। बोलती है, 'अच्छा, तब इसे मलिका को

दे दो न, यह साड़ी। मलिका लायली नहीं है। लेकिन उसे भी फबेगी। असल सुन्दरता तो यौवन है। मलिका में भी जवानी है।'

कुन्दन गुस्साता नहीं है। कहता है, 'दूँगा उसे, नया कपड़ा दूँगा। वह कपड़ा मैंने फेंक दिया है। गंगा में बहा दिया है।'

'गंगा में बहा दिया है?'

'हाँ शिरीन। जिसके नाम से खरीदा गया, उसे देने के बदले दूसरे को देने की इच्छा होती है क्या? यह अँगूठी, जो तुम्हारी बात याद कर लाया हूँ, यह क्या किसी दूसरे को देने का मन होता है?'

शिरीन के हाथ में कुन्दन अँगूठी पहनाता है। शिरीन एक टक देखती रहती है। इसके बाद बोलती है, 'हीरा! सचमुच में मैं बड़ा गिर गयी हूँ, कुन्दन। कोई किसी को प्यार करता है तो मैं बरदाश्त नहीं कर सकती। तुम्हें अँगूठी देने की कोई जरूरत नहीं। नहीं, नहीं शिरीन इतनी नीच नहीं। लायली के बारे में सुनना चाहते हो तुम, यही न? बोलूँगी, मैं जानती ही भला क्या हूँ?'

वह जबर्दस्ती अँगूठी उतार कर कुन्दन को देती है। बोलती है, 'तुम मेरे कितने दिनों के परिचित हो। मुझे तो तुम्हीं ने उस बार बचाया था। नहीं तो शोभाबाजार का कविदत्त मुझे बिल्कुल मार डालता कुन्दन! तुम आये हो, यही मेरे कितने दिनों का भाग्य है। आज तुम मेरे मेहमान हो।'

'अँगूठी तुम पहनो। आज यदि जीता न रहता तो अँगूठी भेज ही देता, शिरीन। देखो, अन्दर देखो।'

सचमुच में भीतर शिरीन का नाम लिखा हुआ था। बाई, शिरीन बाई। शिरीन की आँखों से इस बार आँसू टपके। तब अँगूठी पहन ली। भरे-भरे गले से बोली, 'मुझे भी किसी ने याद रखा है?'

'क्यों न रखेगा? असल में....' इधर-उधर देखकर कुन्दन ने कहा, "असल में तुम्हारे घर बीच-बीच में महफिल जमने की जरूरत है। रोशनी वोशनी जलाओ, लोक-जन बुलाओ। देखो, दो दिनों में मह-

फिल जम जाती है।'

'जानती हूँ। लेकिन कुन्दन, फिर महफिल ?'

'नहीं क्यों ? शिरीन, भगवान यदि चाहते कि तुम धर्म-कर्म करो तो तुम्हें जानबाजार की रानी बना कर भेजते। ऐसा जन्म तुम्हारा न होता। तुम्हें जो करने के लिये भेजा है, इस जन्म में वही करो। और क्या जानती हो ?'

जरा झुक कर कुन्दन बोला, 'इन दिनों ही तुम्हें हर समय, रेशमी, बनारसी, हीरा जड़ी हुई पोशाक पहनने की जरूरत है। सभी जानते हैं, अभी तुम्हारे मन में दुःख है। वे तुम्हें देख कर हँसना चाहते हैं। तुम हँसने क्यों दोगी ? बोलो ?'

'समझ गयी।'

शिरीन ने दासी को बुला कर और भी बोतलें लाने को कहा। बोली, 'कुन्दन ठीक ही कह रहे हो । वही तो करना चाहती हूँ। लेकिन ....'

'लेकिन क्या ? निसार शायद सब रुपये-पैसे लेकर चला गया है।'

'नहीं, नहीं। अभी भी जो कुछ है, उससे मेरा जीवन कट जायेगा लेकिन यह सब बात रहने दो। आओ गप्प करें। बातें करें।'

'बोलो शिरीन।'

'जानते हो कुन्दन, लायली का नाम किसने रखा था !'

'नहीं। वह लड़कपन की बातें तो नहीं बताती थी।'

'बड़ी दिमागी थी न ! यह बात बताने में उसका मान जो जाता !'

'फिर तुम्हीं बताओ।'

'उसका नाम था, मुन्नी।'

'मुन्नी ?'

'हाँ। जब वह छः वर्ष की थी, उस समय ईश्वरलाल जी ने उसकी माँ मेहरुम को देखा था।'

'ईश्वरलाल जी कौन ?'

'हमारे आलिशाह ईश्वरलाल को बड़ा प्यार करते थे। उस समय ईश्वरलाल का बड़ा नाम था। वह थे बरौनी के राजा शिवकृष्ण के पुत्र। उनकी माँ थीं एक गृहस्थ घर की बेटी। ईश्वरलाल के गाने का उस समय बड़ा नाम था। लेकिन अन्त में लखनऊ आये।' शिरीन चुप हो गई।

'क्या सोचती हो ?'

'सोचती हूँ, जिंदगी कितनी मुश्किल है। याद आ रहा है, लखनऊ में निसार और मुन्नी मेरी छत पर खेलने आते थे। इसके बाद निसार........'

'बोलो।'

'ईश्वरलाल का चेहरा मुझे याद आ रहा है। आँखें बन्द करते ही जैसे देखने लगती हूँ। दिन भर घर पर ही रहते। पत्नी थी, बेटा था। भाई, भतीजा सभी उनके घर पर रहते थे। लेकिन इसी मेहरुन को लेकर सभी अपमान ही करते!'

'ऐसा ही होता है।'

'शाम को नहा-धोकर मेहरुन के घर आते। छरहरा शरीर, सुन्दर चेहरा, धप-धप सफेद कलीदार अचकन, सिर पर टोपी, कान में हीरा, जेब में इत्र की शीशी और रूमाल। एक छोटी सी गाड़ी थी। सफेद घोड़ा था। खुद ही चला कर आते। मुन्नी को देख कर बहुत प्यार करने लगे। बोले, ऐसी आँखें, ऐसे केश, इसका नाम रखो, लायली आसमान।'

शिरीन थोड़ा हँसी। शिरीन का मुँह लाल हो गया। वह हँस कर उँगलियाँ चलाती हुई बोली, 'लायली आसमान। नाम का कोई अर्थ है या नहीं, यह कौन जानता है। लायली के माने अँधकार, रात का काला रंग। शब्द शायद अरबी है। जानते हो, निसार कहा करता था अरबी और फारसी भाषा में बहुत सुन्दर कवितायें हैं। कौन जानता है,

इस नाम का क्या अर्थ हुआ। शायद इसके अर्थ अँधेरी रात का आकाश या और कुछ हो। निसार कहा करता........।'

'तब चलने दो, निसार की कहानी ही चलने दो।'

कुन्दन की इच्छा नहीं थी, फिर भी कंठ रुँध गया। शिरीन ने उसकी ओर देखा और अजीब हँसी हँस कर बोली, 'नहीं कुन्दन। इस मौके पर मैं निसार की बातें नहीं सुनाऊँगी। निसार लायली के नाम की क्या व्याख्या करता था, वही सुनाती हूँ।'

'नाराज मत हो शिरीन।'

'नाराज! नहीं, नहीं, नाराज भला क्यों होऊँगी? अभी-अभी तुम आये हो, बैठे तो, मेरे साथ बातें करो, मुझे कितना आनन्द आ रहा है!'

मेल करने के ख्याल से बरफ में भींगे हुए अंगूर पर से कुन्दन ने पानी पोंछ कर शिरीन के हाथ पर रख दिया। शिरीन शायद भूल गयी कि यह खाने की चीज है।

उँगली से पकड़ कर उसने ठंडे अंगूर का कपाल और गाल पर रखा। इसके बाद बोली, 'निसार कहा करता था, लायली के नाम को भाव के रूप में समझना होगा। रात की छाती में जिस तरह बेहद घना अन्धकार है—लायली के दिल में भी उसी तरह का रहस्य जैसे स्थिर होकर पड़ा है।'

कुछ रुक कर शिरीन जैसे कुछ सोचने लगी, बोली, 'अभी भी याद आ रही है। लायली जब निरी बच्ची थी, उस समय कभी-कभी गाल पर हाथ रख कर पता नहीं मन-ही-मन क्या सोचती रहती थी। याद आ रही है, जैसे वह मेरे कमरे के गलीचे पर सोयी हुई है, देखकर परमेज कहता, देखो, देखो, किरण जैसे जम सी गयी है।'

'परमेज कौन?'

'परमेज! परमेज मेरे चाचा का बेटा। मुझे बहुत ही प्यार करता। जिस समय मेरी उम्र सोलह और उसकी अठारह की थी, चाची ने

शादी की बात उठायी थी। नहीं, नहीं, शादी हमारी नहीं हुई। बड़ा ही अच्छा लड़का था। उसके साथ जो मैंने बुरा व्यवहार किया है, उसी के लिये शायद ईश्वर ने मुझे इतनी सजा दी।'

'ईश्वर क्यों, ईश्वरलाल की कहानी सुनाओ।'

'वाह, बड़ी अच्छी बात कही। उन लोगों की बातें ही की जायें। मेहरुन बोली थी, मुन्नी का एक कोई नाम रक्खो। ईश्वरलाल उस समय नवाब महल के लिये किताबें इकट्ठी कर रहे थे। लखनऊ के पुराने-पुराने घरों से। फारसी किताबें बड़ी सुन्दर होती हैं, जानते हो न? जितने सुन्दर उनके चित्र उतनी ही सुन्दर हाथ की लिखाई। आलिशाह के अपने ही फैजखाना में भी कितनी ही किताबें थीं! बूढ़े-बूढ़े दफ्तरी बैठ कर वह नाना-किस्म की धूप-धूमना जलाते। नीम की पत्ती, चन्दन और कपूर की थैली किताब के ताखों पर टाँगते। वहाँ ईश्वरलाल जी जाया करते। मेहरुन से वह बोले, ऐसा नाम रखा है कि सभी उसे नाम से ही पहचान लेंगे।'

शिरीन कहती गई।

'मेहरुन बोली थी, उस नाम से अपनी बेटी को क्यों पुकारूँगी? सारे जीवन तकलीफ होगी। ईश्वरलाल बोले, बिलकुल बच्ची हो तुम। नाम रख रहा हूँ, तो क्या हुआ? वह बहुत सुखी होगी। धीरे-धीरे सभी उसे लायली कह कर पुकारने लगे। मुन्नी कह कर कोई नहीं पुकारता था, जानते हो जानते हो, कुन्दन?'

कुन्दन बोला, 'शिरीन, लायली को क्या हुआ था?'

'नहीं जानती।'

'नहीं जानती?' कुन्दन जैसे हताश हो गया। फिर बोला, 'मुझे बड़ी उम्मीद थी कि तुम कुछ जरूर जानती होगी। लायली ने ऐसा क्यों किया, मुझे जानने की इच्छा होती है।

हठात् ही शिरीन एक ऐसी बात पूछ बैठी जिससे कुंदन की छाती एक बार फिर धड़क उठती है। उसका हाथ-पाँव ठंडा हो गया।

शिरीन ने पूछा, 'कुंदन, बजरंगी को क्या हुआ बता सकते हो ?'

कुंदन ने हाथ का गिलास घुमा-घुमाकर देखा। इसके बाद सिर उठाकर बोला, 'क्या जानना चाहती हो ?'

'बजरंगी कहाँ चला गया ?'

'मैं क्यों कर जानूँगा, बताओ ?' कुंदन हाथ के गिलास की तरफ देखते हुए बोलता जा रहा था, 'नहीं जानता, सचमुच मैं नहीं जानता। मैं गाजीपुर में था। लायली के साथ बात-चीत हुई थी, वह और मैं दिल्ली जाऊँगा। वहाँ जाते वक्त बजरंगी को भी ले जाऊँगा, ऐसा निश्चय किया था। लेकिन वह जाने कहाँ चला गया। कितना खोजा, उसकी कोई खबर न मिली।'

'ओह !'

'लेकिन शिरीन, एक दिन और उन लोगों के संबंध में मैं तुमसे बातें करूँगा। निसार, ईश्वरलाल, बजरंगी ! आज तुम लायली के बारे में कहो। मुझे उसने कहा था, उसे कलकत्ता अच्छा नहीं लगता। मैं बोला था, बहुत अच्छा, हम और तुम दिल्ली चले जायेंगे। कई दिन वह कितनी खुश थी। उसे क्या हुआ ? क्या हो सकता है, बोलो ?'

'कुंदन, आज मुझे ऐसा लगता है कि तुम शायद लायली से प्यार करते थे।'

कुंदन के चेहरे पर हँसी फैल गई।

'सफेद गिलाफ लगा पुराना तकिया गोद में लेकर उसने करवट बदली।'

'जानती हो शिरीन, लड़कियाँ मैंने बहुतेरी देखी हैं। कोई लड़की भी मुझे अधिक दिनों तक अच्छी नहीं लगती। लड़कियाँ ही क्यों, कोई भी चीज मुझे अधिक दिनों तक अच्छी नहीं लगती। कलकत्ता में तीन महीने रहने से जब ऊब जाता हूँ तो गाजीपुर चला जाता हूँ, नहीं तो बरेली। लायली के पास जैसे बँध गया था। उसके पीछे बहुत रुपये खर्च करना भी अच्छा लगता था। उसे खुश नहीं किया जा सकता,

उसका दिल नहीं पाया जा सकता, शायद इसीलिये वह अच्छी लगती थी। वह यदि मुझे प्यार करना शुरू कर देती तो उसको भी कब का छोड़ दिया होता। लायली मेरी थी। उसे मैंने खरीदा जो था!'

कुंदन तुमने हँसी की बात कही। प्यार देकर आदमी को नहीं खरीदा जा सकता, फिर रुपये से कहीं खरीदा जा सकता है क्या?'

'हाँ, शिरीन! रुपये से सब कुछ होता है। मैं ऐसा ही विश्वास करता हूँ। जिस दिन हाथ में रुपया नहीं रहेगा, उस दिन डूब मरूँगा। रुपये रहने से लोग इज्जत करते हैं, डरते हैं। लायली मुझसे नहीं डरती थी। नहीं ही डरी तो क्या। मुझे सोचने में अच्छा लगता है कि मैंने उसे बाँध दिया है। कोई पुरुष उसका रूप न देख सकेगा। उसकी बातें न सुन पायेगा। सोचने के बाद, उसके बाद प्यार कहो, खिंचाव कहो, बढ़ जाता। एक बात सुनो।'

कुंदन चित होकर लेट गया। बोला, 'मैंने एक कुत्ता खरीदा था। जहाज के खलासी से। लेकिन मेरा कुत्ता मेरे भतीजे को प्यार करता था। उसे देखने पर उछलना, भूँकता। एक दिन मुझे गुस्सा आया। कुत्ते को गोली मार सकता था, पर मारा नहीं। वह कुत्ता एक आदमी को दे दिया था। सुना, खाना-पीना छोड़कर सूखकर कुत्ता मर गया। मैं खुश हुआ था।'

'भतीजे को ही तो अपना वारिस बनाया है?'

'हाँ। उसे मैं प्यार करता हूँ। लेकिन मेरा खरीदा हुआ कुत्ता उसे प्यार करे, वह मैं क्यों सह सकूँगा? लायली को भी अपना ही समझा था। वह लायली, क्या हुआ उसे? जानने की इच्छा होती है। लायली तो और किसी की तरह भी नहीं, शिरीन।'

'नहीं।'

शिरीन का गला तेज और रूखा। वह बोली, 'लायली को देख कर जो तुम मुग्ध थे कुंदन, वह साधारण नहीं, असाधारण? मैं तो ऐसा नहीं सोचती कि उसका दिल पत्थर का बना हुआ था। इतना

जो उसका नाम ले रहे हो, वह क्या कहती थी, जानते हो ?'

'क्या ?'

'कहती थी, तुमने बजरंगी का खून किया है ?'

'क्या ?' कुंदन सीधा होकर उठ बैठता है।

'लायली गाड़ी लेकर घूमती रही थी। लोगों को बुलाकर कहती थी कि तुमने उसका खून किया है।'

शिरीन बोलती गई। 'लायली न जाने किस-किस के घर गयी। बुला-बुला कर बोली, जानते हो, कुंदन ने बजरंगी का खून किया है। बजरंगी ने उसकी जान बचायी थी, उसने उसका खून किया है। मेरे लिये।'

'ऐसा ?'

'बजरंगी ने तुम्हारी जान बचायी थी, कुंदन ?'

'वह बात रहने दो। उसका नाम न लो मेरे सामने।'

कुंदन उठ खड़ा हुआ। डगमगाते हुए बाहर निकल गया। शिरीन हँसती रही। हँसकर दासी से बोली, 'ले जाओ और शराब ले आओ। मैं पिऊँगी, मुझे आज बड़ा अच्छा लग रह है सब।'

कुंदन हठात् घर आया और अन्दर चला गया।

दासियाँ, घर की स्त्रियाँ, बहुएँ सब इधर-उधर भागीं। कुंदन को जो नहीं पहचानतीं, वह हैरान होकर देखती रहीं। माथे पर घूँघट लेना भी भूल गयीं। उसके छोटे भाई की पत्नी और दासी ने डरकर उसके नौकरों को बुलाया। कौन जानता है, आज क्या हुआ है! वे सब फुसफुसा कर बातें करने लगीं।

कुंदन अन्दर के सभी कमरों को पार कर एक बड़े कमरे में गया।

बहुत बड़ा कमरा। लंबा और नीचा। कतार-कतार में पत्थर का हंडा बैठाया हुआ। ऐसा लगता है जैसे अंधकार से बना हुआ राक्षस हो।

भारी गले से कुंदन ने पुकारा, बत्ती दो।'

नौकर मशाल ले आया। लकड़ी पर कटहल का लट्ठा, चीड़ का गोंद और तारपीन का तेल मिलाया हुआ मशाल। मशाल लेकर कुंदन ने उसे चले जाने को कहा। कमरे की दीवार पर, हंडों पर कजली की जटा झूल रही है। फर्श पर कीचड़। वर्ष भर के पीने का पानी यहीं रक्खा जाता है।

गंगा के बीच तक यह सुरंग चली गयी है। वर्ष में एक बार उस सुरंग का दरवाजा खोला जाता है। जब वर्षा के नये पानी से गंगा भर जाती है। उस समय बहगी में पानी लाकर हंडा भरा जाता है। दासी लोग फिटकरी और कपूर चूर कर हँडों में भर देती हैं। हंडों के ऊपर कभी-कभी साँप लिपटा रहता है। वर्ष में दो एक आदमी साँप डसने से मरते भी हैं।

कुंदन की आहट पाकर एक साँप रेंग कर जाने लगा। कुंदन ने देखा, एक विशालकाय काला साँप धीरे-धीरे उधर वाली दीवार की दरार में घुस रहा है।

उसने दीवार का दरवाजा खोला। सुरंग आगे चली गयी है। इस सुरंग का एक रास्ता सीधा गंगा के बीच चला गया है। और एक रास्ते के मुँह पर दरवाजा है। कुंदन ने उस दरवाजा का ताला खोला।

इस सुरंग से कुछ दूर जाने पर एक दरवाजा मिलता है। उसमें ताला झूल रहा है। वर्ष भर इस रास्ते से कोई नहीं गुजरता।

बीच-बीच में कुंदन ही आता है।

उसके दादा काशी और मिर्जापुर शहर के नामी गुंडा थे। कुंदन के पिता जी गुंडागर्दी पसंद नहीं करते थे। पिता से उनकी नहीं बनती थी। कुंदन के बचपन में ही उनकी मृत्यु हो गई थी।

कुंदन अपने दादा के हाथों आदमी बना है। बूढ़े दादा जब आँखें बंद कर रहे थे, बोले थे, 'बड़े ही आनंद, बड़ी ही शान्ति से मर रहा हूँ रे! तुम मेरे योग्य वंशधर हो।'

कुंदन ने उनका नाम जगाए रखने की कोशिश की है।

लेकिन वह कारबार भी करता है। मसाले का कारबार, हीरे-जवाहरात का कारबार। उसकी बड़ी-बड़ी पचास नावें हैं! नदियों के रास्ते बंगाल और संयुक्त प्रदेश में वे सब नावें घूमती रहती हैं। दस वर्ष आगे कुंदन ने जिन्दों आदमियों तक का व्यवसाय किया है। लुक-छिपकर स्त्री-पुरुष, कुली, भारत के बाहर चलान भेजता था। इसके बाद एक बार चट्टग्राम के बन्दरगाह पर पकड़ लिया गया था। कक्स बाजार में मोटी रकम देनी पड़ती थी। उसी से उस व्यवसाय का अन्त हो गया।

कुंदन सुरंग की राह चलने लगा।

हवा आ रही थी। गङ्गा के बीच से हवा आकर उसके आँख-मुँह को गीला कर रही थी।

पैर बालू में फँस गया। बालू और मिट्टी। इस बार, एक दिन बालू फिंकवानी होगी।

दरवाजे का ताला खोला।

आवाज़, किस चीज की आवाज़? कोई जैसे दीवार नोच रहा है। दीवाल कौन नोच रहा है?

कौन? कौन है, वहाँ? कुन्दन को डर लगा। पीछे से पसीना चूने लगा। रीढ़ जैसे सिहर उठी।

नहीं! कोई तो नहीं। एक बहुत बड़ा चूहा था। यह जहाज में रहता है, नाव पर रहता है। यह लाश भी खाता है, यहाँ तक कि जिन्दा आदमी को भी कुच-कुच कर के खाता है।

कुन्दन को याद है, उस बार की कक्स वाजार वाली घटना।

कुलियों में से एक को हैजा हो गया था। उसे उठाकर समुद्र में सभी ने फेंक देना चाहा था। कुन्दन उसे नाव पर चढ़ाकर कलकत्ते को रवाना हुआ। कुछ दूर जाकर नाव किनारे पर लगाकर वह बाजार चला गया था। हो सकता है, इसी बीच आदमी मर भी जाता। बोरा चाहिये, डोरी चाहिये। बोरा में लपेट कर मुँह बाँधकर, पत्थर के साथ

जिन्दा हो या मुर्दा, फेंक देने भर से काम समाप्त होता।

बाजार आकर, बहुत दिनों बाद वह ताड़ीखाने में घुसा। शराब चली, जुआ चला। शोरगुल में रात बिता कर सुबह नौका पर वापस आकर कुन्दन ने देखा कि वह आदमी गायब था।

वह और उसका निग्रो संगी, दोनों नीचे उतरे। किनारे-किनारे चलते रहे। इसके बाद देखा, पत्थर के बीच आदमी पड़ा हुआ है। कई चूहों ने उसे आधा खा लिया था। उस समय भी वह हिलता-डोलता था।

देखकर कुन्दन और निग्रो दोनों हँसे। शायद उन लोगों का मतलब समझ कर वह आदमी भागने की कोशिश कर रहा था। लेकिन भाग्य को क्या धोखा दिया जा सकता है? चूहे सब शायद गोदाम के हैं। वहाँ पर सूखी मछली और सूखे माँस का गोदाम है न।

वे सब गंध पाते हैं। वे सब आते हैं। अभी जिस तरह आये हैं। अभी आकर नाखून से यह दरवाजा नोच रहे हैं। वह क्या समझ सका है? क्या समझ सका है?

कुन्दन ने बत्ती पकड़ी। चूहा धीरे-धीरे हट गया और तेज दाँतों को बाहर कर देखता रहा।

कुन्दन खड़ा रहा।

दरवाजे पर भार देकर खड़ा रहा। नहीं। कुछ तो सुनाई नहीं पड़ता।

बहुत बड़ा कमरा। कमरे के बीच में पहाड़ जैसा चूने का ढेर। कुन्दन ने कान लगाया।

कोई नहीं बोलता, कोई भी नहीं बोलता है रे! ऐसा अँधेरा, ऐसी शान्ति, यहाँ कोई नहीं आता। लेकिन यह तो सुना जाता है कि वह आता है। अँधेरे में आता है, एकान्त में आता है। प्यार में आता है, हिंसा में आता है। जैसे भी हो तुम आओ। तुमसे मैं डरूँगा नहीं।

मैं अकेला हूँ, बिल्कुल अकेला। इस तरह अकेला-अकेला मैं नहीं रह सकता। कोई नहीं जानता, मैं कितना अकेला हूँ।

कुन्दन आँखें बन्द कर लेता है। जिसके सामने उसे लज्जा नहीं थी, संकोच नहीं था। जिसके सामने, केवल जिसके सामने कुन्दन सहज हो सकता था, वह क्यों नहीं आता है? पृथ्वी भर में केवल एक ही आदमी के सामने कुन्दन रो सकता था। वह कहाँ है, कहाँ है?

हाँ! कुन्दन ने उसे बहुत सम्मान दिया था। उसे रुपये नहीं दिये थे, पैसे नहीं दिये थे। उस पर विश्वास किया था। मुक्तेश्वर के मेला में उसे चेचक हुई थी।

वह मर रहा था। यह जानकर उसका दुश्मन हाफिज नियामत चुनार से आया था। कुन्दन को मारने के लिये गणेशीलाल ने काशी से आदमी भेजा। लेकिन कुन्दन उस समय सो रहा था। निश्चिन्त, बच्चे की तरह निश्चिन्त। वह कुन्दन के सिरहाने बैठी रहती थी। उसके रहने पर फिर डर क्या? दोनों हाथों से कुन्दन को संभाले रहती थी।

कुन्दन ने धीरे-धीरे उसका नाम लेकर पुकारा। कुन्दन ने कहा, मैंने शादी नहीं की। सोचा था, उम्र होने पर तुम्हें लेकर चला जाऊँगा। तुम्हारे साथ रहूँगा। अपने पाप की कमाई का एक भी रुपया तुम्हें नहीं दूँगा। तुम कमाकर जो दोगी वही खाऊँगा। अब एक बार तुम ही आओ। जीवन में कभी एक बार भी तुम्हें अच्छी तरह नहीं पुकारा। एक बार भी छाती से नहीं लगाया। आज मेरा दिल जल रहा है।

कोई नहीं। कोई भी नहीं, कुछ भी नहीं। हाथ की बत्ती बुझ गयी।

फिर भी कुन्दन खड़ा रहा। शायद बत्ती रहने के कारण वह नहीं आयी। लेकिन अब वह क्या आयेगी?

'मालिक! मेहरबान! मेरे मालिक!'

इस तरह फिर क्या वह पुकारेगी ? फिर क्या बोलेगी, 'तुम मेरे मालिक हो !'

नहीं। हवा केवल लम्बी साँस छोड़ रही है। अकेली और अँधेरी हवा। गुप्त सुरंग में गन्दी हवा। वहाँ कोई भी नहीं।

वह तो केवल चूने का ढेर है। एक वर्ष तक रहेगा। इसके बाद चूना उठाकर गंगा में फेंक दिया जायेगा।

अंधकार में हाथ से टटोल कर कुन्दन ने ताला बन्द किया। वह टटोल-टटोल कर लौटा। किस तरह सुरंग पार किया, किस तरह दरवाजा बन्द किया, किस तरह अपने कमरे में आया, यह वह नहीं जानता।

रात में उसने खाया भी नहीं।

सबको बाहर निकाल दिया। फिर अपने बिछावन पर उठंग कर बैठ गया।

आज वह कोई काम नहीं करेगा। आज कुन्दन सिर्फ उसके बारे में सोचेगा।

पाँच

कुन्दन का बचपन काशी में बीता है।

काशी की बात याद आते ही, कुन्दन को उसके दादा की याद आती है। दशाश्वमेध घाट पर ही उन लोगों का मकान था।

उसके दादा रोज शाम को सात बजे दशाश्वमेध घाट पर आकर बैठते। घाट के चबूतरे पर।

दो जवान नौकर उसे तेल लगाते। मालिश करते। उन लोगों के शरीर के पसीना चूता।

बाबूलाल का रंग गोरा। विराट व भारी-भरकम चेहरा। नहाने के

समय जोर-जोर से शिव-स्त्रोत पढ़ते। घाट के पण्डे पूरे कपाल पर चंदन लगाते। गले में मदार के फूलों की माला पहनाते। जल भरा कमंडल लेकर जब बाबूलाल निकलता तो उस समय देवता सा लगता। टक-टक लाल रेशमी कपड़ा पहने हुए। गले में सोने की जनेऊ। हाथ में चाँदी का कमंडल। मुँह से 'हर-हर-बम-बम' की आवाज।

उसे देख कर कोढ़ी घिसट-घिसट कर आते। भिखारी बच्चे कहा करते, 'दो, मिठाई दो, पैसे दो।"

बाबूलाल उन्हें पैसे देता, मिठाई देता। नहाने के लिये आने वाली बुढ़िया औरतें उसे देखकर कितने ही दिनों तक बहुत बड़ा साधू समझकर उसे प्रणाम करतीं। माघ महीने की सुबह में इसी घाट पर बैठकर बाबूलाल कंबल बाँटता।

बीच-बीच में पूरी, हलुवा लेकर काल भैरव के मन्दिर में जाता। हरिश चन्द्र घाट जाता, मणिकर्णिका जाता। कुत्तों को पूरी हलुवा खिलाता। टोकरी की टोकरी मिठाई, अमरूद, आम लेकर संकटमोचन जाता। बानर भोजन कराता।

उसके घर के नीचे के तल्ले वाले आँगन में, कमरे में, भिखारी सोये रहते, रास्ते के कुत्ते सोये रहते। वह जब सुबह वापस आता, भिखारी बच्चे उसे घेर कर 'हो-हल्ला' मचाते।

एक दिन इसी दशाश्वमेध घाट पर एक छोटी लड़की ठोकर खाकर गिर पड़ी थी। बड़ी ही हसीन लड़की। उसने बाबूलाल को पहचाना। संभवतः डरकर भागना चाहती थी।

बाबूलाल उसका हाथ पकड़कर बोला, 'उठो, मेरी बेटी, उठो।' उसका हाथ पकड़कर वह उसे बंगाली टोला पहुँचा आया था।

लड़की का नाम था कमला। बड़े ही गरीब की बेटी थी। उसकी शादी में बाबूलाल ने सोने के जेवर, बनारसी साड़ी और पाँच सौ रुपये चौक में दिये थे। बोला था, 'मेरी बेटी है न वह! बेटी को सजाता हूँ मैं।'

कोई भी उससे कुछ नहीं कहता। लेकिन कुन्दन को याद है, बाबूलाल से एक दिन एक साधू ने कहा था, 'क्यों, इतना दान-ध्यान क्यों रे ?'

बाबूलाल ने जवाब दिया था, 'सुना है, माँ अन्नपूर्णा बीच-बीच में भिखारिन के वेश में भक्तों को छलती हैं। इसीलिये सभी की सेवा करता हूँ बाबा।'

शायद सभी कहा करते, काशी जाने पर बाबूलाल को भी देखना चाहिये। वह भी एक देखने की चीज है।

एक दिन बाबूलाल से कुन्दन ने कहा था, 'जानते हैं, सभी कहते हैं कि आप देखने की एक चीज हैं।'

यह सुन कर बाबूलाल खूब हँसा था। कुन्दन रंज होकर बोला था, 'वाह, हँस रहे हैं, क्यों ? काशी में त्रैलंग स्वामी को क्या लोग नहीं देखते ?' यह सुन कर बाबूलाल ने उसे बहुत डाँटा था। बोला, 'अरे मूर्ख उसे देखते हैं, विश्वनाथ का अवतार मान कर। मुझे देखने की बात कहना, यह उन लोगों का मजाक है। समझता क्यों नहीं रे ?'

उस समय भी कुन्दन अपने दादा को नहीं पहचान सका था।

बाबूलाल, भारी गुंडा। तब की काशी में जाने कितने ही राजे रजवाड़े, जमींदार व नवाब रहते थे। पूरे भारतवर्ष से कितने ही लोग तीर्थ करने आया करते थे।

बाबा का धाम काशी। अन्नपूर्णा वहाँ माँ बन कर रहतीं। गंगा वहाँ की उत्तरवाहिनी। गंगा में ज्वार-भाटा भी नहीं।

गली-गली में शिव। रास्ते-घाट में शिव। धर्म करो, पुण्य करो।

वहाँ सब कुछ ही अधिकता के स्तर पर। रुपया, बदमाशी, गुंडे-बाजी, सब ही जैसे बाबा की दया से उदार हाथों की सृष्टि थे।

जोगस्थान, अन्नकूट, माघमेला, इन सभी समय में बाबूलाल का मौसम होता। बाबूलाल के हाथों जो नहीं हुआ, ऐसा पाप शायद संसार

में कोई नहीं ।

वह छोटी-मोटी गुंडेबाजी नहीं करता था। छोटे-मोटे कारणों से खून-जखम, बाई जी या रंडी को लेकर कोई बुरा काम करने वालों में बाबूलाल कभी नहीं था। उसके कारनामे देखने के लिये काशी शहर की जीवन-धारा में डुबकियाँ लगाना जरूरी है । बहुत बड़ा महल घेर कर महाराजा बैठे रहते हैं। किसी दौलतमंद के बेटे को देखकर जुआ खेलना चाहते हैं। वहाँ बहुत कुछ घटता है। अचानक, बेहद हसीन रानी आकर राजा के पास बैठती है और हँसते-हँसते नवागत को दो हजार रुपये जिता देती है। और भी रुपये के लालच से वह बड़ी बाजी लगाता है और घटे भर में सब कुछ गँवा कर निकल जाता है। दूसरे दिन आने पर दिखाई पड़ती हैं, घर के नीचे वाले तल्ले में बनारसी पान और काठ के खिलौनों की दूकानें। ऊपर तल्ले पर कोई भी नहीं।

सिर पीट कर बाहर निकल आना पड़ता है। जो सुनता है, वही कहता है, 'बाबूलाल के नौसेरा दल के हाथों फँसा था, भाई ।'

बाबूलाल का बहुत बड़ा दल। बहुतेरे चेले-चाटी बहुतेरे संगी-साथी। इस पंडा से उस पंडा का झगड़ा हो रहा है। शायद कोई वंश-परम्परा से चला आ रहा झगड़ा है। शायद इसका या उसका वंश समाप्त हुए बिना नहीं मिटेगा। मोटी रकम लेकर बदले में बाबूलाल यह भार लेता है। काशी में जो कुछ हिन्दू राजा और जमींदार परिवार हैं, उनका रक्षक भी वही है।

उसके आदमी उन लोगों की सभी संभावित आपत्ति-विपत्ति से रक्षा करते हैं और बदले में मोटी रकम पाते हैं।

बाबूलाल कभी-कभी खुद भी जाता है। अधिकतर वह अपने घर ही रहता है। वह गंगाघाट जाता है। राजमहल या पेशवा-महल जाता है। कभी-कभी नौका पर भी जा बैठता है। खुली नाव में करवट लिये तकिया पर उठंगकर लेटा रहता है। गोद के पास कुन्दन होता है।

कुन्दन को वह आँखों से ओझल नहीं करता। कुन्दन की माँ, दादी बीच-बीच में आतीं, वे भी काशी में रहतीं। शहर के बाहर दूसरे मकान में। कुन्दन को प्यार करके उसकी माँ थोड़ा-थोड़ा रोतीं और जाने क्या सब पहनातीं। कहतीं, 'हाँ रे, माँ के लिये मन व्याकुल नहीं होता?'

'नहीं।' कुन्दन सीधा सा जवाब देता। सुन कर उसका मुँह जाने कैसा सा हो जाता। दादी के पास उसे उसकी माँ ले जाती। कहतीं, 'जानती हैं, उसका मन मेरे लिये व्याकुल नहीं होता। अपने दादा के पास रहने से ही, वह सब कुछ भूल जाता है। भुला दिया है, मेरे बेटे को बिलकुल पराया बना दिया है।'

उसकी माँ सर पीट कर रोती। उसकी दादी डर कर कहती, 'चुप रहो। एकदम चुप हो जाओ। यदि सुन ले, यदि सुन पाये।'

बाद में कुन्दन ने सुना, उसके पिता के मरने के पहले ही उसे उसके दादा ले आए थे। उसकी माँ के मन में बड़ा दुःख था। उससे कहते, 'नहीं, नहीं। माँ, दादी, उन लोगों के बीच आदमी बनना संभव नहीं, उसके मन को कठोर बनाना होगा।' बाबूलाल को भी अपनी पत्नी पर बड़ा गुस्सा था।

बड़ी वैष्णव हैं वह। सोने के गोपाल जी की मूर्ति छाती के हार में झूलती रहती। हमेशा मौन-जप करतीं। स्वामी के काम धन्धे से नफ़रत करतीं। बाबूलाल की और भी दो शादियाँ थीं। दस पन्द्रह वर्ष घर बसाने के बाद वह सब पत्नियाँ घर भेज दी गयी थीं। वे सन्तान सुख नहीं दे सकी थीं।

कुन्दन की दादी सबसे छोटी हैं। उन्हें लड़का हुआ। वह लड़का भी अपनी माँ का भक्त। वह जैसे दूसरी ही धातु का बना हुआ है, यह समझते बाबूलाल को देर न लगी। दूसरी शादी का प्रस्ताव आने पर बोला है, 'नहीं नहीं, मैं एक से अधिक शादी नहीं करूँगा।'

'वे एक पत्नी-धर्मी हैं, वे रामचन्द्र हैं।' कह कर बाबूलाल भर्त्सना

करता है। लेकिन यह दोष भी वह माफ कर देता है। उस समय पत्नी पर उसका प्यार था। उस समय पत्नी की बातें वह रखता था। कुन्दन की दादी बड़ी ही हसीन। बिलकुल गोरा रंग, नाटा-छोटा शरीर। आँखें दोनों बड़ी-बड़ी, चंचल। उन आँखों की पलकें न गिरतीं। सारा वर्ष व्रत, उपवास करतीं। दाहिना हाथ वृन्दावन के गोपाल जी के पास गिरवीं रख छोड़ा है। दाहिना हाथ छाती पर आँचल के नीचे रहता, सोने के गोपाल जी का पैर पकड़े रहतीं।

बाबूलाल उसे प्यार करता था। वह बोलतीं, 'लड़के को पाप करने को क्यों कहते हो ? खुद क्या कम पाप किया है ?'

'छोटी, तुम अपना मुँह सम्हालो।'

'सम्हालूँगी क्यों ? मैं तुम्हारी पत्नी हूँ। पाप करोगे तो क्या तुम्हें समझाऊँगी भी नहीं ?'

चिरंजीलाल को फिर विवाह करने के लिए बाबूलाल ने नहीं कहा। कुछ दिन बाद ही कुन्दन पैदा हुआ। इसके बाद गोपाल, रेवती और यशोदा। बाबूलाल बड़ा ही प्रसन्न, यहाँ तक कि लड़की होने पर भी अप्रसन्न नहीं हो सका।

कुन्दन की उम्र जिस समय पाँच वर्ष थी, उसी समय से चिरंजीलाल और बाबूलाल में झगड़ा शुरू हुआ। चिरंजीलाल दूकान करना चाहता था, कारोबार करना चाहता था। उसकी माँ ने शायद सोचा था, अन्तिम जीवन काल में बेटे को लेकर शान्ति पाऊँगी। बेटे के कहने सुनने पर शायद बाबूलाल भी अपने को सुधारने की कोशिश करे।

चिरंजीलाल और बाबूलाल के मनमुटाव का क्या कारण था, किसे पता ! लेकिन छोटा लड़का गोपाल जब पैदा हुआ उस समय दोनों में भयानक झगड़ा होता था। शायद चिरंजीलाल ने कहा था, 'आप शैतान हो। मैं आपसे नफरत करता हूँ। अपने बाल-बच्चों को लेकर मैं कहीं चला जाऊँगा।'

इसके दो महीने बाद ही चिरंजीलाल लापता हो गया। सभी सोचते कि पिता के साथ झगड़ा है, इसलिये मन के दुःख से वह देश छोड़ कर चला गया। चिरंजी की माँ और पत्नी भी यही विश्वास करती। घास बिचाली की ढेर से खून से रंगी हुई उनकी धोती-कमीज और आम के बगीचों से लाश खोजकर उसके मामा ने बाहर निकाला। इससे पहले चिरंजी की माँ कहा करतीं, 'मेरा बेटा आयेगा। मुझे ले जायेगा।'

लेकिन चिरंजी की लाश का विधि के अनुसार संस्कार हो जाने के बाद वह जैसे पागल हो गई।

बाबूलाल शोक से हाथ पैर पटकता। सिर के बाल नोचता। 'किसने खून किया है, उसके मैं टुकड़े-टुकड़े कर दूँगा।'

उदार हाथों से श्राद्ध की व्यवस्था हुई। बड़े-बड़े पण्डितों की मदद से श्राद्ध तथा शान्ति-स्वस्तयन हुआ। अकाल मृत्यु का दोष कटा। बाबूलाल खुद भी बहुत उदास हो गया। यह सभी की नजरों ने स्पष्ट देखा।

पता नहीं क्यों बाबूलाल कवच और ताबीज धारण करता। यह देख कर उसकी पत्नी उससे कहतीं, 'क्यों भला इतना ढोंग करते हो? जो पाप किया है, उससे तुम्हारा अंग अंग गल कर गिर पड़ेगा। संतान की हत्या की है, यह क्या कोई मामूली पाप है?'

बाबूलाल बिलकुल चुप हो जाता। इसके बाद वह क्रोध से दोनों हाथ फैलाये आगे बढ़ जाता। उसकी पत्नी बोलती, 'हाँ मारो। मुझे क्या होगा? मैं बेटे के पास चली जाऊँगी।'

यह सब बातें सबके जानने लायक नहीं। लेकिन फिर भी किसी तरह सभी शायद जानते हैं। इसके बाद बाबूलाल की पत्नी ने एक नया मकान खरीदने को कहा। बहू का कहीं एक नया घर बन गया। उस मकान में एक दिन बाबूलाल की पत्नी, चिरंजी की विधवा और बाल-बच्चे सभी चले गए।

बाबूलाल कुन्दन को साथ ले आता है। कुन्दन को अपनी तरह ही बनाना होगा, नहीं तो फिर उत्तराधिकार किसके हाथों छोड़ कर जायेगा ? गोपाल को वह फूटी नजरों से भी नहीं देखता।

देखेगा भला क्यों कर ? गोपाल ने अपने पिता का चेहरा पाया है गोपाल की दीदी कहती।

'तुम खाते हो क्यों कर ? तुम बचे हुए हो किस तरह ? नरक का डर तुम्हें नहीं लगता ? हाथ में तागा ताबीज पहने हुये हो, शायद उसे देख पाते हो, यही न ?'

धीरे-धीरे उसके शोक की ज्वाला कम हुई। वह कहती, 'आग मेरा दिल जलाती है। समझी बहू ? अब चिल्ला नहीं सकती। चिंरजी के पिता को देख कर मुझे जैसे डर लगता है। कहाँ, उसको तो कुछ भी नहीं हुआ।'

डरने की ही तो बात है। जो आदमी ठंडे दिमाग से अपने बेटे का खून कर सकता है, फिर खाने-पीने में मस्त रह सकता है, उसे देखने से डर लगता ही है। बाबूलाल यों सचमुच शराब और औरत के प्रति आसक्त नहीं था। कहा करता, 'मैं भवानी का सेवक हूँ। मैं पुरुष हूँ। अरी छोटी, तुम क्या कहोगी ? मैंने पाप किया है या नहीं, यह माँ भवानी समझेंगी।'

कौन जानता है, कहाँ भवानी मन्दिर है। कुंदन ने देखा है, बाबूलाल कौड़ियाँ जड़ी और सिंदूर पुती टोकरी की पूजा किया करता। कभी-कभी, वह टोकरी बाबूलाल के कमरे के पास वाले चोर घर में रहती। छोटा सा कमरा। उस कमरे में दिन क्या, रात क्या, बराबर दिआ जलता। बहुत बड़ा पीतल का दिआ। उस दिये को उठाने में एक जवान आदमी का भी हाथ काँपता।

'दादा, मैं आपकी तरह पूजा करूँगा।' कुन्दन बोलता।

'करोगे ? पहले तुम्हें दीक्षा दूँ ? करोगे पूजा ?'

कुंदन बाबूलाल के पास रहता। छूरा चलाना सीखता, पिस्तौल

छोड़ना सीखता। रोज सुबह कच्चा दूध पीता, कुश्ती लड़ना सीखता।

'किसी पर विश्वास मत करना, कुन्दन। मुझ पर भी नहीं। इस दुनिया में तुम अपने को छोड़कर किसी को भी अपना दोस्त नहीं समझोगे।'

बीच-बीच में बाबूलाल अजीब बातें कहा करता। कुन्दन के बारहवें वर्ष में वह बहुत बीमार हो गया। सभी सोचते, अब मर जायेगा। यहाँ तक कि एक साँढ़ को बड़ी कोशिश करके दोतल्ले पर लाया गया। साँढ़ की दुम पकड़कर बाबूलाल स्वर्ग जायेगा। ऐसी ही एक बात सुन पड़ी थी।

बाबूलाल भारी भरकम शरीर लिये पड़ा था। अचानक ही वह गरज उठता, 'ऐसा अँधेरा किसने कर दिया?' साँढ़ भीतर लाने में दर-वाजा बंद हो जाता है। साँढ़ भड़क जाता है। धूप धुपना, गुग्गुल की गंध से वह बेचैन हो उठता है और वह धूपदानी उलटकर किसी तरह निकल आने की कोशिश करता है। साँढ़ को बाहर कर दिया जाता है और सभी हैरत से देखते हैं, बाबूलाल हँसता है। इसके बाद बाबूलाल वैद को डाँटता है। पुरोहित से कहता है, 'निकलो बाहर।' उसे पास वाले कमरे के बरामदे में लाया जाता है। बिछावन पर लेटे-लेटे वह धीमी आवाज में चिल्लाता रहता है, 'सभी उल्लू आ जुटे हैं। सबको निकाल दूँगा, घर से भगा दूँगा।'

वह बुरी तरह बीमार हुआ था। छाती और पीठ में बलगम बैठ गया था। फिर भी वह अच्छा हो गया। छाती व पीठ पर पुराना घी मालिश करना पड़ता था। बदबू से पास नहीं जाया जाता। केवल कुंदन ही पास बैठा रहता। बीच-बीच में आँखें खोलकर बाबूलाल चिल्ला उठता, 'कोई भी क्या नहीं है? सब मर गये? बच्चा अकेला बैठा है। इसने कुछ खाया भी या नहीं?'

बाबूलाल की पत्नी आतीं, दास-दासी आते। कुंदन को उसके दादा के पास से ले जाते। एक दिन रोती-रोती दादी ने कुंदन के हाथ

में एक पुड़िया दिया। बोलीं, 'अपने दादा के कपाल पर एक बार छुला देना। भगवान का प्रसादी फूल है।' बाबूलाल के कपाल से जब कुन्दन प्रसादी-फूल छुलाता है, उस समय बाबूलाल पलकें बंद रखता है। कुन्दन बड़ा खुश होकर अपनी दादी से जाकर कहता है, 'जानती हो, दादा चुप थे। मैंने खूब अच्छी तरह उसके कपाल से छुलाया था। दादा अब अच्छे हो जायँगे, न ?'

उस दिन उसके दादा ने कुन्दन से एक बात कही। सुनकर कुन्दन हैरान हो गया। वह सोच नहीं सकता था कि दादा ने क्यों इस तरह की बात कही। वह दादा के पास बैठकर बोला, 'अब आप अच्छे हो जायेंगे। दादी ने मेरे हाथ भगवान के पूजा के फूल दिये थे कि....।'

यह सुनकर ही बाबूलाल जाने कैसा सा हो गया। उसने दीवार की तरफ मुँह घुमा लिया। बोला, 'तुम चाहते हो कि मैं अच्छा हो जाऊँ, यही न रे ?'

'हाँ, चाहता तो हूँ।'

'जानते हो कुन्दन, एक बात जानते हो ?'

बाबूलाल ने कुन्दन को पास बुलाया। गरम हाथ, निश्वास व देह में बदबू। गले और कंधों में मैल जमी थी। बाबूलाल फुसफुसा कर बोला, 'मैं इस तरह मरना नहीं चाहता। तुम्हारे हाथों मरना चाहता हूँ।'

'धत् !'

'सच ही रे। मेरी बड़ी इच्छा है कि एक दिन तुम्हारे हाथों ही मरूँगा। महाभारत सुना नहीं है ? किस तरह भीष्म अर्जुन के हाथों मरे !'

'ऐसी बातें आप नहीं करें। मैं क्या आपको मारूँगा ? मैं जाता हूँ, जाकर सभी से कहे देता हूँ।'

उस समय बाबूलाल ने उसे छोड़ दिया। बोला, 'नहीं रे, मैं तुमसे मजाक कर रहा था।'

बाबूलाल की बीमारी के समय शायद सभी का दिमाग खराब हो गया था। हालत जब बहुत खराब हुई तो एक दिन कुन्दन को उसकी माँ के पास भेज दिया गया। बहला-फुसला कर। कहा गया, 'जाओ, अपने बगीचे से भटकटैया और सफेद मदार की जड़ ले आओ। साथ में आदमी भी जाएगा। वह पहचानकर ले आयेगा। दवा बनाने के लिए। फिर तुम्हारे दादा अच्छे हो जाएँगे।'

कुन्दन चला गया। बड़े ही उत्साह के साथ पेड़ की जड़ व लत्ता-पत्ता जमा करता है। विशुवा उसके दादा का दाहिना हाथ। विशुवा ही कुन्दन का काम-धंधा करता। वह साथ-साथ घूमता रहा।

लेकिन बाद में कुन्दन ने देखा कि उसे साथ लिये बिना ही गाड़ी चली गयी। वह बड़ा ही दुखी हुआ। दूसरे ही क्षण नाराज हो कर विशुवा से बोला, 'जाओ तुम चले जाओ। मैं अकेले ही चला जाऊँगा।'

गोपाल आकर बोला, 'बड़े भैया, देखो मेरे हिरन को बच्चा हुआ।' अवाक् होकर बहन भी पास-पास घूमती। माँ से पूछती, 'वह बच्चा हम लोगो के घर रहेगा! यहाँ खायेगा?'

कुन्दन को सभी प्यार करते। बहुत प्यार करते। लेकिन कुन्दन नहीं रह सकता। रो कर बोला, 'मेरे न रहने से दादा मर जायेंगे।' माँ से कहता, 'तुम किस तरह मेरा दुःख समझोगी? तुम तो दादा को एक बार भी देखने नहीं गयी हो।'

उसकी माँ ने बहुत कह सुनकर उसे शांत किया। उसे सामने बैठा-कर खिलाया। प्यार से बोली, 'मेरे पास रहो न, दो दिन। बीमारी के घर में तुम्हें क्या कोई देखता है या खाने को देता है?'

कुन्दन अवाक् होकर ताकता रहा और खाता रहा। अच्छा भी लगा और बेचैनी भी बढ़ी। यहाँ जैसे सब कुछ दूसरी तरह ही था। मंदिर में पूजा होती, गाय-बैल गोशाले में बंधे रहते। उसकी माँ और दादी गोपाल को कभी भी नहीं डाँटतीं। गोपाल हिरन पोसता,

पंडित के पास जाता। बाहर पीपल का एक पेड़ । उसके नीचे कुँआ, एक छोटा सा कमरा भी। एक बूढ़ा नौकर वहाँ बैठा रहता। उसकी दादी रोज वहाँ पर फुलाया हुआ चना, आम, चिऊड़ा, गुड़, सत्तू बताशा, बंहगी में भर कर भेज देतीं। जो कोई आता, उसे बूढ़ा पानी देता, एक मुट्ठी खाने को देता। वहाँ बीच-बीच में कुन्दन का भाई जाकर बैठता। कुन्दन पूछता, 'वहाँ क्या है ?'

गोपाल हैरत भरी निगाहों से भैया की तरफ देखता । कहता, 'जानते नहीं, हम लोगों के पिता जी के नाम से यह प्याऊ चलती है ? यहाँ सभी जानते हैं—चिरंजीलाल की प्याऊ। तुम तो बड़े लड़के हो, क्या तुम नहीं जानते ?'

नहीं। कुन्दन यह नहीं जानता। पिता की याद उसे कभी आती ही नहीं। धुँधली-धुँधली याद कभी आती है। एक हो-हल्ला, रोना-धोना और कुहराम। जाने कौन कहती थी, 'बहू रोती क्यों नहीं ? ए चिरंजी की माँ, बहू रोती क्यों नहीं ?' इसके बाद एक आदमी बोला, 'यह क्या ? खून से भरा कपड़ा-लत्ता, यह कहाँ से आया ?'

और कुछ भी याद नहीं आती।

लोगों ने उसे श्मशान नहीं जाने दिया था । पल भर में ही जैसे घर शान्त हो गया था। चंदन की लकड़ी क्या मणिकर्णिका में नहीं मिलेगी ? पता नहीं किसने पूछा था। शांत, जैसे घर में कोई हो ही नहीं। पूरा घर चुपचाप। माँ कहाँ, दादी कहाँ, किसे पता ? उसका दादा खड़ाऊ खट-खट करते हुए चला गया और बरामदे में खड़ा होकर पता नहीं किसे क्या-क्या कहता रहा। कई छोटे भाई बहन के साथ वह एक ही बिछावन पर बैठा था। एक बार बूढ़ी दाई आयी। वह लाठी लेकर चलती थी। हाथ में एक दिया लिये, लाठी से ठक-ठक करती हुई वह भीतर आई। उन लोगों को ले जाकर उसने एक-एक कटोरा दूध पिलाया । बोली, 'तुम लोग अब सो रहो। मैं दरवाजे के पास ही बैठती हूँ।'

फर्श के बिछावन पर वे सब सो गये। दोनों बहनें बूढ़ी दाई की गोद के पास ही सोयी रहीं। बूढ़ी दाई बैठी सिसकियाँ भर-भर कर रोती रही। 'हाय-हाय, दूधमुँहें बच्चे हैं सब, तुम लोगों को कौन बचायेगा?' वह यही बड़बड़ाती थी।

कुन्दन पिता के नाम की प्याऊ की ओर एकटक देखता रहता। गोपाल कहता, 'जानते हो, मैंने कैसा हिसाब लगाना सीखा है? मैं रामचरितमानस भी पढ़ सकता हूँ।' गोपाल का चेहरा सुन्दर, पतले होंठ, भोली निगाह। गोपाल कहता, 'भैया तुम भी पढ़ सकते हो?'

कुंदन को लगा, यहाँ रहने लायक जैसे वह नहीं है। वह जैसे यहाँ पर इन लोगों का मेहमान है। यहाँ विरले ही पुरुष की हाँक-पुकार सुनाई पड़ती। मंदिर का घंटा, गाय-बैल और गोशाला। बड़े-बड़े फल के पेड़, फूल के पौधे। हिरन चरता हुआ घूमता रहता। यहाँ जांता चलने की घर-घर आवाज आती। माली का लड़का गाय के लिये पुआल काटता, घस घस। किसान, दास-दासी, इन लोगों को सत्तू, गुड़, आम, नाश्ते में दिया जाता है। गुड़ के गमले पर बर्रे उड़तीं, बों-बों शब्द करके। चिड़ियाँ चहकतीं, कुत्ता भूँकता। पता नहीं पूजा और क्या-क्या व्रत कर दोनों छोटी बहनें दादी के पास बैठी रहतीं। सूत का फंदा फैलाकर धड़कते दिल से देखती रहतीं। इस फंदे में एक बार कौआ के आ बैठने पर वह सब कौआ के पाँव में ताँबे का कड़ा पहनायेंगी, नाक में चाँदी का नथ पहनायेंगी।

यहाँ सिर्फ शान्ति आराम और खुशियाँ। यहाँ पर दो-एक बूढ़ी दासी को छोड़कर कोई भी औरत नहीं। वहाँ कुंदन के दादा बाबूलाल और उसके जवान-जवान चेले-चाटी कुश्ती लड़ते, तेल मालिश करते, लाठी खेलते और छूरा खेलते। गंगा में उतरकर तैरते। पीठ सीधी कर बाबूलाल बैठता, जीवन में कभी भी उठंगकर वह नहीं बैठा। वह भवानी का सेवक है, भवानी की वह पूजा करता। बीच-बीच में गीता

पाठ सुनता। औरतों की तरफ नजर नहीं उठाता। किसी शागिर्द के बदमाशी करने पर तमाचा मारता। डाँट कर बोलता। मोटी-मोटी गरम रोटी, अरहर की दाल, घी और मिर्च के साथ खा लेता। गोशाले में गेहुँअन साँप निकलने पर पूँछ पकड़ कर घुमा-घुमा कर बिलकुल निकम्मा बनाकर फेंक देता बाबूलाल।

ठहाका मारकर हँसता, भारी गले से बोलता, रास्ते पर चलते-चलते दोनों ओर के लोगों का नमस्ते लेता चलता।

'कौन, अरे वह कौन?'

'बाबूलाल।'

'आह, ऐसा न होने पर भी क्या जीवन? इस तरह सभी का नमस्ते न लेने से भी क्या चल सकता है?'

हठात् कुंदन दौड़ पड़ा। अंदर जाकर चिल्लाता रहा, 'नहीं जानता, मैं कुछ नहीं जानता। मैं दादा के पास जाऊँगा। मेरे दादा मर जायेंगे।'

उसकी दादी नाराज हो जातीं। भाई-बहन भी हैरान होकर देखते रहते। कुंदन के मन में होता, उसकी माँ शायद बाधा दें।

उसकी माँ कुछ नहीं बोलती। उनकी माँ हँसती और तीखी व जलती निगाहों से उसकी दादी की ओर देखकर कहतीं, 'माता जी, मेरे बेटे को पराया बना दिया, उसकी सजा क्या भगवान नहीं देंगे?'

इसके बाद कुंदन से कहतीं, 'कुंदन तुम्हारा दादा बचेगा? किस तरह तुम्हारा दादा बच सकता है? यह जानते हो, तुम्हें एक काम करना होगा। तुम्हारे दादा के कमरे में जो एक सिंदूर लगायी हुई टोकरी है, उसे देखा है?'

'हाँ, हाँ। दादा की माँ भवानी।'

'उसे गंगा में फेंक आ सकते हो?'

'क्या कहा?'

'उसे गंगा में फेंक दो। उस पूजा के कमरे को तोड़ दो! उस घर

को तुड़वा कर मिट्टी में मिला देने को कहो। अपने दादा से गंगा घाट पर नहीं, विश्वनाथ जी की गली में बैठने को कहो। जिससे सभी को बुला-बुला कर कहे, मैं महापापी हूँ। मैंने अपने एकलौते........।'

दादी भागी आतीं। बहू का मुँह हाथ से बंद कर देतीं। कुंदन की माँ सिर झटक कर गिर पड़तीं। दासी आकर पानी छिड़कती। हवा करती। दोनों बहनें रोती रहतीं।

गोपाल बोलता, 'माँ को ऐसा ही हुआ करता है। बीच-बीच में होता रहता है।'

कुंदन उस दिन लौट आया। आने के समय उसकी माँ को होश आया। माँ धीरे-धीरे कहतीं, 'जानती हूँ, मैं जानती हूँ। यह दिआ भी यदि कोई बुझा दे तो उसका दादा बच जाएगा। इस दिया और इस टोकरी में ही पाप है।'

पाप है! कितनी भयानक बात! कुंदन दादा के पास जा बैठा। हाय, अब कोई आशा नहीं? एक बार सोचा, माँ की बात ही सुनूँ, बुझा दूँ इस दिये को। फिर मन में होता—नहीं, नहीं, शायद इसी दिये में बाबूलाल की आयु हो।

उस बार बाबूलाल बच गया।

छः

जब कुन्दन की उम्र सोलह वर्ष की थी, तब बाबूलाल ने उसे दीक्षा दी।

कुन्दन का कण्ठ भारी हो गया है, शरीर बलिष्ठ। रूखा स्वभाव, कम बातें करता और गँवार की तरह सोचता। क्या सोचता, यह तो वही जाने।

उस घर में वह नहीं जाता। जाना ही नहीं चाहता। उन लोगों से उसकी नहीं बनती। गोपाल पढ़ता लिखता है। उसका स्वभाव मीठा है। शान्त और नम्र। कुन्दन से वह डरता है।

कुन्दन इस घर में कभी-कभी ही आता है। केवल पर्व-त्योहार में। लौटने के समय उसकी दादी आकर खड़ी होती। कहतीं, 'अपने दादा से जाकर कहना, पूर्वी दालान में दो कमरे बनवाना जरूरी है।'

'कहूँगा।'

'कहना, पुरोहित ने खबर दी है। यशोदा और रेवती की शादी के लिये लड़का उन्होंने ठीक किया है।'

'यशोदा की शादी? रेवती तो अभी बिलकुल बच्ची है।'

'इसी उम्र में तुम्हारी माँ इस घर में आई थी।'

'जी, और क्या कहूँगा?'

'बोलना, इस बार चन्द्रग्रहण के दिन तुम्हारे दादा बाहर न निकलें।'

कहकर दादी रोती रहतीं। क्यों रोती हैं, यह कुन्दन नहीं समझ पाता। उसकी दादी, बेहद हसीन दादी, भौंहों के बीच का नीला गोदना कपाल पर चमकता रहता। आँखें बहुत बड़ी नहीं, लेकिन अभी भी जैसे आँखों की नजर में जादू मिला हुआ है। दादी क्यों रोती हैं, क्यों पूजा-पर्व में बाबूलाल को बाहर नहीं निकलने देना चाहतीं, कौन जानता है! कुन्दन बेचैनी-सी महसूस करता।

जाते-जाते वह लौट आता। यशोदा उसे बुलाती। मोटा शरीर, गोरा रंग, गोल-गोल आँखें, बहुत ही चंचल। नाक में नथ, कान में मकड़ी, केश सब इधर-उधर झूलते रहते।

यशोदा हमेशा कुछ न कुछ खाती रहती। बादाम, अचार, घी और छाछ, मलाई के लड्डू, बेसन की मठरी। उसके पास जाते ही कुन्दन को हींग की गंध लगती। यशोदा कोई तरकारी चाट रही है। बड़े भाई से कहती है, 'भैया, माँ तुम्हें बुलाती हैं।'

माँ बुलाती हैं। दिल में अजीब सी अनुभूति होती। गुस्सा, दुख, अभिमान, प्यार। माँ के पास वह सीधा नहीं जाता। वह बाबूलाल को देख नहीं सकती। कुन्दन को भी जैसे नहीं देख पाती। कुन्दन गोपाल की तरह उतना धीर और सहज नहीं। वैसी मीठी बातें बोलने वाला व नाजुक दिल वह नहीं है। वह तो कुन्दन है। बाबूलाल का पोता। कठोर और समर्थ, गँवार, रूखा-सूखा कुन्दन। घूँट पीकर कुन्दन खड़ा रहता है।

उसकी माँ पास आती है। सफेद पत्थर का कमरा, सफेद बिछावन, माँ का पहनावा भी सफेद ही। उसके कपाल पर हाथ रखकर माँ आशीर्वाद देती हैं। इसके बाद उसका हाथ उठा कर एक अँगूठी पहना देती हैं। कहती हैं, कवच-ताबीज तो तुम रक्खोगे नहीं, खो दोगे। इसमें देवता का प्रसादी-फूल है, इस खोखली चौदानी में।'

'यह किसलिये माँ ?'

'तुम्हारी उम्र हो रही है। किसी भी दिन हो सकता है कि तुम्हारा दादा तुम्हें साथ लेकर बाहर जाना चाहे। उस समय इस आशीर्वादी-फूल की तुम्हें जरूरत होगी।'

कुन्दन उस समय माँ को प्रणाम कर चला गया।

उस घर में पहुँचते ही बाबूलाल ने उससे आग्रह पूर्वक पूछा, 'क्यों रे, वहाँ सब अच्छा है ? तुम्हारी दादी, तुम्हारा दुलारा भाई, तुम्हारी बहन ?'

'जी !'

'वह सब भी मेरे बारे में कभी पूछताछ करते हैं ? तुम्हारी दादी पूछती हैं ?'

'नहीं।'

'जानता हूँ, नहीं पूछेगी, जानता हूँ।'

बाबूलाल ने भाँग का गिलास उठाकर मुँह से लगाया। बोला, 'जय बाबा महादेव। तुम पीते हो, इसलिये मैं भी पीता हूँ। बाबा दोष

न देना ।'

इसके बाद हँसा । हँसकर गम्भीर हो गया । भौंहें तन जाती हैं । कहा, 'बेटा मेरी खोज-खबर कोई नहीं लेता । मैं भी उन लोगों की खोज खबर नहीं लूँगा ।'

कुन्दन की पीठ पर मीठी-मीठी थपकियाँ देकर बोला, 'इस बार तुम्हें दीक्षा दूँगा, समय आ गया है ।'

बाबूलाल पास आ कर बोला, 'वे सब पुण्य करें । हम दोनों पाप ही करेंगे । तुम और मैं । इसके बाद एक दिन तुम्हारे हाथों ही मरूँगा । तुम्हारे हाथों मरूँगा, यही मेरी बहुत दिनों की इच्छा है ।'

दीक्षा देने के लिये चन्द्र ग्रहण का दिन निश्चित किया गया । उस बार पता नहीं, उसी समय कौन सा ऐसा एक योग पड़ा । काशी में लाखों-लाखों यात्री आ रहे हैं । ऊँट-गाड़ी, घोड़ा-गाड़ी, पालकी, हाथी, सभी आ रहे हैं, आते ही जा रहे हैं ।

सुदूर दक्षिण से तीर्थ करने के लिये पुण्यकामी लोग आते हैं । वे लोग सपरिवार आते हैं । आते हैं, हजार-हजार रुपये या हीरा-जवाहरात पहन कर । नगद रुपये, दान-ध्यान के लिये लाते हैं । नगद रुपया लेकर चलना-फिरना ठग, डाकू, लुटेरों सबों से निरापद नहीं ।

इसलिये वे सब कमर में सोने की चौड़ी पेटी, गले का मोटा हार और भी इसी तरह के सोने के जेवर पहन कर आते हैं ।

गया, काशी और त्रिवेणी—तीर्थों के पुण्यलाभ के वे सभी अभिलाषी हैं ।

बाबूलाल के आदमियों ने गया से खबर दी । खबर जबानी ही आई । चिट्ठी लेकर भी कितने ही यात्री आये । कौन-कौन शिकार के लायक हैं ।

काशी पहुँचते ही यात्रीगण सेठों की दूकानें खोजते । सुनार और

जौहरी की गद्दी पर जाकर गहने के बदले रुपये लेते। रुपये लेकर दान-ध्यान करते।

वे सब सुदूर दक्षिण के यात्री! महाराष्ट्र से जो आते हैं, वे लोग कुछ निरापद रहते हैं।

क्योंकि पेशवा साहब का परिवार वाराणसी में रहता है। बहुतेरे महाराष्ट्री अपने देश के आदमियों के घर ही मेहमान बनते।

लेकिन, मैसूर व कर्नाटक, तंजोर व कांचीपुर के यात्री अपने को बड़ा ही विवश व लाचार समझते। वे अपनी भाषा में समझा नहीं सकते, समझ भी नहीं सकते।

लाचार होकर वही लोग पंडों पर आश्रित होते। वे सोच भी नहीं सकते, समझ भी नहीं सकते कि गया में जिस निर्लोभी ब्राह्मण ने साधारण दक्षिणा लेकर ही उन लोगों को पिंड-दान, पितृ-तर्पण, राम-शिला, प्रेत-शिला और ब्रह्मयोनि दर्शन कराया है, और काशी में जिस पंडा ने आकर उन लोगों के पूर्वजों की जन्मपत्री एकदम प्रत्यक्ष खोलकर उन लोगों का विश्वास जीत लिया है—उन दोनों के बीच कोई सम्बन्ध है या हो सकता है।

भोले-भाले हृदय के वे लोग उन सबों का विश्वास कर लेते हैं।

इसके बाद उसी पंडा ने उन लोगों के रहने के लिये जगह भी ठीक कर दी। योग-स्नान के समय, इन लोगों की सभी चीजें हड़प लेने का तरीका एक बहुत बड़ा अभिनय है। त्रिवेणी और काशी में इसका प्रचलन अधिक है।

योग-स्नान के समय गंगा के बीच नौका ले जाकर पंडों के लोग कहते हैं, 'दान करो, तीर्थ स्थान में दान करो।'

पंडों के हाथों में वे रुपये दे देते हैं, सोने के जेवर भी दे देते हैं।

पंडे कहते हैं, 'रुपये नहीं चाहिये, गहने नहीं चाहिये। तुम्हारे प्राणों से भी प्यारा क्या है? तुम्हारे माता? पिता? पत्नी? संतान?'

आधे चाँद के आकार की गंगा। घाट-घाट पर बड़े-बड़े छाते झल-

मल करते हैं। प्रसन्न सूर्य किरणों में सैकड़ों घरों व मन्दिरों का गुम्बज, ध्वजा-पताका सभी जगमग कर रहे हैं। गंगा के हजारों-लाखों यात्रियों के काले सिर दिखाई पड़ रहे हैं। बड़े-बड़े राजाओं का रंगीन बजरा चल रहा है। नौका पर यात्री बीच गंगा में डुबकियाँ लगाने आते हैं।

देख-देख कर इन धार्मिक हृदय वालों का मन उमड़ आता है। वे कहते हैं, 'सब कुछ दे दिया। पिता, माता, पत्नी, संतान, सब को दान किया।'

परिवार के आदमी हैरान होकर देखते हैं। हँसकर पंडा उन्हें तसल्ली देता है। बोलता है, 'दान करने भर से ही क्या, हम उन्हें ले सकते हैं? बताओ, विश्वनाथ जी इन लोगों को लेकर क्या करेंगे?'

'तब फिर क्या करूँ?'

'उन लोगों को खरीद लो। जितना सोना है, जितने रुपये हैं, सब दे दो और इन्हें खरीद लो।'

तब वे लोग सब जेवर, जाने का सब खर्च-वर्च, सभी पंडा के हाथों दे देते हैं। पंडा के दलाल कहते हैं, 'घर वापस जाने के लिये ये रुपये लो। जो दिये हैं, उसके लिये चिन्ता न करो। समझ लो, आज के इस योग-स्नान का सब पुण्य तुम्हीं को मिल गया।'

वे सब मुग्ध होकर, डरी-डरी, हैरान निगाहों से देखते रहते हैं। इसके बाद किसी समय उन्हें घाट पर वापस लाया जाता है। कभी यदि यात्री गड़बड़ करते हैं तो इशारा मिलते ही बहुत सी नावें आकर भीड़ लगा लेती हैं। नावों में धक्के लगते हैं। लोग चिल्लाते रहते हैं। गंगा के ऊपर काली नावें डोलती रहती हैं।

दुर्घटना! दुर्घटना का कोई हिसाब नहीं। कौन मरा, किस तरह मरा, इसका कोई हिसाब नहीं रखता।

हिसाब रखता है, बाबूलाल। ऐसे समय में वह दस्तूरी लेता है। पंडे उसे रखने के लिये रुपये देते हैं। तीर्थयात्री देते हैं, जान के डर से। वह घर की छत पर आँख में दूरबीन लगाये खड़ा रहता है।

ही आप का पता दिया। यहाँ आकर देखता हूँ, आप जैसा आदमी दूसरा नहीं होगा।'

वह बहुत ही खुश है। एक बार कुन्दन को लेकर बाबूलाल की गद्दी पर गया। हीरा की अँगूठी और नथ बेचा। बोला, 'हीरा का दाम मैं जानता हूँ। इसलिये हीरा ले आया। बेचकर रुपये पाऊँगा। ऐसा नहीं करने से तीर्थ में दान-ध्यान क्यों कर करूँगा?'

गद्दी में सारी बातचीत शायद बाबूलाल ही कर चुका था।

कुन्दन को कोई कठिनाई नहीं हुई। युवक थोड़ा हँसकर बोलता है, 'जानता हूँ, रुपया-पैसा लाना मुश्किल है। सोना ही भला कितना लाऊँगा। इसलिये हीरा लाया हूँ।'

वह बातें करना बहुत पसन्द करता है। कुन्दन क्या उसके मुँह से हिन्दी सुनकर हैरान नहीं होता? दक्षिण में बिरले ही हिन्दी सीखते हैं। उसका मामा हैदराबाद में रहता है। लड़का वहाँ चार वर्ष रहा था। हिन्दी बोलने का कोई मौका मिलने पर वह छोड़ता न था। एक भाषा सीखने से कितनी सुविधा है। कौन जानता था, एक दिन काशी भी आना होगा और बातें करने का वह इतना सुन्दर मौका पायेगा।

'तुम मेरे छोटे भाई की तरह हो। भाई को भी माँ के पास छोड़ आया हूँ। तुम एक बार आओ। जानते हो, तैलंग स्वामी हम लोगों के यहाँ के ही हैं। हमारे यहाँ के आदमी आते-जाते हैं। उन लोगों के साथ ही जा सकोगे, आ भी सकोगे।'

वह कहता ही जाता है, 'तुम सोचते होगे, मुझे खट्टी इमली और मिर्चा खिलायेगा? अरे नहीं, नहीं। वह तुम्हारी सुनी हुई बात है। केवल एक बार आओ। दूध पिलाऊँगा, दही, घी सब खिलाऊँगा। कितना फल खाना चाहते हो? यहाँ तो नारियल के पेड़ नहीं। वहाँ कितने ही नारियल के पेड़ हैं। समुद्र तो देखा ही नहीं। मेरे घर से समुद्र भी केवल एक मील दूर है। हा, हा, शब्द हर समय सुनायी पड़ता रहता है।'

उसी रात बादल छँटे हुए आकाश में चाँद की चाँदनी बिखर गयी। खंडग्रास। जिस समय चाँद राहु से मुक्त होता है और लाखों आदमी गंगा में कूद पड़ते हैं। लाखों-लाखों गलों से 'जय बाबा विश्वनाथ', 'हरहर महादेव', 'जय गुरू नाम गुरू' सुनायी पड़ता है।

तेज हवा बह रही है। घाट-घाट पर काशी नरेश और घाट-पंडों ने रोशनी का इन्तजाम किया है। घाट के चबूतरे के दोनों ओर लोहे की अँगीठी में गुँथा हुआ मशाल जल रहा है। बीच-बीच में मशाल बुझ जाता है। लाह जलने की गंध उड़ती है।

हैरान हो कुन्दन देखता रहता है। यही जैसे सृष्टि का अंतिम दिन हो। आकाश की ओर नज़र उठाकर देखता है, छँटे हुए बादल, चाँद की चाँदनी, जैसे धुआँ मिले गुलाबी रंग की तरह दिखायी पड़ती है। कितने ही आदमी सिर डुबाते हैं, सिर निकालते हैं। कौन जानता है, वे सब के सब बाहर निकल पायेंगे या नहीं। असंख्य आदमियों के सिरों की काले रंग की एक भीड़। घाट की सीढ़ियों पर क्या फिसलन नहीं हुई ? कौन उन लोगों को खींचकर बाहर निकालेगा ?

बाबूलाल, कुन्दन, पंडा, नया आया हुआ परिवार, माँझी-मल्लाह सभी बीच गंगा में।

बहुत बड़ी नाव। नाव पर बैठकर वे सब देखते हैं। स्नान समाप्त। माँझी, मल्लाह सब हाथ पकड़कर झप-झप कर डुबाकर निकालते हैं। बूढ़े के माथे पर पीतल के लोटे का जल डाला जाता है।

युवक प्रसन्न आँखों से देखता है और पंडे से कहता है, 'कृपाकर यह दान लेकर मुझे धन्य कीजिये।'

हवा के थपेड़े से, नाव के डोलने से, उसकी बात कट-कट जाती है। युवक हँसता है। उसे बाबूलाल ने सिखाया है, यदि अच्छा पुण्य पाना चाहते हो तो अपनी प्यारी पत्नी, अपने पुत्र सब को दान करो। इसके बाद सोना की कीमत देकर खरीद भी लो।

वह पिता, पुत्र, पत्नी को दान करता है। कुन्दन को याद है,

लड़की जैसे लाचार निगाहों से पति की ओर देखती है, और फिर बाबूलाल की ओर देखती है।

बादल आ रहा है। बाबूलाल अभी बड़ा भयानक दिख रहा है। लगभग सत्तर वर्ष की उम्र। शरीर जैसे खरादा हुआ सफेद पत्थर हो। कमर में रेशम की लाल धोती। भींगी हुई लिपटी है। सिर पर ज्यादा बाल नहीं। नाव के फर्श पर बाबूलाल कमर पर हाथ रखकर खड़ा है। नाव उठती गिरती है। बाबूलाल पर जैसे एक भयानक ईश्वरीय शक्ति ने अधिकार जमा लिया है। कुन्दन डर कर सुनता है, वह जय भवानी, जय भवानी बोलता है।

युवक दान कर रहा है। रुपये देता है, मोहरें देता है। लेकिन पंडा हाथ फैलाये है। पंडा लालच भरी नजरों से उन लोगों के जेवर की तरफ देखता है। लड़की असहाय भाव से इधर देखती है, उधर देखती है। आह, अनजान शहर, अनजान गंगा, सभी अनजान लोग। वह बच्चे को छाती से लगाये रहती है।

युवक बिलकुल चुप है। वह बाबूलाल के मुँह की ओर देखता है। कुन्दन की छाती धक्-धक् करती है। उसका दादा कुछ बोलता क्यों नहीं ? युवक क्या बोल रहा है ? लेकिन ऐसा लगता है कि बूढ़ा समझ रहा है। वह पता नहीं क्या बोलता है। युवक तब छाती फाड़कर चिल्ला कर बोलता है, 'पिताजी पिताजी, सर्वनाश हो गया। हम लोग गुंडों के हाथ फँस गए हैं।'

गुंडा, मेरा दादा ? नहीं, नहीं ! गुंडा नहीं ! मेरा दादा गुंडा नहीं ! तुम लोग नहीं जानते। कुन्दन यही बोलना चाहता है। लेकिन माँझी, मल्लाह सब ने उन लोगों को पकड़ रखा है। सब गहने छीन रहे हैं। इस बच्चे की देह पर हाथ लगा दिया ! छूना नहीं, छूना नहीं। मैंने उसकी भाषा नहीं समझी थी, लेकिन वह मेरे पास आया था और लार लगी हुई लटलटाती नरम उँगलियों से मेरा मुँह छूकर पता नहीं क्या बोला था। इस लड़की का रंग मैला, शरीर दुबला-

पतला। वह जैसे सारा दिन डरी हुई, आरजू भरी बेबस नजरों से देखती रही थी। इस बूढ़े का हाथ वह धो देती थी, मुझे देखकर हँसती थी।

सब छीन कर वे सब परिवार को मुफलिस बना रहे हैं। लेकिन चाँदनी पड़कर वह क्या झिलमलाने लगता है। वधू के गले का मंगल सूत्र ! सोने का सप्त सूत्र बीच-बीच में मूँगा व मुक्ता की चकती। वधू गले पर हाथ रखती है, डरती है। वह इधर-उधर देखती है। कुन्दन जानता है, यह उसका सौभाग्य-चिन्ह है।

सौभाग्य चिह्न ? मेरा मिट गया—अचानक अपनी माँ के गले की वह चीत्कार जैसे कुंदन सुन पाता है। कुंदन कूद जाना चाहता है। वह बाबूलाल की ओर देख कर कहता है, 'आप आदमी नहीं। आप राक्षस हैं।'

वह मल्लाह के हाथ पर डांड़ से बलपूर्वक मारता है। मल्लाह दर्द से चिल्लाता है। बाबूलाल उस समय हँसता है। भयानक हँसी, ऊँचे गले की हँसी।

'अरे नादान, तुम्हें भवानी-मन्त्र की दीक्षा दे रहा हूँ, तुम बाधा देते हो ?'

बाबूलाल उछल पड़ता है।

नाव बड़े जोरों से डोल जाती है। डोले। बाबूलाल मंगल-सूत्र खींच लेता है। कुंदन बच्चे को पकड़ने बढ़ता है। लेकिन नाव उलट गयी। उन लोगों ने ही उलट दी। चारों तरफ की सभी नावें तो बाबूलाल की ही हैं। युवक किसे बचाये ? पिता को, पत्नी को, पुत्र को ?

सिर उठाने का भी मौका वे सब नहीं पाते। नाव पर नाव की भीड़ लगाकर उन लोगों को सिर नहीं उठाने देते। माँझी वहीं डाँड़ चलाते हैं। यदि कोई सिर उठायेगा तो सिर फट जायेगा।

कुन्दन बाबूलाल को मारता है।

चिल्ला उठता है वह, गाली देता है। इसके बाद नाव ही नाव पर पैर रख कर उस तरफ पानी में कूद कर, पार होकर, बालू के मैदान में जा पहुँचता है।

वह भागता रहता है। लेकिन बाबूलाल भला उसे छोड़ेगा ही क्यों? बाबूलाल भी दौड़ता है। मल्लाह जैसे कुछ बोलते हैं। कुंदन सुन पाता है, बाबूलाल बोलता है, 'चुप, चुप रहो साले सब! मैं तो अपने पोते के पास जाता हूँ।'

फिर बाबूलाल उसे पकड़ लेता है। उसे बालू के ऊपर गिरा देता है। दोनों हाँफते हैं। कुंदन रोता है और बाबूलाल फस-फस कर साँस छोड़ता है। बाबूलाल बातें करता है। फटा गला, भारी गला। यहाँ इस गले से दया की विनती!

'हाँ, तुमने मेरा परिचय पाया। तुमको, सिर्फ तुमको ही मैंने चुन लिया है। पाप अकेले-अकेले नहीं किया जाता है रे! पाप करने के लिये भी शागिर्द चाहिये। वे सब नहीं समझेंगे। एक शागिर्द चाहता हूँ, मैं। बाप का पेशा, बेटा करेगा, यही तो नियम है। तुम्हारा बाप बेईमान। इसीलिये मैंने तुम्हें चुन लिया है, रे कुंदन! तुम्हें चुन लिया है।

'मेरा बाप था ठग। भवानी ही हमारी देवी हैं। लेकिन अब वह पेशा नहीं चलता। देखो, मैं भी कम भला नहीं हूँ। मैं बाबूलाल, एकमात्र बाबूलाल! कुंदन मुझसे नफरत करोगे तो करो। फिर भी मुझे तुम छोड़ नहीं सकते।'

'क्या कहते हो?' कुंदन ने मुँह खोला।

यह सूरज उग आया। यह साफ आकाश। बालू के मैदान में दोनों बैठे हैं। बाबूलाल और उसका पोता। दोनों की देह से बालू झड़ रही है। बाबूलाल हँसता है। आनंद की हँसी, जीत की हँसी।

'क्या कहता हूँ? मैं कहता हूँ कि अपनी दादी के पास जाओ,

अपनी माँ के पास जाओ। वे तुम्हें किस तरह दोनों हाथ बढ़ा कर छाती से चिपका लेती हैं, जाओ देख आओ। वे सब जो पुण्यवती हैं।'

बाबूलालाल थूक फेंकता है। मुँह टेढ़ा करके बोलता है, 'पुण्य-वती! मेरा पैसा तुम सब नहीं खाते? नहीं खा सकते?'

कुन्दन बोलता है, 'इससे उन्हें पाप क्यों होगा? तुम्हारा फर्ज है, उनका पालन पोषण करना।'

बाबूलाल ने कहा, 'पाप होगा। रत्नाकर की पत्नी-पुत्र को जब पाप नहीं लगा तब शायद उन लोगों को भी पाप नहीं लगेगा। लेकिन तुम?'

कुंदन का हाथ वह झट से पकड़ लेता है। कहता है, 'कुंदन मेरी तुम भक्ति करते थे। देखो, अपना असली परिचय तुम्हें मैंने अपनी इच्छा से ही दिया। भक्ति तोड़ दी? भक्ति अधिक दिनों तक नहीं टिकती। तुम्हें पाप से मैंने बाँध लिया है। अब तुम मुझे नहीं छोड़ सकोगे।'

कुंदन लम्बी साँस खींचता है।

यह वह जानता है। अब कभी वह उन लोगों का अपना आदमी नहीं हो सकेगा। सफेद पत्थर के कमरे में, सफेद धोती पहनकर दिआ-जलाये जहाँ एक स्त्री बैठी रहती है। छोटी-छोटी दो लड़कियाँ जहाँ फूल तोड़ती हैं, कड़ा बजाती हुई घूमती फिरती हैं, मंदिर का घंटा, चिरंजीलाल की स्मृति की प्याऊ, वह अब उस संसार में नहीं जा सकेगा।

उसके मन की बात शायद बाबूलाल समझता है। बाबूलाल ने शायद सच ही दैवी शक्ति पाई है। बाबूलाल कहता है, 'इसके बाद आदमी पर और विश्वास नहीं कर सकोगे। छोटी उम्र में ही विश्वास तोड़ देना अच्छा है। फिर विश्वास नहीं आता। कुन्दन तुम्हारा जो काम है, उसमें जितना ज्यादा अविश्वासी बनोगे, उतना ही अच्छा होगा।'

बहुत देर बाद दोनों गंगा पार करके नाव को केदारघाट पर बाँधते हैं, और सीढ़ियाँ चढ़ते रहते हैं।

बहुतेरी सीढ़ियाँ। सीढ़ी पर सीढ़ी, और भी सीढ़ी। एक वृद्ध साधू उतर रहे हैं। बोलते हैं, 'बड़ा पाप, बड़ा पाप। पाप धो दे माँ, धो दे।'

वही बात कुन्दन को याद आती है। और याद आती है, एक दो बंदरंग, घायल लाश वह रही थीं। घाट पर नहाने वाली औरतें बताती हैं, 'कल बहुत आदमी मरे हैं, बहन! घाट के पंडे सब हिसाब रखते हैं।'

सात

कुछ दिन बाद ही यशोदा और रेवती की शादी हो गयी।

बड़ी धूमधाम हुई। पटाखे छोड़े गये, छछूँदर जलाये गये, हवाई आतिशबाजी छोड़ी गयी। वर को हाथी पर बैठाकर शोभा-यात्रा निकाली गयी। संभवतः उसी समय कुन्दन की माँ समझ गयीं; लड़के ने शायद कोई पेशा पकड़ा है। वह कुछ नहीं बोलीं लेकिन कुन्दन को पास बुला कर बोलीं, 'कुन्दन तुम मुझे एक वचन दोगे?'

'क्या माँ?'

'कहो, तुम शादी नहीं करोगे?'

कुन्दन चुप रहा। विवाह के घर में बहुत से आदमी। उसकी उम्र होगी, यही करीब बीस वर्ष। बाबूलाल इस घर में कभी नहीं आया। सारी व्यवस्था कुन्दन को ही करनी पड़ी है। कुन्दन का चेहरा गंभीर और उदास। बिरले ही वह हँसता है। इस समय वह परेशान हो उठा। वह वहाँ से हट जाना चाहता है।

उसकी माँ कहती हैं, 'तुम्हारी बीवी बन कर जो आएगी, जल-भुन कर मरेगी। तुम शादी मत करना।'

कुन्दन एक लंबी साँस खींचकर उठ जाता है । बहुत काम है उसे, काम का कोई अंत नहीं । दूसरी जगहों से सगे-संबंधी सब आये हैं। उन लोगों का आदर सत्कार करना आवश्यक है । गोपाल सब हिसाब रखता है । गोपाल बिलकुल सफेद धोती कमीज पहन कर घूमता फिरता है । कुन्दन कहता, 'मैं सबके सामने जाना नहीं चाहता । तुम मुझे बता देना, कब किसे क्या देना होगा ।'

एक छोटे से कमरे में लोहे का सन्दूक । उसमें रुपयों से भरी हुई थैलियाँ । पीतल के परात में जेवर । उस कमरे की चाभी कुन्दन के पास रहती । एक बार वह दादा के सामने जा खड़ा हुआ । बोला, 'अब होम पूजा कर लेने को कहो । यशोदा और रेवती पसीने से तर-बतर हो गयी हैं ।'

हठात् गोपाल ने आकर उसे बुलाया । डरा हुआ और उदास चेहरा । गोपाल उसे एक तरफ बुलाकर ले गया । बोला, 'जल्दी, एक बार मेरे साथ चलो ।'

'क्यों ?'

'दादा जी आये हैं, तुम्हें बुला रहे हैं ।'

'दादा ?'

कुन्दन भाग कर गया । घर के पीछे, आम के बगीचे के अँधेरे में।

चुपचाप हाथ में छड़ी लिये बाबूलाल खड़ा था । उसके पीछे था एक नौकर । गोपाल को वहाँ से हटा कर बाबूलाल ने कहा, 'चले जाओ भीतर । सुन लो । मेरे पचास आदमी हैं । वे सब डेवढ़ी पर रहेंगे । तुम सामने नहीं जाना । दो आदमी भेज दिया है, अंदर के दरवाजे पर रहेंगे ।'

कुन्दन को पास बुलाकर उसने कहा, 'कमीज उतारो !'

'लेकिन क्यों ? आप क्यों आये ?' कुन्दन जानता था कि दादा नहीं आयेंगे । बाबूलाल बोला, 'नहबतलाल के बाप ने गुंडा भेजा है । खबर मिलते ही मैं आया । वे सब तुम्हें मारना चाहेंगे । दोनों बेटियों

को विधवा बनाना चाहेंगे। मैं उन लोगों को पहचानता हूँ। छिप कर खून करने में उन लोगों का मुकाबला नहीं। लो यह पहनो।'

कुन्दन लोहे का कवच छाती पर बाँधता है। उसके ऊपर कमीज पहनता है। वह चिन्तित हो जाता है। नहबतलाल रिश्ते में उसका मामा है। अस्सी वर्षों से उन लोगों के बीच झगड़ा है। नहबतलाल के ताऊ की लड़की है उसकी माँ। चिरंजीलाल और नहबत की बहन में, विवाह बंधन में बँधनें के पहले से ही एक शुभ संकल्प था।

पुश्त-दर-पुश्त चला आने वाला झगड़ा बड़ा भयानक होता है। दोनों वंशों में जब तक एक भी पुरुष जिंदा रहता है, तब तक खून खराबी नहीं मिटती। कभी-कभी तो झगड़ा इतना भयानक हो उठता है कि किसी एक वंश की बुनियाद हमेशा के लिये संसार से मिट जाती है।

कुछ दिनों तक चिरंजीलाल और नहबतलाल में बड़ा मेल-जोल था। इसके बाद बाबूलाल प्रस्ताव रखता है, एक औरत का खरीदा हुआ गुलाम बन कर रहना, बड़ी शर्म की बात है। चिरंजीलाल नहबत की सगी बहन से शादी करे। उस बहू का घमण्ड कम हो जाये। नहबत ने बाबूलाल को जोर से पकड़ा।

वह शादी नहीं हुई। चिरंजी बोला था, 'छिः छिः, एक पत्नी रहने पर दूसरी शादी करना बड़ा पाप है।'

बाबूलाल नाराज होकर बोला, 'वे रामचंद्र हैं। वे एक ही पत्नी लेकर रहना चाहते हैं।'

वह शादी नहीं हुई थी। नहबत के बाप ने विश्वास नहीं किया कि चिरंजी राजी नहीं है। उसने बाबूलाल से कहा, 'देखो, इसका नतीजा अच्छा नहीं होगा।'

फिर लड़ाई-झगड़ा शुरू हो गया। चिरंजी के मरने के बाद ही एक-न-एक दिन नहबतलाल का खून करना है। बाबूलाल घमंड के साथ बोला, 'जिसने खून किया है, उसने अच्छा किया। संसार से यह

कीड़ा-मकोड़ा, जितनी जल्द खत्म हो जाय उतना ही अच्छा है।' इन दिनों वह कुन्दन से कहा करता, 'गणेशप्रसाद, नहवत का बेटा है। रिश्ते में तुम्हारा ममेरा भाई। देखना, वे सब तुम्हें मार डालने की कोशिश करेंगे।'

आज वही दिन है।

ऐसा अच्छा मौका फिर कब मिलेगा। घर में लोग आते-जाते हैं। भीड़ और कोलाहल। आतिशबाजी की आवाज। इतना शोरगुल, इतनी भीड़। कुन्दन को यदि कोई मारना चाहे तो आसानी से मार सकता है।

कुन्दन के रग-रग में खून बह रहा है। दिन भर उसने कुछ नहीं खाया। अभी जैसे यह सब बातें याद नहीं रहीं। गोपाल को बुलाकर वह विपत्ति के सम्बन्ध में होशियार कर देता है। एक बार यशोदा के पास जा खड़ा होता है। लड़की खूब सजी-धजी है। उसे तकलीफ होती है। दोनों बहनें कितनी दूर चली जायेंगी। फैजाबाद और जौनपुर। यशोदा का होने वाला ससुर शायद उसे बहुत कम आने देगा। कुन्दन ने देखा, यशोदा और रेवती की देह पर हीरा, मुक्ता झलमल कर रहे हैं। वह अपनी दादी को बुलाता है। धीमी आवाज में कहता है, 'इनके ही पास रहो।'

उसकी दादी समझती है। उसकी माँ भी समझती है। वे होशियार होती हैं। कुन्दन बाहर चला जाता है। नौशा आये। हाथी, घोड़ा, पालकी। हवाई आतिशबाजी छूटी। बहुत बड़ी कालीन। दोनों नौशा और उनके पिता को बिठाकर कुन्दन दरवाजे पर पहरा रखता है। ऐसे ही समय गणेशीप्रसाद आया। कुन्दन का ही हमउम्र। मोम लगाकर उमेठी हुई मूँछें। एकदम गोरा रंग, लंबा और छरहरा। गणेशी अकेले नहीं आया है। उसके संगी-साथी भी आये हैं। गणेशी बोला, 'यही तो रहे कुन्दन भाई।'

उसने हाथ बढ़ाया। कुन्दन को आलिंगन में भर लेना चाहता

है। कुन्दन डर का अनुभव करता है। आलिंगन कर चिपटाए रहा। छुरा मारना और फिर छुरा दिखाकर खुद निकल जाना, यह बड़ी मामूली बात है उसके लिए। 'क्यों कुन्दन ? पास आओ !'—गणेशी हँसता है।

कुन्दन ने गहरी साँस छोड़ी। इसके बाद वह आगे बढ़ आया। नहीं, आगे-पीछे, पीठ पर कोई भी नहीं। उसके अपने आदमी भी वहाँ नहीं थे। मरना है, तो अभी ही मरूँगा। गणेशी को यह कहने नहीं दूँगा कि कुन्दन कापुरुष है। घर का मालिक होकर मेहमानों के साथ गले नहीं मिलता। कुन्दन ऐसी भद्दी बात कहने का मौका नहीं देगा।

वह गणेशी के कंधे पर हाथ रखता है और हँसता है। उसकी पेशानी पर पसीना ! वह हँसता है और बोलता है, 'मेरा कितना सौभाग्य है ! आओ, आओ !'

'कुन्दन ! हट जाओ !'

कुन्दन चमक उठता है। चमक उठता है, गणेशी भी। गणेशी साँप की तरह फूँफकार उठता है।

'अच्छा !'

सभी अलग हो जाते हैं, जगह कर देते हैं। बाबूलाल आ रहा है, उसके पीछे कम से कम पचास आदमी। बाबूलाल के पैरों में नागरा, सिर पर रेशमी पगड़ी। सब हैरान हुए, देखने के लिए आगे आये। बाबूलाल आयेगा, यह किसे पता था ? कुन्दन नहीं जानता था कि दादा सामने आयेंगे। बाबूलाल कहता है, 'ऐ, इत्र लाओ, गुलाब जल लाओ, माला दो !' वह आलिंगन करता है।

वह गणेशी को हाथ पकड़ कर ले जाता है। वह बैठाता है। वह भीतर आता है। गंभीर गमगमाती आवाज में बोलता है, 'इतनी हँसी किस बात की है, रे ? नौशा व बारातियों को पान दो, इत्र-गुलाब दो।'

दाई-नौकर भाग-दौड़ करते हैं। सभी डर जाते हैं। छोटी-

छोटी बातों को फुसफुसा कर एक कान से दूसरे कान में खबर फैलाते हैं। बाबूलाल आया है। चिरंजी की मृत्यु के बारह-तेरह वर्ष बाद पहली बार इस घर में पाँव रखा है।

बाबूलाल ने कुछ नहीं किया।

वह आया है, सिर्फ यही खबर फैला दी। पत्नी व पतोहू से बात-चीत भी नहीं की। पोतियों से बोला, 'यह क्या ? तुम्हारी दादी ने तुम लोगों को ठग लिया। यह देखो, मैं तुम लोगों के लिये क्या लाया हूँ ?'

उन लोगों के गले में उसने नव-रत्न का सात लड़ियों का हार पहना दिया। बोला, 'पोती, दामाद को वश में करके रखना, समझी ? रेवती तुम तो पढ़े-लिखे घर में जा रही हो। वहाँ तो सभी फारसी पढ़ते हैं।'

यशोदा से बोला, 'तुम्हारे ससुर के पास, सुना है, वृन्दावन के नंदराजा की तरह गाय भैंसें हैं ? मुझे एक गाय भेज देना। दूध पीऊँगा और तुम्हारे ससुर का नाम लूँगा।'

इसके बाद जैसे पल भर में ही सब सहज हो गया।

कुन्दन के दिल से बेचैनी का बोझ उतर गया। मेहमानों की आव-भगत, आदर-सत्कार में कुछ कमी नहीं रक्खी। बाबूलाल ने उससे सिर्फ एक बार कहा, 'सभी चले जायेंगे, उसके बाद हम और तुम खायेंगे। अभी कुछ भी मत खाना।'

सब कुछ हुआ। एक बार कुन्दन पीछे वाले कमरा में गया। इस कमरे में इतने दिनों से यशोदा और रेवती रहती थीं। अब कोई नहीं रहेगा।

कुन्दन बिछावन पर बैठा। आघात के कारण उदास है। बहनों की शादी की सभी जिम्मेदारी उसी ने ली है। उसकी माँ ने एक बार पूछा तक नहीं कि उसने खाया है या नहीं! फिर भी वह जानता है, माँ के एक बार पूछने से ही उसे कितनी शान्ति मिलती।

दादा को वह आँखों फूटी भी नहीं देखना चाहता। लेकिन फिर भी उसी आदमी के हाथों उसका जीवन बँधा हुआ है, आज एक बहुत बड़ी दुर्घटना हो सकती थी। दादा ने ही उसे आकर शान्ति दी।

कुन्दन सोचता रहता है। माँ ने कहा है, तुम शादी नहीं करना। गुंडा और हत्यारे पूत से माँ घृणा करती है। दादी घृणा करती है। अच्छा, बहुत अच्छा। लेकिन फिर भी गुंडेबाजी और बदमाशी के रुपये वे सब बिना किसी सोच-विचार के ले सकती हैं। एक समय कुन्दन भी दादा को प्यार करता था। 'मरा-मरा' कहकर राम-राम सीखने की बात झूठ है। उसका दादा उसके पास, सामने अच्छा बने रहने का ढोंग करता था। ढोंग करते-करते भी एक दिन अच्छा हो सकता था।

दादा ने वैसा नहीं किया। शायद दादा यह नहीं चाहता। कहते हैं, 'अरे मैं खूनी हूँ,.मैं गुंडा हूँ। मैं अच्छा होने का ढोंग करना नहीं चाहता।'

कुन्दन के दिल का सब प्यार उसने अपने ही हाथों मिटा दिया। वे दोनों एक अद्भुत नाग-पाश में बँधे हैं।

कुन्दन अपने भाई बहन, दादी सबसे अलग-अलग रहता है। क्या जरूरत है? गोपाल पढ़े-लिखे, माँ व दादी पूजा अर्चना करें। वह बाबूलाल की तरह उन लोगों का भार उठाये चलेगा। हमेशा।

इससे क्या उन लोगों का वीतराग भी सहना पड़ेगा? माँ उससे ऐसा क्यों करती है? कुन्दन को शादी करने नहीं देंगी। कोई अपना स्नेही आदमी न रहने से क्या कोई बचता है?

कुन्दन को ऐसा लगा जैसे सब मिलकर उसके ऊपर एक बोझ से लद गए हैं।

'दादा!'

कुन्दन ने आँखें उठायीं। बाहर का शोरगुल कम हो गया है। वह बड़ी देर से बैठा हुआ है। वह बोला, 'यशोदा ....?'

यशोदा पास आयी। थोड़ा आगा-पीछा करके बोली, 'सबने खा लिया है। तुम खाओगे नहीं? गोपाल तुम्हें खोज रहा था।'

'वह कहाँ हैं?'

'उसने खा लिया है।'

'तुम चली क्यों आयी?'

यशोदा बोली, 'तुम भी चलो, माँ बुला रही हैं।'

'माँ बुला रही हैं?'

'हाँ, थोड़ी देर पहले दादा नहाने गये हैं। मैंने कहा, भैया ने कुछ खाया नहीं है।'

'तुमने किस तरह जाना?'

इतने दिनों तक कभी भी कुन्दन ने यशोदा के साथ इतनी बातें नहीं की थीं। फर्श पर अँगूठा धँसा यशोदा बोली, 'जानती हूँ। तुम्हारा तो खाने-पीने का नियम है। यहाँ किसने तुम्हारा सब कुछ कर दिया? कब खाया?

तुम क्या सबके सामने खाते हो?'

कुन्दन अवाक् और मुग्ध। उसका गला जैसे अटक जाता है। वह देखता रहता है। यशोदा को वह लड़कपन में प्यार करता था। यशोदा मोटी, एक लोभी, अच्छी लड़की है। स्त्रियाँ इतना समझती हैं। शायद स्त्रियों की ज्ञान-बुद्धि बहुत जल्द बढ़ती है।

यशोदा बोली, 'मैं सब कुछ समझ सकती हूँ। माँ बात-बात में बेहोश होती हैं, नाराज होती हैं। दादी सब काम नहीं कर सकतीं। रेवती बहुत बनाव-सिंगार लेकर पड़ी रहती है। मैं ही तो सब कुछ देखती हूँ। जानते हो, गायों को कष्ट होगा। मैं ही उनकी देख-भाल करती थी।'

उसने कुन्दन को उठाया।

कुन्दन को वह पिछला दरवाजा खोलकर ले गयी। नौकर को बुलाया। एक आदमी ने पानी खींच दिया। कुन्दन ने स्नान किया।

नहाने के पहले उसने लोहे का कवच शरीर से उतारा। यशोदा ने यह देखा। बच्चे जैसी उसकी आँखें चकमक करने लगीं। कुन्दन हँसता है। नहाता है। देह पोंछकर, एक साफ कपड़ा पहनकर, चादर ओढ़े कमरे में आता है।

बाबूलाल बैठा हुआ है। सामने सफेद पत्थर की थाल और तरह-तरह का भोजन पदार्थ। कुन्दन को देखकर वह भौंहें तानता है। बोलता है, 'क्या रात नहीं हुई ?

कुन्दन कमरे में घुसता है।

उसकी माँ बैठी हुई है। चाँदी की थाल। तरह-तरह की मिठाईयाँ कुन्दन थाल उठाकर यशोदा के सामने करता है, बिना किसी विरोध के यशोदा एक कलाकंद उठा लेती है। माँ थकी हुई है। रोने से आँखें सूज गयी हैं। मुँह पर कपड़ा है। यशोदा बोली, 'माँ, आप बीच-बीच में भैया को बुलाया तो करेंगी न ?'

माँ ने एक लम्बी साँस छोड़ी। बोली, 'रेवती कहाँ है ?'

पता चला, रेवती सो गयी है। यशोदा चुपचाप खाती है। कुन्दन के थाल से वह और भी फल और मिठाई लेती है। नींद से आँखें ढुलमुला रही हैं, फिर भी वह खाती रहती है। कुन्दन को अचानक याद आती है, ये दोनों बहनें जैसे निरी बच्ची हैं और यह जैसे उनकी गुड़िया का ब्याह है।

वह माँ से बोला, 'जाओ। तुम जाकर आराम करो। रात तो अब ज्यादा नहीं रही।

वह बाबूलाल के पास जाकर बैठता है और आगामी कल के उत्सव के लिये हिसाब-किताब करता है। सुबह से फिर बहुत काम-धंधा है। बाबूलाल बोला, 'मैं रहूँगा। मेरे आदमी साथ जायेंगे। जौनपुर जायेंगे, फैजाबाद जायेंगे। मेरे यहाँ नहीं रहने से वे सब फिर आयेंगे। इस गणेशी प्रसाद को मैं देख नहीं सकता। उसका बाप था, गुस्सावर, गंवार। इसका खून साँप की तरह ठंडा है।'

इसके बाद दोनों खुले आँगन में चारपाई बिछाकर सो रहते हैं।

.आठ

कुन्दन जब पचीसवें वर्ष में था तभी उसका दादा मर गया।

इससे पहले ही गोपाल की शादी हो चुकी थी। बाबूलाल खुद ही खोज खबर लाता है। बोला, 'यह लड़की शान्त है, ठंडी है। इस लड़की के साथ गोपाल फबेगा। कुन्दन के लिए भी एक ऐसी लड़की चाहिये जो उसे वश में रखेगी। तेज लड़की, भली लड़की।' कुन्दन यह बात सुन कर हँसता है।

कहता, 'आप शायद मरना नहीं चाहते हैं ? आपकी क्या इच्छा है, गुंडा का बेटा गुंडा हो और आप अमर होकर बैठे रहें ? लोग उँगली उठा कर कहेंगे, इस बच्चे का बाप कुन्दन है, बाबूलाल का पोता !'

बाबूलाल को दुख होता। कहता, 'तब क्या तुम अकेले रहोगे ?'

'नहीं, नहीं, शादी मैं नहीं करूँगा। जिससे शादी करूँगा, वह सोचेगी, मुझे प्यार करने के लिये वह बाध्य है। उसी समय उसके मन में नफरत पैदा होगी।'

'तब क्या करोगे ?'

'कुछ भी नहीं करूँगा। अकेले रहूँगा।'

गोपाल की शादी हुई। फिर वही धूमधाम।

आतिशबाजी हुई, हाथी की पीठ पर हौदा कसा गया। राजमहल से हाथी किराए पर लाया गया। यशोदा भी विवाह में आयी।

वह तो और भी मोटी-तगड़ी हो गयी है। गोद में एक बच्चा भी है। कुन्दन को इस बार उसने 'आप' कहा। 'आप भी अब अपनी शादी कीजिये।'

रेवती को ससुराल वालों ने नहीं आने दिया था। यशोदा को भी फिर दुबारा नहीं आने दिया। यशोदा इसके और कुछ दिनों बाद ही एक और संतान पैदा करके मर गई। उसकी मृत्यु की खबर पाकर कुन्दन को बहुत दुःख हुआ। संभवतः परिवार में एक यही उसके लिये ठहरने की जगह थी।

पोते के विवाह की धूमधाम का धक्का बाबूलाल नहीं सम्भाल सका। फिर अस्वस्थ हो गया।

इस बार कोई रोग-बुखार नहीं था। एक दिन वह यों ही उठ न सका और बोला, 'सिर चकरा रहा है।'

फिर ऊपर वाले कमरे में बत्ती जली, फिर पालकी पर चढ़ कर कुन्दन की दादी आयी। इस बार सभी कुन्दन से पूछते हैं।

'क्या करना होगा, किस वैद्य को बुलाना होगा?'

बाबूलाल बोला, 'कोई साला इस कमरे में नहीं घुस सकता।'

कुन्दन की दादी फिर एक सफेद साँड़ और पुरोहित की खोज में मशगूल हुईं। बाबूलाल बोला, 'जिसकी इच्छा हो, साँड़ की पूँछ पकड़ कर स्वर्ग जाये। मेरे पास कुन्दन बैठा रहे। कुन्दन के साथ ही मेरी बात है।'

सभी बाहर निकल गये।

बाबूलाल बोला, 'तुमसे इतनी बार कहा, फिर भी तुमने मुझे नहीं मारा। तुम्हारे मार देने से मैं स्वर्ग चला जाता।'

मृत्युशय्या पर ऐसी बात क्यों? कुन्दन के मन में आया कि वह जैसे इतने दिनों बाद समझ रहा है, यह बात सिर्फ मजाक नहीं। बाबूलाल बोला, 'कुन्दन कहाँ क्या रखा गया है, तुम सब जानते हो। जो नहीं जानते, वह तुम्हें बताना चाहता हूँ। पास जाओ।'

कुन्दन पास खिसक आया।

बूढ़ा, सिकुड़ा हुआ मुँह, परेशान व भयानक निगाह, मुँह से कितनी तेज बदबू! बाबूलाल बोला, 'सुनो मुझे ऐसा लगता है, मेरे

मरने पर तुम दोनों वक्त मुझे गालियाँ देना। हूँ ! जानते हो ? अन्धे गुस्से, अन्धी जिद के कारण मैंने तुम्हारे ऊपर अन्याय किया है। क्या किया है, तुम जानते हो ?

'नहीं।' कुन्दन की आवाज में कोई भाव नहीं था।

अचानक बाबूलाल काँपने लगा। बड़बड़ा कर बोलता रहा, 'मुझे साहस नहीं हो रहा है। हे भगवान, मुझे साहस नहीं हो रहा है।'

उसका गला भर आया।

तब कुन्दन ने उसकी बात नहीं सुनी। वह वैद्य बुला आया, बाबूलाल के शरीर से खून निकलवाया। यहाँ तक कि बंगाली कविराज को भी ले आया। लेकिन किसी से भी कुछ नहीं हुआ। काशी में यह बात फैल गयी कि बाबूलाल मर रहा है। बहुत से आदमियों ने चैन की साँस ली। भिखारी, बालक-बालिका, नाव के माँझी सबने आकर नीचे तल्ला में भीड़ लगा दी।

फिर भी जैसे जान नहीं निकलना चाहती। धीरे-धीरे जबान बन्द हो जाती है। शरीर बेहोश पड़ा है। बाबूलाल की पत्नी ने इस बार रोना-धोना छोड़ दिया है। वह चुप बैठी रहती है और बालक गोपाल को पुकारती है।

कुन्दन का छोटा भाई गोपाल आया। बाबूलाल की दूसरी दोनों पत्नियाँ भी आयीं। लोग खचाखच भरे हैं। पाँव रखने की भी जगह नहीं है। सभी पूछते हैं, कुन्दन की माँ क्यों नहीं आयी ? बाबूलाल की दोनों पत्नियाँ उसे लिवाने गयीं।

फिर वह भी आयी।

माँ का वह चेहरा कुन्दन को सदा याद रहेगा। सूखे-सूखे केश, छाती के पास पता नहीं क्या दबाये हुई है। ऊपर आकर सभी को बाहर निकल जाने को कहा। कुन्दन से बोली, 'तुम्हारे दादा आसानी से प्राण नहीं छोड़ेंगे। ठहरो, मैं उनसे एक बात पूछूँगी।'

बाबूलाल के सामने वह घूँघट नहीं खोलती। फिर भी झुक पड़ी।

बोली, 'पिताजी, इसे पहचान सकते हैं ?'

एक कमीज !

माप देकर बनाई हुई एक पुरुष की कमीज। भीतर पहनने की एक बनियान। खून के दाग सूख कर काले हो गये थे। कपूर के साथ बहुत सम्भाल कर रखी गई थी। बाबूलाल की आँखें खुलीं।

गों, गों, कर वह अस्फुट शब्दों में कुछ बोला।

कुन्दन ने अपनी माँ का हाथ जोर से पकड़ रखा था। बोला, 'चली जाओ। तुम क्या आदमी नहीं हो ?'

उसकी माँ ने हाथ छुड़ा लिया। रूखे-सूखे केश का खोंपा बाँधा। बोली, 'यह तुम्हारे पिता की कमीज है। बीस वर्ष से रखी है। आज तुम्हें दिखाती हूँ। तुम्हारे पिता का तुम्हारे दादा ने अपने हाथों खून किया है। खून होते देखा था, मेरे भैया नहबतलाल ने। एक दिन वह मुझे वही बात बताने आया था। तुम्हारे दादा ने नहबतलाल को पहचान लिया था। उसका भी खून करा दिया। छोड़ो भी, अब मुझे शान्ति मिली। मुझे विधवा बनाया, तुम्हें मुझसे पराया बना दिया।'

कुन्दन ने कानों पर हाथ रख लिया। कुन्दन ने छाती पर हाथ रखा। कष्ट से चिल्ला कर बोला, "मुझसे यह बात क्यों कहा ?"

'क्यों, कष्ट होता है ?'

'न भी बतातीं तो क्या होता माँ ? अभी भी उसका सब पारलौकिक काम मुझे ही करना होगा। हा भगवन्, मुझे इस आग में क्यों झोंक दिया ?'

'कुन्दन तुम, मेरी बात सुनो।'

'हा भगवन्, सलाह ले सकूँ ऐसा भी कोई आदमी नहीं !'

'कुन्दन मैं हूँ।'

'नहीं, नहीं, तुम गोपाल की माँ हो।'

'तुम्हारी भी, मैं ही तेरी माँ हूँ रे !'

'ऐसा होता तो क्या इस तरह अलग रहतीं ? दादा से नफरत करते

करते मुझसे भी नफरत कर ली। अब मुझे तुम अपने पास नहीं खींच सकोगी।'

कुन्दन ने अपने आप को सम्भाल लिया।

उसी दिन बाबूलाल मर गया। मणिकर्णिका घाट में चन्दन की चिता पर बाबूलाल का शरीर लिटा देने पर कुन्दन को ऐसा लगा कि वह जैसे अभी पैदा हुआ है। अपने बीते हुए समय को भी उसने इसी चिता पर चढ़ा दिया। भविष्य कैसा है, यह वह नहीं जानता।

बाबूलाल का रुपया-पैसा लेकर कुन्दन कारबार शुरू करता है। उसने कलकत्ता में मसाले का एक कारोबार खरीद लिया। कलकत्ता में एक बड़ा घर तैयार हुआ। गोपाल को वहाँ भेजा गया। इन दिनों अचानक उसके सगे सम्बन्धी और खैरख्वाहों की संख्या बहुत बढ़ गयी है। नाना प्रकार के निकट और दूर के रिश्ते। चाची, ताई, भाई, भतीजा, बहन।

कुन्दन ने उन सबों को कलकत्ता भेजा।

उसकी दादी बनी घर की मालकिन और इससे खुश भी हुई। कुन्दन की माँ हठात् जैसे हार सी गई। कुन्दन घर का मालिक, वह कारोबार में लगा है। अब और किसके विरुद्ध झगड़ा किया जाय?

कुन्दन ने गोपाल से कह दिया, 'किसी पर विश्वास मत करना। और न किसी का मन ही दुखाना।' सगे-सम्बन्धी के लड़कों को काम में लगाया गया। सभी तनख्वाह पाते हैं, काम करते हैं। कुन्दन से सभी डरते हैं। कोई भी उससे बातें करने का साहस नहीं करता।

कुन्दन खुद काशी में रहा।

काशी छोड़ने का मन नहीं करता। कभी गाज़ीपुर जाता है। कभी काशी आता है।

इस समय वह सुख की खोज में व्यस्त हो जाता है। पैसा देकर जो खरीदा जाता है, वही रहता है। इसलिये वह सुख खरीदने की

कोशिश करता है। उससे यार-दोस्त कहा करते हैं, 'कुन्दन, दूर शहरों से बाबू लोग यहाँ मौज करने आते हैं। तुमने कुछ भी नहीं किया ?'

कुन्दन कई दिनों इन लोगों की मजलिस में जाता है। दोस्त सब पूछते हैं, 'कुन्दन लड़कियों की तरफ क्यों नहीं देखते ? वे सब तुम्हारी सेवा करना चाहती हैं।'

कुन्दन कहता है, 'नहीं ! मैं पुरुष हूँ। मुझे नफरत होती है। दूसरों का जूठा मैं नहीं खाता।'

उसी समय, एक दिन, वह गंगा-घाट पर बैठ कर हवा खा रहा था। वैसे ही समय एक बजरे से रोती हुई लाचार आवाज तैर जाती है। एक लड़की चिल्ला रही थी। कुन्दन ने पलट कर नहीं देखा।

लेकिन रोना और भी तेज हो उठा। जैसे वह आवाज कुन्दन की ही नजर खींचना चाहती है। कुन्दन ने अपने माझियों को बुलाया। बोला, 'देख आओ।' माँझी उसे ही बुलाते हैं। वह एक छोटी नाव लेकर गया।

एक सजा हुआ बजरा। उसमें बैठी हुई है, एक लड़की, सुनहले केश, भूरी आँखें, गोरा रंग, हाथ में मेंहदी, सिर पर जरी की टोपी और मुसलमानी पोशाक। लड़की उसे देखकर हैरान हो जाती है। कुन्दन ने देखा दो गोदना गोदने वाले उसके पैरों को गोद रहे हैं। वह वापस आ गया।

कई दिनों बाद, उसके घर में एक बहुत बड़ा हो-हल्ला हुआ। सभी नौकर हैरान होकर उसके पास भागे आये। एक बोला, 'जेरीना बीबी आयी हैं। बुलाती हैं।'

भौंहें टेढ़ी कर कुन्दन बोला, 'ऊपर ले जाओ।' उसने बाबूलाल के माझियों को बुलाया था। कारबार की बातें कर रहा था।

जेरीना आयी। कुन्दन ने देखा, यह वही लड़की है, और आज भी वह रो रही है। लड़की बोली, 'मुझे बचाइये, आप दयालु हैं,

धर्मावतार !'

कुन्दन माँझियों से बैठने को कहता है और बगल वाले कमरे में उठकर चला जाता है। लड़की बोलती है, 'मैं जेरीना हूँ !'

'कहिये !'

लड़की बोलती है, 'उस दिन आपको पहचान नहीं सकी थी।'

'हूँ !'

'ज्यों ही नाम सुना, त्योंही भागी-भागी आई हूँ। देखिये न, मुझे खरीदना चाहता है।'

'खरीदना चाहता है ?'

लड़की ने हाथ की चूड़ियों को छुआ और टनटन कर के बजाया। बोली, 'मेरी माँ को, मेरे भाई को, बहुत रुपये दिये हैं। मुझसे यह विवाह करेगा, मुसलमान बनायेगा। आप मुझे बचाइये।'

'मैं क्या कर सकता हूँ ?'

'देखिये, वह पागल है, शैतान है। पिछले वर्ष भी शादी करने का नाम लेकर इसी तरह की एक लड़की को वह ले गया था। उस लड़की ने पानी देने वाले भिश्ती के साथ बातें की थीं, इसलिये अचानक उसे इस तरह मारा कि बेकायदा घाव लगने से लड़की मर ही गयी। यहाँ अभागी लड़कियाँ उसके डर से काँपती हैं।'

कुन्दन बोला, 'मैं इतने छोटे मामले में अपना दिमाग खर्च करना नहीं चाहता।'

'मैंने सोचा था, आप गणेशी से नहीं डरेंगे।'

'डर ? किसका डर ?'

'आप अगर उससे नहीं डरते तो क्यों नहीं मुझे बचाते ?'

'तुम मेरे उस घर में जाकर रहो। भेज देता हूँ। तुम्हारे शरीर पर हाथ रखने की हिम्मत नहीं होगी गणेशी की।'

'मैं आपके पैरों का सहारा चाहती हूँ।'

'ओ, लेकिन मेरे लिये तुम्हें पैरों तले रखना संभव नहीं। असल

में सिर पर चढ़ना चाहोगी। माफ करो, मैं वैसा नहीं कर सकता। और भी एक बात है, गणेशीलाल मेरा रिश्तेदार है। मेरे मामा का लड़का है।'

होंठ काटकर जेरीना ने पता नहीं क्या सोचा। उठ खड़ी हुई। कुर्ते के भीतर से एक छुरा निकाल कर बाहर रखा। बोली, 'हुक्म मैं तामील न कर सकी।'

'कैसा हुक्म ?'

'आपको मारने का हुक्म था।'

'इसके मतलब ?'

जेरीना बोली, 'झूठ क्यों बोलूँगी। नाव पर बैठकर आपको देख भर लेने की बात थी। आपको मार देने का हुक्म था।'

'मुझे मार कर तुम इस घर से क्यों कर निकल पातीं ?'

'इस छूरे से केवल जरा सा घाव कर देती। इसके बाद जहर से जल कर मरते। जेरीना पर जब तक संदेह होता, तब तक जेरीना बहुत दूर निकल गई होती।'

'अब क्या करोगी ?

'वापस चली जाऊँगी।'

'तुम्हें कुछ कहेगा नहीं ?'

'सो नहीं जानती।'

कुन्दन ने जरा अच्छी तरह देखा। इसके बाद बोला, 'तुम जाओ जेरीना। तुम्हारे साथ मेरे आदमी जायेंगे। वह तुम्हारे घर पर पहरा देंगे। मैं थोड़ी खोज खबर लूँ। बन्दोबस्त करूँ, इसके बाद तुम्हें भेज दूँगा। लेकिन जाओगी कहाँ ?'

'फैजाबाद, फैजाबाद !'

यशोदा का विवाह वहीं हुआ था। पति कितना संगदिल इन्सान है। यशोदा के मरते न मरते फिर शादी कर ली।

जेरीना देख रही है। दोनों आँखों में मिनती। गोरा रंग, केश में

शायद सुनहला रंग लगाया हुआ। हाथ का गढ़न बिलकुल मोम के पुतलों की तरह।

अचानक आवेग से कुन्दन उसका हाथ छूता है। नरम, कितना नरम। इसके बाद कहता है, 'जाओ, तुम जाओ। एक मुसलमान लड़की को साथ भेज देता हूँ, उसे साथ रखना। मेरी विश्वासी है। तुम्हें बचा सकेगी।'

जेरीना नीचे उतर गयी। कुन्दन ने जरा सोचा और फिर जेरीना की रक्षा की व्यवस्था की।

ठीक इसके दो दिन बाद ही गणेशीलाल कुन्दन को निमन्त्रण देने आया। बीच गंगा में बजरे पर जलसा होगा। कुन्दन जरूर आये।

कुन्दन अपने सभी मल्लाहों को खबर देता है। सभी को पास-पास ही रहना होगा।

उत्सव के दिन शाम को कुन्दन ने नहाकर अच्छी तरह धुली हुई धोती और पंजाबी कुरता पहना। वह अकेला नहीं, उसके और भी कई संगी साथी हैं। वे सभी नहाये और सजे-धजे।

हाथ में बेला के फूल की माला, जेब में रुपये, कमर में बिछुआ,—वे सब सात आदमी शाम को बजरे पर पहुँचे। कुन्दन ने देख लिया, उसकी सभी नावें आसपास हैं।

जेरीना बैठी हुई थी। कुन्दन ने उसे देख कर ऐसा स्वांग रचा, जैसे उसे पहचानता ही नहीं और एक किनारे बैठ गया।

जेरीना ने सबसे पहले एक भजन गाना शुरू किया, और वह भी बीच से। वह कान पर हाथ रख कर गा उठी—'विष का प्याला राणा जी ने भेजा, पीवत मीरा हाँसी रे।'

भजन सुनते ही कुन्दन अवाक् हो गया।

इधर भाँग का शरबत आया और उधर गणेशी उससे अनुरोध करता है। कुन्दन और उसके साथियों ने शरबत लिया। पास में रख

लिया।

अचानक बाहर से 'हर-हर आहा-आहा, राम-राम', आदि माँझियों का शोरगुल सुनायी पड़ा। उधर एक दूसरी नाव को एक घर वाली बड़ी नाव ने धक्का दिया। और नाव-नाव में धक्का लग कर इस बजरे में भी धक्का लगा। इस धक्के से जेरीना का गाना रुक गया और शरबत का गिलास भी उलट गया।

बड़ी नाव हट गयी। उसके मांझियों को गणेशी ने गालियाँ दीं। जेरीना से बोला, 'अच्छा गाना गाओ।' उसने फिर शरबत लाने को कहा। फिर शरबत आया।

'लो, गिलास लो! कुन्दन भाई!'

कुन्दन ने नजर उठाकर देखा। एक नाव बजरे के बगल में आ लगी है। उसे मन में हुआ, यह शायद बुड्ढे भीम की नाव है। भीम उन लोगों का बहुत पुराना मल्लाह है। भीम की तरह मजबूत और काबिल मांझी कम ही हैं। बात यह तय थी कि भीम आयेगा और उस नाव पर जेरीना को चढ़ा कर कुन्दन एवं उसके संगी-साथी मार-पीट करेंगे।

कुन्दन बाहर की ओर देख रहा है, देख कर गणेशी बोलता है, 'कुन्दन, शरबत का गिलास क्यों नहीं लेते?'

नहीं। भीम नहीं है। वह शायद गणेशी का आदमी है। लेकिन कुन्दन के सिर पर जिद सवार हुई है। न रहे भीम की नाव, वह मार-पीट तो करेगा। गणेशी और उसके मांझी मल्लाहों को पानी में फेंक देगा। इसके बाद यही बजरा लेकर किनारे की तरफ जायेगा। जेरीना को फैजाबाद भेज देगा। निरापद आश्रय में।

वह उठ खड़ा हुआ। बोला, 'तुमने क्या इस शरबत में जहर घोला है?'

गणेशी गुस्सैल साँढ़ की तरह गरजकर उछल पड़ा। उसके साथ दस आदमी हैं, कुन्दन के साथ छः। पल भर में ही अठारह बिछुए

चमक उठे।

ठीक ऐसे ही समय भीम की आवाज सुनायी पड़ी। भाँग-गाँजा की दया से जड़ित आवाज। भीम गाना गाता जाता है—'हा रे, राम भरोसे के खेत की मकई किसने चोरी की है रे?'

जेरीना के सिर के पीछे वाली खिड़की से भीम ने झाँका। सफेद बाल, लाल आँखें, काला एवं लंबा शरीर। बजरे के भीतर सभी चुपचाप। भीम ने जीभ से खेद जताते हुए चू-चू किया और बोला, 'कौन?'

कुन्दन हो-हो कर हँसा। जेरीना को खिड़की से कूद पड़ने को कहा। भीम से बोला, 'उस लड़की के जिम्मेदार तुम हो।'

जेरीना से और कुछ कहना न पड़ा। 'खुदा बचाइये'—कहकर वह पल भर में ही कूद पड़ी। उसे भागने का मौका दिलाने में कुन्दन के हाथ में चोट लगी।

इसके बाद मार-पीट, हो हल्ला! इसी बीच अचानक जैसे सब ओर अँधेरा छा गया। वही बहुत बड़ी नाव, बिना किसी हलचल के जैसे बजरे के ऊपर चढ़ गई।

एक मिली-जुली चीत्कार! इसके बाद ही सब शान्त। घर वाली बड़ी नाव है, बजरा अब नहीं रहा। डरावना हो-हल्ला और चीत्कार! एक नाव से दूसरी नाव पर विपत्ति का इशारा मिला। लगभग सभी नावें कुंदन की ही हैं।

सर्वनाश हो गया, सर्वनाश! सभी चिल्लाने लगे और डाँड़ मार-मार कर यह माँझी उस माँझी को हटाने की कोशिश करने लगा। पानी में डाँड़ छपाछप कर रहे हैं।

'अरे ऐ, तुम सब डाँड़ मारकर मालिक का सिर फोड़ोगे क्या?' एक माँझी ने दूसरे को होशियार किया। इसके बाद सभी के गले के ऊपर भीम का गला सुनायी पड़ता है, 'अरे चिरंजी का बेटा, बाबूलाल का पोता, तुम किधर हो?'

सभी मल्लाह धुँआधार चिल्लाये, 'अरे तुम किधर हो !'

कुंदन के हाथ, पैर, कंधा में बिछुआ का घाव। पानी में गिरकर वह सिर उठाने की कोशिश करता है लेकिन उसके वफादार मल्लाह सब डाँड़ चला रहे हैं, छप-छप। सिर पर लगने से ही सत्यानाश।

उसने सिर डुबा रखा।

लेकिन दम नहीं साधा जाता। उसका शरीर सुन्न हो जाता है। आँखों के सामने अँधेरा। काफी दूर जाकर कुंदन ने एक बार सिर उठाया। आह, हवा! छाती भर साँस ली। उसने जैसे सुन लिया पानी के ऊपर से भीम की आवाज तैरती हुई आ रही है, 'चिरंजी का बेटा, तुम किधर हो !'

मन ही मन वह बोला, 'इतने दिनों बाद बेटे को मेरे बाप के नाम की याद आ रही है।'

इसके बाद ही आँखें बंद हो गयीं। शरीर भी शान्त हो गया।

कुंदन को एक बार होश आया।

आँखें खोलकर उसने देखा, एक बरगद का पत्ता दिखायी पड़ रहा है। उसके मुँह पर एक नवजवान झुका हुआ है। वह मीठी और सुरीली आवाज से बोल रहा है, 'बाबूजी ! बाबूजी ! बाबूजी !'

कुंदन ने एक टक लाल आँखें खोलीं। बोला, 'तुम कौन हो ?'

श्याम रंग, हँसमुख चेहरा, चञ्चल आँखें और कपाल पर एक गुच्छा केश झूल रहा है। नवजवान हँसा। उसका चेहरा बिल्कुल करीब है, इसीलिए कुंदन देख पाता है। हँसने का तरीका बड़ा ही सुंदर है। होंठ का कोना जरा टेढ़ा हो जाता है, आँख की पलकें थर-थर कर काँपती हैं।

'मैं बजरंगी हूँ।'

'बजरंगी ?'

'हाँ, बाबूजी मैं बजरंगी हूँ।'

'बहुत अच्छा।' कुन्दन ने फिर आँखें बंद कर लीं।

नौ

कई दिनों तक इस हंगामे की बात सभी के मुँह पर नाचती रही। कुन्दन नहीं मिल रहा, गणेशी बहुत घायल है। इसी मौके पर जेरीना काशी छोड़ कर भाग गई।

गणेशी को बहुत चोट लगी है। डाँड़ की चोट से सिर फूट गया है। उसे काफी दिनों तक खाट पर पड़ा रहना पड़ा।

बजरंगी नौका-मालिक का नौकर है। आदि केशव मन्दिर के पास वे सब रहते हैं। बीच-बीच में यात्री आकर नाव किराए पर लेकर घूमना चाहते हैं। बजरंगी डाँड़ चलाता है और जोर से बोला करता है, 'यह हरिश्चन्द्र घाट है, वह कालू डोम का मकान है।'

नौकाओं में से बहुतेरी कुन्दन की ही हैं। बजरंगी यह नहीं जानता। उसने सुना है, उन लोगों के मालिक इसी शहर में रहते हैं। बजरंगी का सब कारबार मल्लाहों के साथ है। वे ही उसके मालिक हैं।

बजरंगी नौका-मालिक मल्लाहों का ही नौकर है। किस तरह बजरंगी ने खोजकर कुन्दन को निकाला, यह भी आश्चर्य की बात है।

बजरङ्गी ने उसे पहले दिन ही नहीं छोड़ा। नाव के धक्के ने कुन्दन को पानी में गिरा दिया था। सिर में चोट लगी थी।

काशी के मणिकर्णिका घाट और हरिश्चन्द्र घाट पर मुर्दा जलाने से अनंत स्वर्ग लाभ होगा, यह विश्वास सभी हिन्दुओं को है। इसलिये आस-पास के गाँवों से मुर्दे यहाँ लाये जाते हैं। जिनके पास पैसा है, वे धनी ठाकुर, चौधरी, ताल्लुकेदार, तीन-चार दिनों का रास्ता तय कर

बाजे-गाजे के साथ लाल रेशमी कपड़ा ओढ़ा कर राम-नाम गाते हुए मुर्दा लाते हैं।

श्मशान घाट पर इसीलिये मुर्दों की भीड़ लगी रहती है।

लेकिन सभी लाशें जलकर अन्त में राख बन जाती हैं, ऐसी बात नहीं। बहुत बार तो आधा, तिहाई भाग जलाते-जलाते, चिता तक तोड़कर पानी में फेंक दिया जाता है। ज्वार के खिंचाव में वह सभी मुर्दे से लगते हैं। भाटा के समय किनारे-किनारे पर लोग दिखाई पड़ते हैं। आदि केशव मन्दिर के बाद, जहाँ गंगा ने मोड़ लिया है, वहाँ मुर्दे इकट्ठा होते रहते हैं। गिद्ध वहाँ भीड़ लगाते हैं।

कुंदन बहते-बहते उसी चढ़ाव पर आकर अटक गया था। यात्रियों को दर्शन कराने बजरंगी वहाँ लाया था। यात्रीगण दर्शन कर रहे हैं। नाव वाला उन लोगों के साथ था। वह किनारे पर आकर खड़ा था।

अचानक मुर्दे के पास एक शरीर को इधर-उधर हिलते-डुलते देख कर, दर्दभरी आवाज सुनकर, वह उधर आकृष्ट हुआ था।

इसी से कुन्दन की जान बची थी।

बजरंगी उसे अपने घर ले आया। वह घर में नहीं रहता। एक बहुत बड़ी, टूटी-फूटी नाव किनारे के ऊपर है। वहाँ ही बजरंगी का घर है। कुन्दन के शरीर के घावों को देखकर उसे बड़ी चिन्ता हुई।

कुन्दन को तेज बुखार है। बेहोश पड़ा है। कहाँ आ गया है, किसके पास आ गया है, समझ नहीं पाता।

बजरंगी बड़ी चिन्ता में पड़ा। एक बार उसने सोचा, शहर ही चला जाये। आदमी बुला लाये। लेकिन उसका तो हाथ-पाँव ही बँधा है। नाव वाले सभी कल उधर गये हैं। अभी तक नहीं आये।

दूसरे दिन कुन्दन को होश आया।

उसने बजरंगी को ध्यान से देखा। बजरंगी तीन ईंटों के चूल्हे में दूध गरम कर रहा था। कुन्दन को ताकता हुआ देखकर वह हँसता

है। पास आकर बोलता है, 'उठो, दूध पिओ, शरीर में ताकत होगी।'

कुन्दन उठा।

धोती कमीज गंदी है, खून का दाग खूब सूख गया है। वह नाव पर बैठा हुआ है, नीचे बकरे चर रहे हैं। सामने गंगा है। बरगद की एक जटा झूल रही है।

बजरङ्गी उसके पास आकर बैठता है। कहता है, 'दूध पिओ। तुम्हें गरम जलेबी ला दूँगा। जानते हो, उधर की दूकान में क्या मजेदार जलेबी बनती है!'

'बजरङ्गी, तुम क्या मल्लाह के लड़के हो....?'

'नहीं।'

'तब तुम कौन हो?'

'नहीं जानता। सुना है, जब मैं बहुत छोटा था तभी एक मल्लाह मुझे उठाकर ले आया था।'

'कहाँ से?'

'गंगा से। मेरे पिता, मेरी माँ, मेरे दादा सभी जाने कहाँ दक्षिण से तीर्थ यात्रा करने आये थे। चंद्र-ग्रहण के दिन नहाते समय उनकी नाव डूब गयी थी।'

'क्या कहते हो?'

'क्यों? तुम्हें ऐसा क्यों लगता है?'

हैरान होकर कुन्दन देखता रहता है। बोलता है, 'कितने दिन पहले?'

'हिसाब करके देख लो। मेरी उम्र पंद्रह की हुई। तेरह वर्ष पहले। जो योग-स्नान हुआ था, उसी दिन मुझे उठाकर मल्लाह ले आया था।'

'किस तरह जाना कि तुम उन्हीं माँ-बाप के बेटे हो?'

'यह जो मेरे गले में एक कवच है। इसे दिखा कर मल्लाह कहा करता है, यह तब भी मेरे गले में था। यह कवच मदुरा के मीनाक्षी

मन्दिर के पुरोहित का दिया हुआ है। जानते हो, मेरी बड़ी इच्छा होती है कि एक दिन उसी देश में चला जाऊँ। अपना घर खोजूँ, खोज कर पता लगाऊँ।'

'तुम्हें कौन मल्लाह लाया था ?'

'भीम।'

कुन्दन चुप। उसका हाथ थर-थर काँपता है। वह हाथ से बजरंगी का चेहरा सहलाता है। तेरह वर्ष पहले ! तेरह वर्ष बाद ! भगवान ने उसे इसी बजरंगी की गोद में बैठा दिया।

'बजरंगी ! तुम्हारे माता पिता यहाँ कहाँ ठहरे थे ? किसके साथ नहाने आये थे ?'

'बाबूलाल ! बाबूलाल !' बजरंगी थोड़ा हँसा। चेहरे पर हँसी लाकर कुन्दन के मुँह की ओर देखता रहा। बोला, 'बाबूलाल को मैंने देखा है। जानते हो, भगवान जैसा उसका चेहरा था। बिलकुल गोरा रङ्ग, गंगा-घाट पर बैठा रहता।'

'किस तरह देखा ?'

'वाह, मैं नाव पर यात्रियों को लेकर घूमता जो रहता हूँ। असि घाट से आदि केशव। उन लोगों के साथ जाते-जाते मैंने कितने ही दिनों बाबूलाल को देखा था।'

कुन्दन ने उसे बुलाया। बोला, 'आओ, पास आओ।'

बजरंगी को उसने पास खींच लिया।

'तुम्हारा हाथ काँपता है, क्यों काँपता है ?'

'अरे, कुछ नहीं।'

'जानते हो, मल्लाह कहा करता है, मैं गंगा का बेटा हूँ। पिता-माता की बात नहीं सोचनी चाहिये।'

'तुम भी ऐसा ही सोचते हो ?'

'नहीं, उन लोगों को देखा नहीं। जानता भी नहीं। क्या पता, माँ का प्यार कैसा होता है ?'

'यह सब मत सोचा करो। मेरी माँ है। माँ मुझे प्यार नहीं करती।'

'तुम्हें दुख होता है ?'

कुन्दन हँस पड़ा। हँसने से दिल में दर्द हो रहा है। यह कैसी एक अनजान अनुभूति है। उसके लिये जैसे कुन्दन का सारा प्यार गल-गल कर गिर रहा है। प्यार, प्यार कैसा होता है, यह क्या कुन्दन जानता है ? किसी पर विश्वास नहीं करता कुन्दन। नहीं। दादा की यह सलाह उसने मानी है। लेकिन आज जैसे इस सुनसान स्थान में, गंगा के सामने, विराट आकाश के नीचे बैठकर उस पर विश्वास करने के लिये प्राण व्याकुल है।

'बजरंगी, तुम्हें मल्लाह प्यार करता है ?'

'हो सकता है।'

बजरंगी का चेहरा उदास हो गया। उसने शायद कुछ सोचा। उस तरह वह क्यों देखता है ? उसकी दोनों आँखों में जैसे आकाश की छाया है। उसकी बातों में जैसे गंगा जल की पवित्रता और सरलता है। होगा भी क्यों नहीं ?

'वे सब मुझे खाने को नहीं देते। देंगे भी कहाँ से ? वे भी तो गरीब मल्लाह हैं। उन लोगों के मालिक शायद उन्हें पैसे नहीं देते।'

'तुम क्या खाते हो ?'

'अभी-अभी देखोगे। ठहरो, पहले तुम्हारी जलेबी ला दूँ।'

'पैसा कहाँ है ?'

'है। एक पैसा मेरे पास है।'

बजरंगी भागा-भागा गया। शाल के पत्ते के दोने में छोटी-छोटी चार जलेबियाँ ले आया।

'बजरंगी तुम भी तो खाओ।'

'नहीं, नहीं, मैं तो भात खाऊँगा।'

बजरंगी ने पीतल की थाली में अपना भात परोसा। भात, करेले

का चोखा और नमक। खाते-खाते वह हँसा। कुन्दन के दिल में जैसे उसकी हँसी ने आग लगा दी।

इसके बाद बजरंगी बोला, 'तुम सोओ। मैं तुम्हारा सिर सहला देता हूँ।'

'अच्छा।'

एक लम्बी साँस छोड़कर कुन्दन लेट गया। उसकी गोद में ही सिर रखे रहा वह। थोड़ी देर बाद कुन्दन बोला, 'जानते हो, तुम्हारे माता-पिता की कहानी मैं सुना सकता हूँ।'

'किस तरह जानते हो?'

'सुनो न। शायद, तुम्हारे माता-पिता बड़े अच्छे आदमी थे।'

'रहे होंगे।'

'इसीलिये तुम भी अच्छे हो।'

'इसके बाद?'

'बस। कहानी खतम हो गयी।'

बजरंगी बहुत हँसा। कुन्दन भी हँसा। दोनों हँस रहे हैं, बातें कर रहे हैं, ऐसे ही समय बजरंगी बोलता है, 'वह देखो, मल्लाह आ रहे हैं।'

'बजरंगी मेरे पास बैठो।'

'वे लोग डाँटेंगे।'

'कुछ भी नहीं कहेंगे। तुम देखो तो।'

भीम और दूसरे सब मल्लाहों की आँखें चमक उठीं। इसके बाद भीम ने उसका पैर पकड़ लिया। बोला, 'मालिक!'

बजरंगी हैरान। वह इसकी ओर आँखें फाड़े देखता है। भीम और दूसरे मल्लाहों ने एक साथ बातें करनी शुरू कीं। कुन्दन मर गया है, यही सब समझ बैठे थे। भीम बोलता है, 'बजरंगी! तुमने किसे गुड़ की जलेबी खिलायी है, जानते हो?'

'भीम, तुमने मुझे बजरंगी के बारे में क्यों नहीं बताया था?'

भीम ने सिर नीचे कर लिया। इसके बाद बोला, 'मालिक, तुम उसके साथ बातें कर रहे थे?'

बजरंगी को डर लगा। उसने असहाय भाव से देखा। कुंदन हँसा। बोला, 'बजरङ्गी, देखते हो, मैं तुम्हारे मालिक का मालिक हूँ।'

बजरङ्गी अब कुछ नहीं बोला।

बड़ी नाव पर बिछावन बिछाया गया। कुंदन अब घर जायेगा।

कुंदन बोला, 'बजरंगी, नाव पर चढ़ो।'

बजरंगी नाव पर चढ़ता है। नौका छोड़ देता है। कुंदन ने कहा, 'यहाँ आओ।'

होंठ थोड़ा फुलाकर बजरङ्गी पास आ बैठा। कुंदन बोला, 'बोलो, तुम क्या बख्शीश चाहते हो।'

'कुछ नहीं।'

'बोलो, तुम्हें क्या अच्छा लगता है, बोलो?'

भीम ने कहा, 'उसे पेशवा-महल में नौकर रखवा दो। नौबतखाने का नौकर।'

'क्यों?'

'उसी से पूछो।'

बजरंगी रो पड़ा। बोला, 'मैं छिपकर शहनाई सुनने जाता हूँ। पेशवा महल में सुबह जो शहनाई बजती है, वही सुनता हूँ।'

'और क्या?'

'और मेरे पास एक सारंगी है। नंदलाल जी के पास जाकर कहा था, मैं तुम्हारा नौकर बनूँगा। मुझे सारंगी सिखाओ।'

'क्यों रे?'

'शहनाई सुनना मुझे पसन्द है। सारंगी वाला बनना चाहता हूँ।'

'तुम सारंगी सीखना चाहते हो?'

'नहीं?'

'क्यों ?'

'कौन सिखायेगा।'

कुन्दन सोचता रहता है। नाव दशाश्वमेध घाट पहुँची। कुन्दन उतरा। बजरंगी से बोला, 'आओ।'

कुन्दन उसका हाथ पकड़कर ले चलता है। बजरंगी डर गया है। हैरान भी हुआ है।

कुन्दन घर में घुसा। ऊपर चढ़ा। नौकर ने दौड़कर सलाम किया बजरंगी की ओर गौर से देखा।

कुन्दन अपने कमरे में गया। बोला, 'बजरंगी, यही तुम्हारा कमरा है।'

'मालिक!'

'यहाँ तुम रहोगे। मेरे ही साथ।'

'तुम मजाक करते हो।'

'मजाक करता हूँ?' कुन्दन ने डाँटा। 'बोलता है, मैं मजाक करता हूँ! यहाँ तुम रहोगे। यहाँ आकर नंदलाल तुम्हें सारंगी सिखायेगा। हम और तुम रहेंगे। तुम और हम।'

बजरंगी फिर रो पड़ा। दूसरे ही क्षण हँसा। बोला, 'मालिक, मालिक, तुम मेरे मालिक हो। तुम्हें देखते ही पहचान गया हूँ।'

'पहचानते हो। मुझे क्या एक नजर में पहचाना जा सकता है रे?'

'क्यों नहीं? सुबह ही उठकर गंगाजल में एक माला को बहते हुए देखा। पता नहीं क्यों मन में ऐसा लगा था कि यह दिन बड़ा अच्छा है।'

'इसलिये शायद तुम मुझे खोज पाये?'

'हाँ, यही तो! तुम हँसते हो?'

बजरंगी ने उसका हाथ दोनों हाथों से पकड़ा फिर अपने सिर पर रखा।

इसी तरह बजरंगी आया।

कुन्दन को सब याद है। कैसे उसे धोती कमीज खरीद दी। उसे साथ लेकर किस तरह घूमता फिरता। बीच गगा मे डाँड़ चलाते-चलाते बजरंगी उसे कैसी-कैसी कहानी सुनाया करता।

बजरंगी, बजरंगी, बजरंगी। एक दिन बिलकुल बचपन में उसने उसकी देह सहलायी थी। अपनी माँ की गोद से वह कुन्दन की ओर देखकर हँस रहा था।

याद करने से छाती फटने लगती है। अब वह नहीं आयेगा। अब उसकी ओर देखकर नहीं हँसेगा। नहीं बोलेगा। मालिक, तुम अच्छे हो जाओ मालिक, तुम आदमी को उस तरह कष्ट मत देना।

नहीं दिया। बजरंगी को पाकर ही जैसे कुन्दन ने सहायक पा लिया। कुन्दन धीरे-धीरे गुंडेबाजी छोड़ देता है। कलकत्ता आया। एक के बाद एक कारोबार। शायद बजरंगी सब कुछ नहीं जानता था।

वही बजरंगी आज नहीं है। छाती के नीचे एक बहुत बड़ा बोझ। दोनों आँखों के सामने अँधेरा। अभी अँधेरी रात में आँखें खोलकर कुन्दन जगा रहता है। एक बार वह आये। उसे अपने साथ ले जाये।

ऐसा नहीं होता। वह पुण्यवान, वह निष्कलंक! उसकी दोनों आँखों में आकाश की छाया। उसका मन गंगा की तरह पवित्र। देवताओं के लड़के जैसे कुछ दिनों पृथवी पर खेल-कूद करके देवताओं के पास लौट जाते हैं। एक आदमी का दिल तोड़ गया है वह। जिसके पाँव में काँटा लगने से बजरंगी अपनी छाती खोल दे सकता था, उसे ही अकेला छोड़कर चला गया है। ऐसा क्यों हुआ?

दस

शिरीन ने बड़ा कठोर व्यवहार किया। फिर भी शिरीन को ही कुन्दन ने बुला भेजा।

खिदिरपुर के मकान में जाने के लिये वह तैयार हो रहा था। ऐसे ही समय माँ आयी। कुन्दन की माँ।

'कुन्दन, तुम क्या कहीं बाहर जा रहे हो?'

'हाँ।'

'मेरी बात सुनो।'

'कहो।'

'तुम तो जानते हो, कौन-सी बात है।'

'माँ, तुम शायद भूल रही हो, तुम्हीं ने एक दिन मुझसे कहा था, शादी नहीं करना।'

'कुन्दन, वह बात मैं लौटा लेती हूँ। तुम्हारा दिल टूट गया है, रात में तुम्हें नींद नहीं आती। उस लड़की से भी बहुत हसीन बहू मैं ला दूँगी।'

'किससे?'

'लायली-आसमान से।'

'माँ, मैं शादी नहीं करूँगा।'

'अरे, इस तरह अकेले अकेले कोई नहीं रह सकता।'

'माँ!' कुन्दन की आँखें लाल। गला रूखा। 'माँ', मैं किसी को भी प्यार नहीं कर सकूँगा। मेरे दिल में प्यार नहीं है।'

'ऐसा भी क्या होता है, कुन्दन?'

'नहीं, नहीं,' कुन्दन ने रूमाल लिया, रूमाल जेब में रखा, थोड़ी चहल-क़दमी की। इसके बाद चिल्ला उठा, 'तुम लोग इस तरह मुझे कष्ट क्यों देती हो? तुम लोगों ने, जो कुछ चाहा है, वही मैंने दिया है। मैं किसी को नहीं चाहता।'

'क्या हुआ शिरीन ?'

'यह आईना ? क्या ?'

शिरीन ने बत्ती ली। आईने के करीब जाकर उसने देखा। इसके बाद थोड़ा हँसने की कोशिश की। हाथ बढ़ाया। कुन्दन ने चुपचाप गिलास बढ़ा दिया। शिरीन गट-गट गिलास खाली कर गई। मुँह पोंछकर बोली, 'आदमी से ऐसी भी भूल होती है ?'

'क्या ?' कुन्दन का हाथ काँप रहा है।

'ढक्कन खोलकर ज्योंही देखती हूँ, त्योंही मेरे मन में हुआ........।'

'क्या मन में हुआ ?'

'लायली जैसे मेरी तरफ देख रही है। सच कहती हूँ, कुन्दन। देखो न, बोलने से मेरे रोंगटे खड़े हो जाते हैं। लायली जैसे मेरी ओर देखकर हँसी। मैं हैरान होकर देखती रही। हठात् देखती हूँ, कुछ भी नहीं है। आईने में केवल मेरा ही चेहरा दिखाई दे रहा है। मुझे डर लगा।'

कुन्दन कुछ न बोला। नौकर को पुकारा। नौकर आकर कमरे की सभी बत्तियाँ जलाता है। पूरा कमरा झलमल कर उठा। कुन्दन बोला, 'मटमैले प्रकाश में ऐसी ही भूल मुझसे भी हुई है। वह कुछ भी नहीं है।'

'लेकिन कुन्दन, इस तरह तुम अकेले इस कमरे में न आया करो।'

'क्यों शिरीन ?'

'हठात् डरोगे। कहा नहीं जा सकता........कहा नहीं जा सकता, हो सकता है, यह कमरा छोड़कर वह नहीं जा सकी है।'

कुन्दन तकिये पर उठंग गया। बोला, 'बैठो।'

शिरीन बैठ गई। कुन्दन का गला भारी, आवाज उदास। कुन्दन बोला, 'मरे आदमी से इतना डर क्यों शिरीन ?'

'चुप चुप, ऐसी बात नहीं बोलते।'

'क्यों, डर क्यों ? मुझे डर नहीं लगता।' जिंदा रह कर मुझे जो इतनी प्यारी थी, अब मर गयी है, इसलिये उससे डरूँगा ? नहीं, नहीं।'

कुन्दन की दोनों आँखें लाल हो उठी हैं। आँखों के नीचे कालापन। चेहरा थका हुआ।

'मैं नहीं डरता। मेरी इच्छा होती है वह आये, मेरे सामने खड़ी हो। जितने दिन वह थी, मेरा कलेजा मानो अपने हाथ की मुट्ठी में पकड़े थी। आँखों से देखने पर मन नहीं भरता। दूर जाने पर शान्ति नहीं मिलती।'

'मुहब्बत करने से ऐसा ही होता है।'

'मुहब्बत ? इसे तुम मुहब्बत कहती हो ? नहीं, नहीं। इसका नाम सर्वनाश है। इसका नाम झोंक है। उसे देखने के लिये मैं यहाँ बैठा रहता हूँ। कितने ही दिन, कितनी ही रातें।'

कुन्दन पेशानी का पसीना पोंछ कर बड़बड़ाया, 'हरामज़ादी, शैतान, नहीं आती। एक बार यदि उसे पता........।'

'क्या करते ?'

'पूछता, किस मंत्र से उसका मन जीता जा सकता है। पूछता, किस चीज से वह खुश होगी ?'

आवाज़ धीमी कर कुन्दन बोला, 'इतनी बातें बोलता हूँ, लेकिन शायद कुछ भी नहीं पूछता। बोलता, तुम रहो। तुमसे और कुछ भी नहीं माँगूँगा। सिर्फ, तुम रहो।'

'अभागी लायली ? तुम्हारा इतना प्यार, वह नहीं समझ सकी। बिना चाहे माँगे जो पाता है, वह दान देना नहीं सीखता, समझे कुन्दन।'

'प्यार ! प्यार क्यों कहती हो, नहीं समझता। इसका नाम यदि प्यार होता है, तो फिर इसमें मनुष्य, क्या शान्ति पाता है ? क्या सुख पाता है ?'

'नहीं।'

'मुझे ऐसा नहीं लगता कि मैं लायली को कभी भी प्यार करता था। वह किसी के साथ बातें करती तो मुझे जलन होती। संदेह से मन जलभुन कर खाक हो जाता। कितनी ही बार कहा है—ऐसा करने से गर्दन मरोड़ दूँगा। वह हँसती। वह डरती नहीं थी। उसमें मेरे लिये कोई प्यार-स्नेह व ममता नहीं थी।'

'यही तो कहती हूँ........।'

'नहीं, वही मुझे ज्यादा अच्छा लगता था। सच कहा जाय तो मैंने उसे खरीदा था। रुपये पैसे की लालच दिखाकर उसे अपने घर लाया था। वह मुझे नहीं देख सकती थी।'

कुन्दन उठ आया। आईने के सामने खड़ा हुआ। आईने की तरफ देखकर शिरीन की ओर पीछे पलट कर बोला, 'जानती हो? मैं बचपन से ही औरतों से अलग हूँ। रूखा-सूखा आदमी। प्यार पाया जा सकता है, इस पर मैं विश्वास नहीं करता। वह आकाश की वर्षा के समान है। नहीं चाहने से बहुत पाओगी, चाहने से नहीं पाओगी।'

'कुन्दन, पहेलियाँ बुझा रहे हो?'

'नहीं, शिरीन। पहेलियाँ मैं कहाँ से सीखूँगा? मैंने क्या पढ़ना लिखना सीखा है? मुझे क्या पहेलियाँ बुझाने का समय मिला है?'

'छोड़ो भी, इसके बाद बोलो।'

'लायली आसमान ने क्या पाया, नहीं कहा जा सकता। जिसे कोई नहीं पाता, उसे पा लेना ही मुझे अच्छा लगता है। काफी रुपये लगते हैं। लगें। राजी हो गयी।'

वह सारी बातें याद आती हैं। इसी कमरे में बैठकर बातचीत हुई थी। लायली, कुन्दन और बजरंगी। बजरंगी बाहर खड़ा था। लायली ने पूछा था, 'वह कौन है, कुन्दन?' कुन्दन ने कहा था, 'वह बजरंगी है। मेरा बजरंगी।'

'तुम्हारा बजरंगी।' लायली के होठ पर हँसी। लायली बोली थी, 'अच्छा अब हम तुम बात करेंगे कुन्दन, उसे जाने को कहो।'

'नहीं, नहीं, वह रहेगा ?'

'बहुत अच्छा, रहे ।'

बजरंगी खुद उठ गया । बोला, 'मालिक मैं नीचे जाता हूँ ।'

लायली ने कहा, 'कुन्दन काम की बात कहो ।'

'तुम बोलो ।'

'मैं तुम्हें प्यार नहीं करती । मुझे लगता है कि मैं सिर्फ अपने आप से प्यार करती हूँ । लेकिन इससे क्या आता जाता है कुन्दन ? तुम यदि मुझे धोखा न दो तो मैं भी तुम्हें धोखा नहीं दूँगी । कभी भी नहीं ।'

'तुम क्या मुझे कुछ नहीं दोगी ?'

लायली का जवाब सुनने से पहले ही कुंदन का हृतपिण्ड बेताला शब्द करता है । दिल में दर्द-सा होता है । इतनी हसीन, इतनी कठोर । लायली क्या कहेगी ?

लायली अपना जूड़ा सामने करती है । लम्बी वेणी में मुक्ता का फूल लगा हुआ । बड़ी-बड़ी आँखें । हल्के नीले रङ्ग की साड़ी का आँचल सिर पर । लायली बोली, 'जो सकूँगी, वही दूँगी । धोखा तुम्हें नहीं दूँगी । तुम्हें गाना सुनाऊँगी, तुम्हारे साथ गुफ्तगूं करूँगी । तुम्हारे साथ शतरंज खेलूँगी, घूमूँगी, और यदि तुम चाहो....'

'तब ।'

'प्यार का अभिनय भी करूँगी ।'

'अभिनय करते-करते थोड़ा प्यार भी नहीं कर सकोगी ?'

'कर सकी तो करूँगी । अभिनय करते-करते क्या प्यार किया जाता है ?'

'नहीं ।'

'शायद, किया जाता हो । मैं नहीं जानती । इसके बाद ।'

'बोलो ।'

'यह मकान मुझे दोगे ?'

'दूँगा । लिखा-पढ़ी करूँगा ? कहो तो आज ही कर दूँ ?'

'नहीं-नहीं । मेरी जिस दिन इच्छा होगी उस दिन खुद ही लिखा-पढ़ी करने को कहूँगी ।'

'अभी क्यों नहीं ?'

'तुम शायद सोच रहे हो, किसी तरह लिखा-पढ़ी करके मुझे बाँध कर रख सकोगे । नहीं, नहीं । तुम गलत कर रहे हो । मैं यदि कुछ दिनों बाद तुम्हारे साथ रहना नहीं चाहूँ, तब मेरे मन में होगा, सिर्फ मकान, रुपये वगैरह लेने के लिये मैंने धोखा दिया है । तुम मुझे केवल व्यवहार करने के लिये देना ।'

'दूँगा । घर, तुम्हारा है । तुम्हें मैं एक सुन्दर गाड़ी भी दूँगा, एक पालकी दूँगा । एक बजरा दूँगा । जिस पर तुम बीच नदी में सैर करोगी । मेरी सिर्फ एक ही शर्त है ।'

'बोलो ।'

'और किसी का आना-जाना नहीं होगा ।'

'यह क्या ? शिरीन, निसार, मेरे जो पुराने दोस्त हैं ?'

'वे आयें । लेकिन दूसरा कोई मर्द नहीं । आह—समझ लो, क्या कहना चाहता हूँ ।'

'समझ गई हूँ । बहुत अच्छा ऐसा ही होगा ।'

शिरीन बोली, 'क्या सोच रहे हो ?'

'सोचता हूँ ।' कुंदन कुछेक क्षण देखता रहा । 'तुम्हें क्यों बुलाया है, जानती हो ? लायली ने तुमसे क्या कहा है, वही जानना चाहता हूँ ।'

'वही जानना चाहते हो ?'

'हाँ ।'

'कुंदन, मुझसे जो कुछ कहा है, यह कोई खास नहीं । लेकिन मैं एक बात कहती हूँ ।'

'क्या ?'

'तुम मुझे आज कोई अँगूठी या गहना नहीं देना। छिः छिः, मुझे लगता है, यह बड़ा बुरा होगा। मुझसे लायली ने क्या कहा है, क्या नहीं कहा, सब तुच्छ है। इसके लिये तुम्हें कुछ घूस नहीं देना होगा।'

'बहुत अच्छा, नहीं दूँगा।'

'लेन-देन का सम्बन्ध रहने से क्या होता है, जानते हो? जाने कैसा एक इस प्रकार का ख्याल हो जाता है, देता हूँ ज्यादा, पाता हूँ कम।'

'वाह शिरीन, वाह! शायद इसी तरह सजा-सजाकर बातें करना निसार ने तुम्हें सिखाया है? नहीं, मुझे कुछ भी नहीं आता। मैं जैसा गँवार था, वैसा ही बना रहा। बात-चीत करना भी नहीं सीखा।'

'सीखने की जरूरत ही क्या है?'

'कहो, कहो, जो कह रही थी, कहो।'

'कहती हूँ। एक बात मुझे बड़ी याद आ रही है। वह हर रोज मुझसे कहा करती, बजरंगी को मैं फूटी नजरों से भी नहीं देख सकती। कुन्दन का सब कुछ वही लिए हुए है।'

यह बात सुनने से छाती फट जाती है, फिर भी एक आश्चर्यजनक आनन्द होता है। बजरंगी से ईर्षा करती। तब क्या अभिनय करते-करते लायली कुन्दन को थोड़ा भी प्यार करने लगी थी?

'बजरंगी को जब तुमने हटा दिया, गाजीपुर चले गये, उस समय वह आकर केवल तुम्हारी बातें करती थी। केवल तुम्हारी बातें ही किया करती थी।'

तब लायली ने उसे थोड़ा प्यार किया था। तब कुन्दन और शराब नहीं पीता। शराब का गिलास वह हटा देती है।

'शिरीन, धीरे-धीरे बोलो।' हाय, हाय, कुन्दन ने तो कभी कलम का कारबार नहीं किया है। उसके हाथ से कलम नहीं चलती। ऐसा न होता तो वह शिरीन की बातें लिख लेता। एक भी न भूलता। सभी

से कह सकता—जानते, हो, लायली मुझे प्यार करती है, प्यार करती थी।

'लायली कहा करती कि कुन्दन मुझे बड़ा प्यार करता है। इतना प्यार करता है कि वैसा प्यार किसी भी औरत को किसी भी पुरुष ने नहीं दिया है। मैं पूछती, वह कैसा प्यार करता है री ? वह कहती, वह तुम लोग नहीं समझ सकोगी। एक बात याद रखो, मुझे प्यार करता है, इसलिये कुन्दन ने एक आदमी को बड़ी शांति दे दी है। सजा देने में उसे तकलीफ हुई है, फिर भी दी है।'

शिरीन थोड़ा चुप रहती है। फिर बोलती है, 'कुन्दन, उस समय उसे छोड़कर तुम्हारा चला जाना अच्छा नहीं हुआ।'

'मैं अपनी मर्जी से नहीं गया था। मुझे काम था शिरीन।'

'इस मकान में अकेली रहने से लगता है कि उसका दिमाग़ खराब हो गया था। बिलकुल अकेली रह गई थी।'

'तुम लोग तो थीं।'

'लेकिन ज्वाला में थी, तकलीफ में थी। बीच-बीच में आयी हूँ। जब कभी भी आयी हूँ, देखा है कि लायली इसी आइने के सामने बैठी हुई है। सज-संवर कर, एक दिन एक किस्म का बनाव-सिंगार करती। दिन के बाद दिन। जाने क्या वह सोचती रहती।'

'मैं यदि रहता !'

'वह जो मन ही मन बातें किया करती। दरवाजा बन्द कर। इसलिये ऐसा लगता है कि उसका दिमाग शायद खराब होता जा रहा था। आज इसलिये आईना देखकर चमक उठी। उसकी ही बात याद आयी। हो सकता है, इसीलिये........।'

शिरीन से साँस छोड़ी। बोली, 'क्यों मरने गयी ? अभागी ! जिंदगी जो खुदा की दी हुई है, उसे भला बर्बाद करना चाहिये। क्या तकलीफ थी तुम्हें ?'

कुन्दन चुप।

'क्यों ऐसा किया, कौन जानता है ! एक दिन देखा, तुम्हारे दिये

सभी उपहार उसने गलीचों पर बिछा रक्खा है। और खुद क्या किया है, जानते हो? लाल साड़ी, पीली रेशमी चादर, जड़ी के काम वाला दुपट्टा उसने धारण किया। हाथ पाँव में सुहाग कुंकुम लगाया। गहना पहना। बोली, देखो तो, मैं हिन्दू घराने की बहू दिखती हूँ या नहीं? मैं बोली, नहीं। उन लोगों को मैंने नहीं देखा है। वह हँसने लगी। बोली, कुन्दन आ जाये तो एक दिन ऐसा ही शृंगार करूँगी।'

कुन्दन बोला, 'अब मत बोलो। बस!'

शिरीन उठ खड़ी हुई। बोली, 'फिर यदि कुछ याद आयेगी तो कहूँगी।'

'बहुत अच्छा।'

कुन्दन खड़ा रहा। शिरीन चली गयी। कुन्दन कमरे में खड़ा-खड़ा सोचने लगा, लायली एक दिन थी, आज नहीं है। नहीं, यही जैसे कठोर सत्य है। इससे कठोर और क्या दूसरा कोई सत्य नहीं।

'भैया।'

'कौन?'

कुन्दन चौंक उठा। उसे किसने पुकारा? वह दरवाजे की तरफ देखकर हैरान रह गया।

'क्या हुआ है, गोपाल?'

'बताता हूँ।'

गोपाल करीब आ गया। बोला, 'तुम घर चलो।'

'क्यों? यह क्या, ये सब क्यों आये हैं? गोपाल तुम्हारा क्या दिमाग खराब हुआ है?'

'जी नहीं।'

एक आदमी आगे बढ़ आया। कुन्दन नाराज हो गया।

'क्या हुआ है, आरबी?'

'जी, गणेशी प्रसाद यहाँ आया है।'

'कब ? इस कमरे में नहीं, बाहर चलो।'

वे सब बाहर निकल आये। गोपाल उन लोगों के बीच बेचैनी महसूस करता है। भाई की तरफ बेबस निगाहों से देख रहा है।

आरबी और दूसरे सब एक साथ बातें करते रहते हैं। गणेशी कलकत्ता आया है। मौलालि में उसने एक बासा ले लिया है। वह आज ही वड़ा बाजार गया था। गद्दी पर गोपाल को बैठा देखकर साथ के आदमी से बोला है, 'यह नहीं, कुन्दन। कुन्दन के बारे में कह रहा हूँ।'

'तो इससे क्या हुआ। साला डरपोक, औरत जात, इससे क्या हुआ ?'

'हुजूर, इसके बाद ही उन लोगों ने भीम का खून किया।'

'क्या ?' कुन्दन चिल्ला उठा। 'भीम तो घर पर रहता है। भीम का उन लोगों ने खून किया है, कौन कहता है ?'

'जी खून किया गया है, चौरास्ते पर। शायद उन लोगों ने जबर्दस्ती झगड़ा किया।'

'मारा है, किसने ?'

'आन्टुनि बागान का सितार।'

'वे सब हैं कहाँ हैं ?'

'सितार थाने में है। लाश पुलिस ले गयी है। गणेशी छिप गया है।'

कुन्दन बोला, 'उन लोगों को जो होना है, होने दो! गोपाल तुम चिंता न करो।'

गोपाल का मुँह लाल है। गोपाल संभवतः डर गया है। वह धीरे-धीरे बोला, 'घर में सभी डर गये हैं। तुम अकेले हो।'

कुन्दन थोड़ा हँसा। बोला, 'गोपाल, साँप का डँसना आदमी नहीं रोक सकता। साँप चुपचाप आता है। आदमी जान नहीं सकता। गणेशी ऐसा ही है। वह केवल चोर गली खोजेगा, बिछुआ मारना

चाहेगा। प्रकाश में डर नहीं, अन्धकार में ही डर है।'

आरबि बोला, 'हूजूर के इस बासा में बहुत झाड़-झंकाड़ और वृक्ष हैं। छिपकर रहने में सुविधा है।'

वे सभी नीचे उतर पड़े।

गाड़ी की तरफ चलते-चलते कुन्दन बोला, 'शायद उसके हाथों में रुपया पैसा है?'

'वह तो होगा ही। उन् लोगों का भाग्य भी अद्भुत है। एका एक आता है।'

कुन्दन गाड़ी पर चढ़ा। गोपाल के कंधे पर हाथ रखकर बोला, 'चिंता न करो। मैं जानता हूँ, तुम्हारा होशियार रहना अधिक जरूरी है। लड़का है, लड़की है। मैं सारा इन्तजाम कर दूँगा।'

ग्यारह

भीम मर गया। गणेशी छिप गया। कुन्दन कई दिनों तक यह सब लेकर ही व्यस्त रहा। गणेशी आया है, यह पता चल गया है। क्योंकि शहर में यहाँ-वहाँ से पक्के हाथों की जालसाजी और ठगबाजी की खबर मिलने लगी है। कुन्दन को बुलाकर उसकी माँ और दादी होशियार रहने को कहती हैं। आजिज आकर कुन्दन ने घर के भीतर जाना ही बन्द कर दिया।

एक बार दादी आयी। 'हाँ रे, कुंदन, किसी की बात क्यों नहीं सुनते हो? डर नहीं लगता है?'

'किसका डर?'

'वह तुम्हें मारेगा।'

'मैं क्या कोई चूहा हूँ? जो मुझे दाबकर मार देगा?'

'तुम न हो तो कुछ दिन घर पर ही रहो। बाहर नहीं निकलना।'

कुन्दन नौकरों को बुलाकर कहता है, 'अन्दर से किसी को उसके कमरे में नहीं आने दिया जाय। दरवाजा बंद रहेगा।'

वह और भी कई हुक्म जारी करता है। उसे कोई जैसे झूठ-मूठ तंग न करे, उसका मन-मिजाज अच्छा नहीं है, वह घर-संसार के झमेले में नहीं पड़ना चाहता है। सभी डर गये। आड़ में बातचीत की, मालिक का मन-मिजाज बिगड़ गया है।

'भीम मर गया है, इसलिये दुखित है।'

'कौन बोला?'

'भीम को बुला-बुला बातें जो करते थे! भीम मालिक का बहुत पुराना मल्लाह था।'

'कुन्दन को सचमुच दुःख हुआ है।'

बहादुर और दुःसाहसी भीम। बजरंगी को तो उसी ने पाल पोस-कर बड़ा किया था। पता नहीं कितनी कोशिश से पानी से निकाला था। देख-रेख भी की थी निश्चय ही, नहीं तो क्या उतना छोटा बच्चा बच सकता था?

भीम कहा करता, 'मालिक उसे अपनी भाभी के पास ले गया। भाभी बाजार आकर तरकारी बेचती। बाल-बच्चा नहीं रहने के कारण बड़ा दुख था। बचपन में दूध पिला-पिला कर उसने आदमी बनाया है। ऐसा न होने से क्या बचता? भाभी अधिक दिनों नहीं बची। इसके बाद उसे अपने पास ले आया।'

भीम बहुत हँसता था। बोलता, 'क्या पता, किस तरह लड़के को बड़ा कर लिया।'

वही भीम अब चला गया।

गणेशी को तो कुन्दन बिल्कुल भूल चुका था। पुश्त दर पुश्त का विरोध, यह सब बातें जैसे कहानी सी लगती हैं। लेकिन गणेशी ही भला क्या कर लेगा। गोपाल को न हो, न सही, लेकिन कम-से-कम कुन्दन को बिना मारे उसे चैन नहीं मिलेगा। सम्भव है कि वह गोपाल

को, गोपाल के तीन बच्चों को, सबको मारेगा। फिर कुन्दन को, फिर उसके बाद कुन्दन को छोड़कर यदि गोपाल को मारे तो शायद कुन्दन भयंकर बदला लेगा। गणेशी के बाल-बच्चों को मार डालेगा। उसके पहले कुन्दन को मार देना ही आवश्यक है।

कुन्दन ने आरबि को बुला भेजा। उसे एक बात याद आयी है। पूछा, 'क्यों रे आरवि, गणेशी तो पिछले वर्ष भादों में एक बार चंदन नगर गया था, नहीं गया था ?'

'जी।'

'उस समय कलकत्ता क्यों नहीं आया था ? पता लगाया था ?'

आरबी परेशान भाव से बड़बड़ा कर पता नहीं क्या बोल कर चुप हो गया।

'बोलो। लगता है तुम जानते हो....?'

'जानता हूँ माने क्या, सुना था।'

'बोलो !'

'आप नाराज होंगे।'

आरवि की कमर में छुरी बँधी हुई थी। कुन्दन ने छुरी ली, बड़ा अच्छा टेढ़ा फल, छोटी छुरी। कारूकाम किया हुआ बेटा। छुरी उछालते उछालते कुन्दन बोला, 'बड़ी अच्छी छुरी है न ! सुन्दर धार।' अचानक उसने छुरी आरबि के पेट पर रख दी। हँस-हँस कर ही बोला, 'बताओ ! नहीं तो यही छुरी पेट में इस पार से उस पार निकाल दूँगा।'

आरवि हँसा। लेकिन उसकी आँखों के नीचे आंतक छा गया। कुन्दन की हँसी में जितनी देर, छूरी भोंकने में भी बस उतनी देर लगती। सूखे गले से वह बोला, 'बताता हूँ।'

कुन्दन ने छूरी हटा ली।

'बजरंगी था, इसीलिये गणेशी नहीं आया था।'

'बजरंगी था, इसलिये ? क्यों ? उससे क्या हुआ ?'

'सभी कहते हैं।'

'क्या कहते हैं ? अरे क्या कहा करते हैं ? यही तो जानना चाहता हूँ रे। तुम्हारे मुँह में तो जैसे बात ही नहीं है। अरे औरतजात, शर्मीला, शैतान कुछ बोल भी तो!'

'सभी जानते हैं कि बजरंगी आपकी रक्षा करता था। सभी जानते हैं कि वह जंतर-मंतर जानता था। वह जब तक था, तब तक आपको मारने का उपाय नहीं। जिस समय आपको साँप ने डँसा, उस समय आप क्यों न मरे, ? क्यों न मरे ? बजरंगी था, इसीलिये तो।'

'आरबि, ऐसी अजीबो-गरीब बातों पर तुम भी विश्वास करते हो ? मुझे दंडराज साँप ने काटा था। अरे, कहीं दंडराज में भी जहर रहता है ? उसके काटने से भला कौन मरेगा ?'

'दंडराज ?'

'हाँ, आरबि।'

आरबि और कुछ भी न बोला, लेकिन विश्वास उसे नहीं हुआ। कुन्दन मज़ाक करता हुआ बोला, 'अब मेरे मरने का समय आ गया है ?'

'जी, वह पता लगाकर देख रहा है, बजरंगी है या नहीं।'

'किस तरह जाना तुमने ?'

'मैं जानता हूँ। मैंने अफवाह फैला दी है कि बजरंगी तीर्थ करने गया है। बस अब आ ही चला।'

'ओ!'

कुन्दन आरबि की ओर देखता रहा। वह नाराज हो गया है, या खुश हुआ है, आरबि समझ नहीं सका। सिर्फ पूछा, 'हुजूर वह कब आयेगा ?'

'आरबि, तुम जाओ।'

आरबि डरता हुआ दरवाजे की ओर बढ़ गया। कुन्दन ने छुरी उठा ली।

'लो।'

कुंदन ने छुरी फेंक दी। आरश्चि ने लोक ली। आरवि चला गया। कुन्दन अशान्तभाव से चहलकदमी करने लगा। उसका मन आरश्चि बेचैन कर गया। लोग जानते हैं, बजरंगी उसका रक्षा-कवच है। लोग जानते हैं, बजरंगी परदेश गया है, फिर वापस आयेगा।

उदास भाव से कुन्दन ने सिर हिलाया। उसने गाड़ी मँगवायी। गाड़ी पर बाहर गया और उसने टोकरी भर कर फल खरीदा। फल, मिठाई, सफेद किनारे की रेशमी साड़ी व चोली। शिरीन उसे देखकर हैरान हुई। नीचे आई।

ऊपर वाले कमरे में वह बैठा। चंचल और अशान्त कुन्दन। बोला, 'जाओ, जाओ, नयी साड़ी पहनकर आओ।'

नयी साड़ी पहनकर शिरीन आयी। कुन्दन के सामने बैठी। बर्फ के टुकड़ों में अँगूर डाल दिये गये। सेव छील कर चक-चक कर दिये गये। कुन्दन बोला, 'अच्छा नहीं लगता है। एक बार दिल्ली जाने की इच्छा होती है। चलोगी?'

'मैं?'

'हाँ, तुम!'

कुन्दन हँसने लगा। बोला, 'तुम और मैं, दोनों उम्र में भी फबने लायक हैं। दोनों एक दूसरे को नहीं देख सकते। दोनों सारा दिन, पूरा हफ्ता, ऐसा क्या, महीना बीत जाने पर भी एक दूसरे को याद नहीं करते। हम दोनों एक साथ रहने पर भी, मैं लायली की बातें सोचता हूँ और तुम निसार की। हम दोनों ही तो एक-दूसरे के लायक साथी हैं, शिरीन!'

'मजाक कर रहे हो?'

'नहीं। मैं तो सोच रहा हूँ कि इस बार दोनों एक दूसरे के दोस्त होंगे। क्यों, राजी हो?'

'नहीं?'

'क्यों ? अकेली रह-रहकर तुम भी थक जाती हो, यह क्या मैं नहीं जानता ?'

'सच । अब अकेली नहीं रह सकती । जानते हो ? भाई भतीजा सबको आने के लिये कहा है ।'

'बहुत अच्छा किया है । अपना तो कुछ नहीं हुआ । अब परायों को लेकर सुखी रहो । तुम स्त्रियाँ बहाना बनाना बहुत जानती हो ।'

शिरीन थोड़ी देर चुप रही। पता नहीं क्या सोचती रही । इसके बाद कुन्दन की बातों का बिना जवाब दिये ही बोल उठी, 'अभी-अभी एक बात याद आयी है ।'

'क्या ?'

'अचानक ही याद आयी है ।'

'बोलो ।'

'जानते हो, लायली तुमसे एक बात छिपाये रखती थी । उसने बजरंगी को पहले ही देखा था । पहले से ही उसे पहचानती थी ।'

'क्या कहती हो ?' कुन्दन रूखे गले से पूछ बैठा ।

'ठीक ही कह रही हूँ । लायली से जिस दिन आखिरी मुलाकात हुई थी, उसी दिन उसने यह बताया था । पहले नहीं बताया था ।'

'क्या बोली थी ?'

शिरीन कहती गई ।

उस दिन लायली ने शिरीन को बुलाया । शिरीन के साथ वह आलिशाह के महल में गई । वहाँ कुछेक क्षण रही और पूर्व-परिचित कई आदमियों को निमंत्रण दे आई । शाम के समय कंडीलों से घर और फुलवारी सजाई गई । रोशनी ही रोशनी । हॉल में एक बहुत बड़ी कालीन बिछाकर उस पर स्वादिष्ट भोजन सामग्री सजाई गई । एक चीनी बावर्ची बुलाया गया था, वही रसोई पकाता था ।

महान आयोजन एवं अभ्यर्थना की बहार देखकर सब के सब

हैरान थे। आलिशाह के दरबार का तबलची, सारङ्गीवाला, तीन कवि, दो विगत यौवना नर्तकी, शीशे की सुराही में शरबत, बोतल पर बोतल अच्छी शराब। बर्फ, फल, राबड़ी और फिरनी। बड़े-बड़े शीशे के बर्तन में नाना किस्म के माँस। खुशबूदार पेशावरी चावल और माँस की बिरियानी। अंडा, माँस और छीमी मटर का चीनी पोलाव।

उस उत्सव में निसार भी आया था।

बड़े ही आनन्द के साथ खाना-पीना हुआ। उसके बाद सभी चले गये। शिरीन को लायली ने जाने नहीं दिया। शिरीन को साथ लेकर वह अपने कमरे में आई। उसकी बात-चीत शिरीन को बड़े बे सिर पैर की लगी। इसके पहले वह जैसे बहुत उच्छृखंल और चंचल हो गई थी। अभी जैसे बहुत ही गंभीर, थकी-थकी सी और उदास थी।

उन दोनों ने ही स्नान किया।

टब में गरम पानी, उसमें लंवडर और 'बाथ सॉल्ट' डाल दिया गया था। लायली नहाकर भींगा केश लिये निकल आई।

शिरीन को नींद आ रही थी। वह और लायली दोनों दो छोटे-छोटे बिछावनों पर सो रहती हैं। अचानक लायली ने उसे धक्का मार कर उठा दिया।

बोली, 'शिरीन सुन रही हो?'

'क्या?'

'किसी ने पुकारा था?'

'नहीं तो।'

शिरीन ने कहा, 'नीचे दरबान है, गोरखा संतरी भी पहरा दे रहे हैं। डाल कुत्ते (शिकारी कुत्ते) भी खुले हुए हैं। कौन आयेगा?'

उसी समय अचानक लायली बोल उठी, 'शिरीन बजरंगी को मैं बहुत पहले से ही पहचानती हूँ। यह बात कुंदन को नहीं बता सकी। क्या कोई दोष हुआ है?'

शिरीन उठ बैठी।

आँख मुँह पर पानी छिड़का। मुँह में पान और जर्दा। बोली, 'तम्बाकू चढ़ाने को कहो। गड़गड़ा लाने को कहो। सारी रात बातें करने का शौक चर्राया है तो फिर इस तरह खिलाया क्यों ?'

लायली को देखकर वह हैरान हो गई। कमरे के कोने में एक बत्ती। लायली ने एक बहुत ही पतली सफेद साड़ी पहन रखी है। पतली, बिल्कुल पतली। उसका पाड़ काला। लेसवाली सफेद रङ्ग की कुरती पहन रखी है, केश खुला हुआ है। कंधा ढँककर, छाती के ऊपर से बिछावन पर केश फैला हुआ है।

हैरान होकर शिरीन ने देखा, उसने सभी जेवर खोल फेंके हैं। उसने पूछा, 'क्या हुआ है ?'

'नींद नहीं आती।'

दासी गड़गड़ा ले आई। हठात् लायली ने कहा, 'नयी मोम-बत्तियाँ लाओ।'

'जी।'

'नयी मोमबत्ती लाने को कहो।'

लायली मोमबत्तियाँ लेकर जहाँ तहाँ लगाती है। फर्श पर, गुलदस्ते में, दीवार पर लगे पीतल के ब्रेकेट में, चौखट पर। बोली, 'गड़गड़ा देकर चली जाओ। अब इधर नहीं आना।'

इसके बाद कहती है, 'शिरीन मेरी बातें सुन रही हो ?'

'सुन रही हूँ, हैरान हुई हूँ। किस तरह पहचाना ?'

'बहुत दिन पहले की बात है, शिरीन। एक बार ईश्वरलाल जी मुझे और मेरी माँ को लेकर काशी गये थे। उस समय मेरी उम्र बहुत कम थी। बारह वर्ष हो सकती है।'

'लायली, बारह वर्ष में तुम अच्छी बड़ी हो गयी थीं।'

'काशी में एक नाव किराए पर ली। नाव नहीं, बजरा। उस बजरे में चार कमरे थे। बजरा के पीछे एक नाव और बँधी थी। एक कमरे में मैं रहती थी। एक कमरे में गाना-बजाना होता था।

एक में माँ और एक में ईश्वरलाल।'

'फिर ?'

'उस बजरे का रंग हरा और सफेद। बजरे की छत पर एक झंडा। बजरे पर लिखा था, बाबूलाल मिश्र। उस समय क्या पता था कि वह कुन्दन का ही बजरा था ?'

'अच्छा !'

'वही बजरा लेकर हमलोग इधर पटना, उधर कानपुर तक जाते। हमारे बजरे के साथ नाव रहती। उस नाव पर रसोई बनाने का सामान रहता। उस नाव पर एक लड़का था। उसका नाम था बजरंगी।'

'लायली, यह कौन सी ऐसी बात है। यह बात तुमने कुन्दन से क्यों नहीं बतायी ?'

'क्या पता ? भूल हो गयी।'

'बजरंगी ने भी क्या तुम्हें नहीं पहचाना ? या तुमसे बातें करने का उसे साहस ही नहीं हुआ।'

'शिरीन, यह हम लोगों का नौकर था। नौका जब बँधी रहती, वह हम लोगों का सौदा खरीद कर ले आता। मेरी माँ उससे बातें ही क्यों करने देती ?'

'क्यों री, क्या सोयगी नहीं ? केवल अंट-संट ही बातें करेगी ?'

नींद जो नहीं आती। जो-सो बात सोचते-सोचते यह बात याद आयी। नींद ही नहीं आती।'

लायली मीठी और करुण आवाज में बोली, 'नींद नहीं आती, नींद नहीं आती !'

कुछेक क्षण गपशप करके शिरीन फिर सो गई। लेकिन नींद फिर नहीं आ पाती। टूटी नींद, हल्की नींद। शायद रात के तीन बजे उसकी नींद फिर टूटी।

लायली बिछावन पर नहीं थी।

शिरीन उठी । बिछावन छोड़कर कमरे से बाहर निकली। सामने वाले कमरे में बत्ती जल रही थी।

कुन्दन को यह बातें बताते हुए, शिरीन का गला काँपने लगा। वह बोली, 'उस कमरे में आयी। आकर बहुत डरी। लायली इसी आईना के सामने खड़ी थी। उसकी आँखें बन्द थी। वह फुसफुसा कर बोल रही थी।'

'बोलो।' कुन्दन का गला कठोर।

'हाय अल्ला, मैं देखती हूँ, उसका आँचल लोट रहा है। कमरे में एक मोमबत्ती जल रही है। आँचल शायद जल उठता है। मैंने उसे जोर से झकझोरा। उसे होश आया। वह भी हैरान हुई। चिल्ला पड़ी। मैं उसे पकड़ कर कमरे में ले गई। सुला दिया। उसकी छाती पर हाथ रखकर पाँच पीर का नाम जपा। दूसरे दिन जब वापस आई तो उस समय भी वह सोयी हुई थी।'

'इसके बाद ?'

'इसके बाद की बातें और न पूछो कुन्दन। मैंने सोचा, बेचारी पर किसी ने जादू-टोना किया है। उसे रात में बुलाया। मैं मानिकतल्ला गई। पाँच पीर के दरवाजे पर गई। अपनी बूढ़ी बुआ के पास गई। दवा और तावीज ले आयी। अच्छी तरह रक्खी। दूसरे दिन जाकर पहनाऊँगी। लेकिन दूसरे दिन सुबह मेरे दरवाजे पर धक्का पड़ा।'

वह बात शिरीन को जिंदगी भर याद रहेगी। सुबह-ही-सुबह दरवाजे पर धक्का! किवाड़ खोलने पर दासी हैरान। सभी आकर दरवाजे पर खड़ी हैं।

'मालकीन हुजूर, बहुत बड़ी विपत्ति।'

'क्या हुआ है ?'

एक चीत्कार सुनी गयी। असंबद्ध बातें कहते कहते, चिल्लाती-चिल्लाती लायली की दासी आयी। आते ही, शिरीन के पैरों पर लोट गयी। उसके पीछे-पीछे था निसार।

निसार का चेहरा सफेद, होंठ काँप रहे थे, शरीर काँप रहा था। वह बोला, 'सर्वनाश हो गया, शिरीन।'

शिरीन बोली, 'कुन्दन तुम निसार के पास जाओ -'

'निसार ? तुम क्या सपना देख रही हो।'

'निसार आया है, कुन्दन। मैं यह खबर तुम्हें खुद ही देती। प्यारे साहब के साथ निसार आया है। प्यारे साहब को आलिशाह ने बुलाया है।'

'निसार। निसार क्या जानता है ?'

'निसार उसके कई दिन पहले हठात् कलकत्ता आया था। उसे लायली ने अटका रखा था। बहुत सी बातें की थी। फिर, फिर वह लखनऊ चला गया था, कुन्दन। फिर आया है।'

'निसार से क्या लायली ने मन की बात कही थी ?'

'हाँ। वे दोनों बचपन के दोस्त थे। भाई-बहन की तरह।'

'निसार निसार !' हठात् कुन्दन को शिरीन के लिये बहुत कुछ करने की इच्छा हुई। क्या ऐसा कुछ नहीं किया जा सकता, जिससे वह बहुत खुश हो ? वह और कुछ न सोच सका। झटके में बोला, 'निसार को तुम्हारे पास ले आऊँगा।'

'मेरे पास ?'

शिरीन हँसी। उदास हँसी, शान्त हँसी। बोली, 'कुन्दन तुम क्या वह सुन्दर कविता नहीं जानते ?'

'कौन-सी कविता ?'

'टूटा हृदय और फूटा आईना, नहीं जोड़ा जा सकता ? टूटी दोस्ती क्या फिर जुड़ सकती है ? मैं ऐसी कोशिश किसी दिन नहीं करूँगी,

कुन्दन, किसी दिन भी नहीं ।'

बारह

कुन्दन खिदिरपुर के मकान में आया ।

खिदिरपुर वाले मकान की फुलवारी में आज बहुत सारी बत्तियाँ जल रही हैं । कुन्दन का हुक्म है । नौकर, दरवान, पहरेदार सभी ने सलाम किया और हाथ फैलाया ।

'क्यों ?'

ये मिठाई खायेंगे । लेकिन क्यों ? अचानक कुन्दन को याद आयी । गोपाल की स्त्री का एक पुत्र हुआ है । लेकिन अब वह हो भी गया एक महीने का ।

'मनोहर जी का तिलक हुआ है ।'

'ओ !'

कुन्दन ने उन लोगों की ओर देखा । कुन्दन के भतीजे का तिलक हुआ है, खबर पहले ही उसने पहुँचायी है ।

कुन्दन ने कुछ रुपये फेंक दिये । बोला, 'जाओ । मुझे तंग न करो ।'

वह ऊपर आया । कमरे का ताला उसने खोला । आज अच्छी ठंड है । भींगी-भींगी तेज हवा बह रही है । नदी की हवा । दूर से जहाज का गम्भीर 'भों' सुनाई पड़ता है । हवा में जूही और चमेली की गंध । नीचे हरे-हरे पौधों में गुच्छे-के-गुच्छे जूही और गुच्छे-के-गुच्छे चमेली । वर्षा का फूल, रात का फूल ।

जिस दिन लायली हमेशा-हमेशा के लिये इस घर में आयी थी ।

हमेशा के लिये । कितने दिन यहाँ रही ? इस कमरे में कोई भी चीज रखने के लिये लायली ने मना किया था । बोली थी, 'खुले कमरे में साँस लेना बड़ा अच्छा लगता है ।'

कुन्दन ने बजरंगी को बुलाया था।

'जानती हो लायली, बजरंगी ही मेरा सब कुछ देखता-सुनता है। सुनो बजरंगी, यह तुम्हारी मालकिन हैं।'

बजरंगी ने सिर हिलाया था। इसके बाद लायली बोली थी, 'गाना गाऊँगी, गाना गाने की इच्छा होती है?'

'लायली, बजरंगी से सारंगी बजाने को कहो। उसके बजाने से संगत होगी तो?'

'कुन्दन, अगर तुम्हें एतराज न हो तो मुझे भी न होगा। तुम्हारा सारंगिया क्या गाने के साथ संगत देता है?'

बजरंगी हठात् हँस पड़ा। बोला, 'जाँच कर देखो।'

'कुन्दन, तुम्हारा सारंगिया क्या अदब नहीं जानता? आप बोलना नहीं जानता?'

'लायली, तुम उसकी बातों पर नाराज मत हो। वह ऐसा ही है।'

बजरंगी ने सारंगी पकड़ी। लायली ने सबसे पहले गाया, 'नीर भरन कैसे जाऊँ?'

गाना सुन कर कुन्दन ने कहा, 'बहुत ही अच्छा गाना है। गाने के समय वह कितनी सुन्दर लगती है, देखा न बजरंगी?'

बजरंगी घबड़ाकर बोला, 'मालिक इस तरह बातें नहीं करते।'

'क्यों रे?'

'गाना अच्छा लगा या नहीं, यह पहले अच्छी तरह कहना चाहिये।'

लायली कौतुहल के साथ हँसी। लायली ने कहा, 'सारंगिया, तुम तो बड़ी अच्छी बातें करना जानते हो?'

बाद में बजरंगी बोला, 'मलिक तुमने यह क्या किया?'

'क्यों रे?'

'मैंने इतना कहा....।'

'अरे पागल, तुमने मालकिन लाने को कहा था, इसलिये तो उसे

ले आया ।'

'मालिक, तुमने एक अच्छी लड़की, सुन्दर लड़की से शादी क्यों नही की ?'

'एँ, यह भी तो बड़ी अच्छी है।'

कुन्दन ने फिर कहा, 'बजरगी, इसकी जैसी जिद है, वैसी ही खामख्याली भी। इसे क्या कोई वश में कर सका है ?'

'समझ गया मालिक।'

'उसके खुश होने पर ही मैं सुख पाऊँगा।'

बजरंगी देखता रहा, कुन्दन फिर बोला, 'तुम यहीं रहोगे।'

'तब फिर तुम्हें कौन देखेगा ?

'मैं भी अधिकतर यहीं रहूँगा।'

'इसके बाद तुम तो वापस चले जाओगे, मैं यहाँ रहूँगा ?'

कितना भोला-भाला है बजरंगी। लायली उसकी जिंदगी में आयी है, कुछ उलट-पलट तो होगा ही। कुन्दन को गुस्सा भी आया, ममता भी हुई। वह डपट कर बोला, 'बजरंगी, तुम्हारे यहाँ रहने से मैं निश्चिन्त रह सकूँगा। मालकिन को कोई तकलीफ हुई या नहीं, तुम देख रहे हो, जान कर मैं निश्चिन्त रहूँगा नहीं तो वहाँ किस तरह रहूँगा !'

बजरंगी का चेहरा चमक उठा। वह बोला, 'तुम जो कहते हो, वही होगा।'

उसने कुन्दन की कमीज उतार दी है। कुन्दन के लिए पंखा झला है। बोला 'तुम सुखी रहोगे तो ?'

'तुम खुश होगे ?'

'तुम्हारे सुखी रहने में ही मेरी खुशी है।'

कुछ सोच कर वह बोला, 'मैं रोज भगवान से प्रार्थना करूँगा, ताकि नयी मालकिन तुम्हें बहुत प्यार करें।'

कुन्दन आईने के पास गया। आईने का ढक्कन खोला। नहीं, कहीं भी तो कुछ नहीं। कहाँ क्या रहेगा? मरने के बाद यदि दूसरा संसार होता! वह आईने के पास वाली दीवार पर सिर टेके चुपचाप खड़ा रहता है। बहुत अच्छा लगता है।

अच्छा नशा आ रहा है। सिर्फ चिन्ता के कारण इतना नशा है, किसे पता है! सिर्फ चिन्ता करो, यादों में डूबे रहो। धीरे-धीरे रिमझिम-रिमझिम कर सिर के अंदर शराब का बुलबुला उठता रहेगा। उससे शान्ति मिलेगी। कुंदन चुपचाप खड़ा रहा।

कितना गंभीर मौन। एक भी आदमी बात नहीं करता, एक भी शब्द नहीं। नौकर और दरबान भी बाहर। इस मकान के कमरों के दरवाजे-दरवाजे पर ताला लगा है। कुन्दन को ऐसा लगा, यह कमरा जैसे बहुत ज्यादा शान्त है।

इसके बाद ऐसा लगा, इस अपार, अतल शान्ति वाले दिल में जैसे रिमझिम की आवाज होती है। इतनी धीमी, कान खोलने पर भी सुनायी नहीं देती।

इसके बाद ही जैसे एक क्षीण सुगंध फैल गयी।

धूप का धुँआ जिस तरह धुधुआ-धुधुआ कर उठता है, उसी तरह जैसे यह सुगंध कुन्डली खोल रही है।

उसे क्या सचमुच नशा हुआ है? आज कहने भर के लिये कुन्दन ने ब्रांडी पी है। वह नशेबाज नहीं है, ऐसा नशा तो वह कभी नहीं करता। लेकिन, उसके शरीर का रोम-रोम जैसे खड़ा हो गया है। शरीर के हरेक रोम-कूप की जड़ में पता नहीं कौन उत्तेजना ला रहा है!

चमेली के इत्र की सुगंध!

वह सुगंध जैसे नाच के छंद की तरह फैल गयी। पल भर में ही कुन्दन को घेर लिया जैसे।

लायली ! वह बोला जरूर, लेकिन उसके होंठ नहीं हिले। उसने कान लगाया। असंभव की आशा में उसकी आँखें बड़ी-बड़ी हो गयीं। कपाल पर पसीना छा गया।

इस बार वह निश्चय ही वह आवाज सुन पायेगा। निश्चय ही चमेली के इत्र की सुगंध की तरह वह गाना भी उभर कर आयेगा। वही, 'लगता नहीं है जी मेरा।'

कुन्दन ने देखा। अच्छी तरह देखा। आयी है या नहीं ?

शायद अभी-अभी आयेगी।

एक लम्बी साँस। किसी ने जैसे उसके कंधे के पास ही एक ठंडी साँस छोड़ी।

निःश्वास नहीं छोड़ी है। नहीं, नहीं, किसी ने निःश्वास नहीं छोड़ी है। कोई भी इस कमरे में नहीं है।—अपने मन को कुन्दन ने समझाया, लेकिन फिर उसके शरीर के सभी रोम खड़े हो गये है, बाल की जड़-जड़ में जैसे वह एक मीठी जलन का अनुभव करने लगा।

लायली आयी है। आयी है, इसी कमरे में है। इसी आईने में है। इसी आईने में अभी-अभी उसका चेहरा दिखाई देगा। वही कुछ लम्बा नुमा चेहरा, केश की सुन्दर बनावट। पतले होंठ, काली आँखें जैसे बिजली खेल रही हो।

कुन्दन आईने का ढक्कन खोल फेंकता है। हाथ काँप रहा है। लायली, लायली, लायली !

कोई भी नहीं।

किसी ने जैसे कुन्दन के कपाल पर तमाचा मारा। किसी ने जैसे अट्टहास किया। जैसे कोई खिलखिला कर हँस के कहता है, 'बेवकूफ !'

कोई भी नहीं। सब कुछ कुंदन के मन का भ्रम है। सब उसके मन की कल्पना है।

यही तो, आईने में केवल कुन्दन के ही चेहरा की छवि है। हताशा की अभिव्यक्ति ! निराशा की प्रतिछवि !

कुंदन ने अपने आपको कमजोर अनुभव किया। हाथ काँप रहा है, पाँव के नीचे सरसराहट हो रही है। वह उठकर बैठ गया।

हवा में चमेली की गंध भी नहीं। लायली आसमान के आईने में फिर लायली के मुँह की छवि और नहीं दिखेगी। कुंदन ने धीरे-धीरे आईना ढँक दिया। बाहर निकल कर कमरे का ताला बन्द किया। नीचे उतर पड़ा।

बहुत बड़ी फुलवारी। वर्षा के पानी से घास बड़ी-बड़ी हो गयी है। हरी और कोमल घास में पाँव डूब जाता है। जूही व चमेली की झाड़ियों से मीठी-मीठी सुगन्ध आ रही है। इधर चिड़ियों का एक कमरा। जाल से घिरा हुआ। कमरा काफी ऊँचा। एक अमरूद, एक हाता और कई एक पेड़ों को घेर कर कमरा बनाया गया था। बजरंगी ने खुद ही बनाया था। कुन्दन ने देखा कि कमरे के एक कोने में अमरूद का पेड़ जाल के फाँक से पतली-पतली डालियाँ निकाल रहा है। किसी ने जैसे पंख फड़फड़ाये। सोते-सोते चिड़ियाँ वैसा ही करती हैं।

कुंदन आगे बढ़ता गया। आवारा की तरह वह घूम रहा है। घास के ऊपर से, पेड़ के नीचे-नीचे। कितने पेड़! जिस समय कुंदन ने मकान खरीदा था, उस समय कुछेक पेड़ ही थे। बजरंगी ने एक-एक कर इतने पेड़ लगाये। वह गाछ की खाद लाकर रखता और कुंदन की दादी के पास जाता।

'अरे बजरंगी, बार-बार अंदर क्यों जाते हो?'

'मालिक, अब एक शुभ-दिन खोजना होगा।'

'क्यों रे?'

'शुभ दिन देखकर ही तो फिर गाछ लगाऊँगा।'

'गाछ लगाओगे, उसके लिये भी शुभ-दिन?'

'हाँ।'

वह शुभ दिन देखकर गाछ लगाता। बड़े ही यत्न से गाछ बड़ा करता। वह माली से कह सुन कर आलिशाह की फुलवारी देख

आता । इसके बाद उसे कितना दुख होता ।

'मालिक उन लोगों के सब पेड़ बच गये । मैंने इतने शौक से लगाया, एक भी गुलाब का पौधा नहीं बचा ।'

बीच-बीच में असमय ही भागा-भागा आता । आँख-मुँह में खुशी की चमक 'मालिक हम लोगों के नये आम के पेड़ में मंजर आया है ।'

'मालिक देखो, देखो, चीनी-जवा पहली बार फूला है । तुमने कहा था, यह फूल देखने में अच्छा नहीं होता ? अबी देखो तो ?'

इस समय उन्हीं गाछों में ढेर से जुगनू । अंधकार के फूल । बड़ी बड़ी घास । उसके रहने पर रोजाना घसियारिन सब घास काट कर ले जाती । 'मालिक इस घास की बाल पर कीड़ा रहता है । कीड़े से तितली पैदा होती है, जानते हो ?'

फुलवारी के एक तरफ एक कमरा ।

कुंदन कुंडी खोलता है । दियासलायी जलाता है और आगे बढ़ जाता है । यह तो रही धूल पर पड़ी हुई एक छोटी-सी मोमबत्ती । वह और भी एक काठी जला लेता है ।

नीचे चौकी पर जमी धूल । दीवार पर सारंगी झूल रही है । खूँटी पर दो-एक धोती और कमीज ।

मकान के नीचे वाले तल्ले के दो कमरों को, केवल उसी के लिये कुंदन ने सजा दिया था । वही कमरा छोड़कर वह एक दिन चला आया था । यह कमरा कितना लाजवाब है ! इस कमरे से गंगा दिखाई देती है ।

'मालिक, इस जंगले को खोल देने से मैं गङ्गा की हवा पाता हूँ । देखो, घर की नींव कितनी ऊँची है । यहाँ रहना मुझे बड़ा अच्छा लगेगा ।'

'अपना सामान ले आओ ।'

'लाऊँगा । लाऊँगा ।'

कई दिनों बाद कुन्दन ने पूछा, 'अरे अभागे, सामान तुम लाए

नहीं ? एक चौकी, एक खूँटी, बस ? यह तो एक टेबुल भी आया है, देखता हूँ। फिर रामायण ले आये हो ? क्यों रे बजरंगी, तुम फिर तुलसीदास को ले आए ?'

'मालिक कभी-कभी पढ़ूँगा।'

'पढ़ो, वही पढ़ो। सीधे स्वर्ग जाओगे।'

कुंदन लम्बे-लम्बे डग भरता हुआ चला गया। कई दिनों बाद, बजरंगी कमरे में नहीं था। बजरंगी नहा कर आया।

'क्यों पंडित जी, तुम्हारी रामायण कहाँ है ? तुम्हारा सफेद साँढ़ कहाँ है ? इस किताब की जिल्द पकड़ कर तुम झूलते-झूलते स्वर्ग जाओगे।'

'रख दी है।'

'कहाँ ?'

'मकान के उस कमरे में। अपनी पेटी में रख दी है।'

'क्यों ? मैं आया हूँ इसलिये ? पापी आया है इसलिये ?'

इस बात का बजरंगी कोई जवाब नहीं देता। बहुत नाराज हो कर कुन्दन को बाँकी निगाहों से देखा और जोर-जोर से अपने बाल नोचे। एक फीता वाली पंजाबी कुर्त्ता, एक धोती। तलवा पोंछकर उसने नागरा पहना। कुन्दन ने फिर कहा, 'चलो, पापी के साथ ही चलो।'

दोनों बीच गंगा में नाव पर चढ़े। बजरा चल रहा है, कुन्दन छत पर सोया हुआ था। बजरंगी पास ही बैठा था। हठात् बजरंगी ने बोलना शुरू किया, 'अच्छा किया है। रामायण अब मैं नहीं पढ़ूँगा ?'

'क्यों गुरुजी ? क्यों पंडा महाराज ?'

'गंगा किनारे रहकर, रामायण पढ़ने से क्या होगा ?'

'क्यों, स्वर्ग जाओगे ?'

'मालिक तुम तो नहीं जाओगे ?'

कुन्दन उठ बैठा। उसके बालों को पकड़ कर झिझकोरा और

कहा, 'नहीं जाऊँगा। आप नारदमुनि हैं। आप वाल्मीकि हैं। सब जान सुन कर बैठे हुए हैं। न जाऊँगा तो न सही। तुम्हारा इससे क्या ?'

बजरंगी हँस पड़ा। बोला, 'तुम्हारे दादा, तुम्हारे पिता, और भी कितने ही आदमी, सब-के-सब स्वर्ग जायेंगे।'

'क्यों ? अरे तुम्हारा शास्त्र-ज्ञान तो उलट-पलट गया। जो खुद समझते हो, वही ठीक है। क्यों रे ?'

'वे सभी मणिकर्णिका में जलाये गये हैं। तुम कहाँ मरोगे, तुम्हें कहाँ जलाऊँगा, यह क्या तुम जानते हो ?'

'क्या तुम्हारे पहले मैं मरूँगा ? देखो, हस्तरेखाएँ देखो।'

'मालिक मैं रामायण पढ़कर अवश्य स्वर्ग जाऊँगा। तुम अकेले पड़ जाओगे। इसलिये रामायण रख दी !'

कुन्दन के गले में तरलता, उसका ज्वलन्त विश्वास। कुन्दन धीरे-धीरे शान्त हो गया। उसकी तरफ देखकर कुंदन का दिल जैसे बेचैनी से अजीब-सा होने लगा। कितने ही अपराध कुन्दन करता आ रहा है। उसका प्यार लेता है, सेवा लेता है, इस अपराध का जैसे कोई प्रायश्चित ही नहीं।

'बजरंगी, तुम इन बातों पर विश्वास करते हो ?'

'विश्वास नहीं करूँगा ? मालिक, डाकू रत्नाकर जो आदमी मारा करता था, पाप किया करता था, राम-नाम लेने भर से ही उसका उद्धार हो गया। रामायण पढ़ने से जो पुण्य होता है, यह क्या तुम नहीं जानते ?'

'नहीं बजरंगी, सचमुच मैं नहीं जानता।'

बजरंगी सोचता रहा। फिर बोला, 'तुम्हें भी पुण्य लाभ हो रहा है, जानते हो ?'

'किस तरह ?' बजरंगी सब बातों की व्याख्या अपनी ही बुद्धि के अनुसार समझ बूझकर करता, कुन्दन को सुनने में बड़ा मजा

आता।

'तुम जो दादी, माँ, भाई, सबका पालन-पोषण करते हो!'

'अबे मूर्ख, यह क्या कोई पुण्य करने के लिये?'

'चाहे जिस लिये करो, करते तो हो! तुम्हें भी पुण्य हो रहा है।'

कुन्दन ने उसे एक गाली दी। बजरंगी ने कुछ सोचकर कहा, 'मुझे जो पाल रहे हो, उससे क्या पुण्य नहीं हो रहा है? मुझे कहाँ से उठा लाये हो? कैसे कीचड़ से?'

यह बात सुनते ही, कुन्दन ने उसे डाँट दिया। 'चुप रहो, अरे गदहे, सूअर, उल्लू, तुम चुप रहो। उस दिन का बच्चा, तुम! मुझसे बातें करने में जवान मर्द भी डरते हैं, और आप आये हैं मुझे तत्व की बातें समझाने! सामने से हट जाओ।'

बजरंगी हँसता-हँसता बाहर चला गया। कुन्दन के नौकर, सब सफेद चेहरा लिए बाहर बैठे रहे। मालिक के गले की डाँट-डपट सुनकर वे समझ बैठते कि बजरंगी का खून हो गया। बजरंगी को देखकर वे कहते, 'बजरंगी साहब, तुम हँसते हो?'

'जाओ बादाम लाओ, पिस्ता लाओ, शरबत बनाऊँगा।'

'कुन्दन के सामने बैठकर बजरंगी घट-घट कर भाँग का शरबत घोंटता है।

कुन्दन-बजरंगी, बजरंगी-कुन्दन। लेकिन बीच-बीच में भीम चिल्लाते हुए आता, 'अरे बाबूलाल का पोता। चिरंजी का बेटा, तुम किधर हो?'

आरबी आता, दो निग्रो आते। वे सभी कमरे में घुसते। ज्योंही घुसते, त्योंही सब कुछ छोड़-छाड़कर बजरंगी भाग खड़ा होता। फिर उसका कोई पता न चलता।

खिदिरपुर में नहीं, कहीं भी नहीं। श्यामनगर वाले मकान में, पोस्ता के गोदाम और बड़ा बाजार की गद्दी में भी नहीं।

कुन्दन कहता, 'मरने दो ! जहाँ खुशी हो, चला जाये !' लेकिन दो-तीन दिन बाद वह खुद ही आ जाता। इधर-उधर खोजता। भीम बोलता, 'शहर में डुग्गी पिटवा दो, खोज पाओगे।'

कुन्दन जानता था कि वह कहाँ मिलेगा। कुन्दन डायमंड हारबार रोड पकड़ता। जंगल-झाड़, बाँस का जंगल, सब पार कर वह एक बार बंड़से गाँव पहुँचता।

मकान के आस-पास, चारों तरफ गाछ-वृक्ष, बहुत बड़ा तालाब। कुन्दन गाड़ी खड़ी रखता। यहाँ बरगद के पेड़ के नीचे फूल और बेल-पत्र लिये स्त्रियाँ बैठी रहतीं। हलवाई चीना का मठ (मन्दिरनुमा चीनी की बनी एक मिठाई) बतासा, गुड़ का संदेश (एक प्रसिद्ध बँगला मिठाई) लिये बैठा रहता। नंगे बच्चे खेलते-कूदते। बहू-बेटी नहाती रहतीं। पालकी आती, बैलगाड़ी आती। बहुत दूर पर गगन-चुम्बी एक बहुत बड़ी कचहरी, एक नाट्य मन्दिर। टूटा-फूटा, फिर भी खड़ा है। कुलीन चौधरियों की कचहरी। वे सब एक समय पूरे कलकत्ता के जमींदार थे।

कुन्दन गाड़ी पर ही जूते उतारता। फूल लेता, मिठाई लेता। द्वादश शिव-मन्दिर की तरफ जाता। बाहर शिव-मंदिर। दीवार पर नक्काशी। वह मन्दिर-मन्दिर में फूल, बेल-पत्र, मिष्ठान और प्रणामी देता फिरता और भक्तों पर ध्यान भी रखता।

जाग्रत देवता ! ऐसे जाग्रत देवता कि साहबों ने जैसी-तैसी सलाह देकर कुछ ही रुपये में उन लोगों से पूरा कलकत्ता खरीद लिया। इसके बाद स्थिति खराब होती गयी। हरेक साझीदारों में हिस्सा। महादेव जाग्रत आँखों से बैठे-बैठे सब कुछ देखते रहे।

कुछ भी तो नहीं। कहीं भी तो नहीं दीख पड़ता। एक लम्बी साँस छोड़कर कुन्दन आगे बढ़ जाता है। कई दिन काफी मिहनत करनी पड़ी। आरबी आया, भीम भी आया। इसके बाद दोनों को लंच पर चढ़ा कर सुन्दर वन की तरफ चल पड़ा। सुन्दर वन के घने-

पन में, मातला नदी की नहर में जल-पुलिस के साथ मुठभेड़। बड़े ही कष्ट से चोरी का माल, विलायती कपड़ा, शराब वगैरह से भरी नाव बचायी गयी। जहाज के कप्तान से लेकर खलासी तक, हो सकता है सबके-सब पकड़े जायेंगे। क्या किया जाये!

लेकिन बजरंगी ने तो उसे परेशान किया। वह तो नौबतखाना के नीचे बैठा हुआ है। दीवार पर उठंग कर, आँखें लाल, गाल पर पानी का दाग सूख गया है। कुन्दन उसका हाथ पकड़ता है। हठात् बजरंगी जैसे पागल बन जाता है। सब कुछ भूल जाता है। कुन्दन का हाथ पकड़कर झिकझोरता है और बोलता है, 'क्यों, क्यों तुम उन लोगों के साथ जाओगे? क्यों; कहो, तुम अब नहीं जाओगे? मैंने तीन दिनों से लगातार महादेव की प्रार्थना की है।'

सबके सब हैरान। जो लोग कुन्दन को पहचानते और जो नहीं पहचानते, सब के सब देखते कि एक चौघोड़ी (चार घोड़ों द्वारा खींची जाने वाली गाड़ी) के मालिक, एक वयस्क आदमी को धूल व कीचड़ लगी हुई धोती कमीज पहने एक लड़का बक रहा है और, वह चुपचाप सुन रहा है।

इसके बाद दोनों वापस लौट जाते।

बजरंगी बोलता, 'तुम इतने भले हो, फिर भी ऐसा काम क्यों करते हो?

'साला, यही मेरा धर्म है।'

'झूठ, बिलकुल झूठ बात। तुम तो लालची नहीं हो, फिर इतने रुपये क्यों लाते हो?'

'चुप रहो।'

'मालिक तुम मत जाना। मुझे डर लगता है। ऐसा काम नहीं करना चाहिये।'

उस समय कुन्दन कितनी ही बातें कहकर उसे शान्त करता, माफी माँगता।

कुन्दन को वह सब बातें याद आयीं।

सुनसान शान्त कमरा।

माली लोग अब कहा करते, 'बजरंगी साहब के दिमाग का तो कोई ठीक नहीं, एक दिन इसी सारंगी के लिये वापस लौट आयेगा।'

कुन्दन ने सिर हिलाया। चारों तरफ धूल उड़ती है, शान्त हो जाती है, फिर उड़ती है।

वही रात। वही आश्चर्यजनक, अस्वाभाविक रात। कुन्दन सो रहा है। शान्त होकर सोये-सोये ही वह जैसे किसी परम शान्ति के राज्य में चला गया हो। अचानक उसे किसी ने धक्का दिया। वह जग पड़ा।

लायली! केश खुले हुए, कुरती फटी हुई, मुँह लाल। बार-बार साँस निकल रही है। लायली उसकी छाती पर पछाड़ खाकर गिर पड़ी।

याद आ रही हैं, सब बातें याद आ रही हैं।

वह और बजरंगी। बजरंगी और वह। रात का कलकत्ता। घोड़ों के खुरों की खप-खप आवाज। टूटे-फूटे बादल, अस्पष्ट रोशनी। रात पर जैसे भूतों का अधिकार हो।

बजरंगी। उसके सामने सिर झुका कर बैठा है। कुछ भी नहीं बोल रहा है। कुन्दन केवल अपनी छाती पर हाथ सहला रहा है। बोलता है, 'तुम? बजरंगी तुम?'

पानी वाले कमरे के सुरंग में उस दिन कैसी हवा थी! तूफानी हवा। समुद्र में सायक्लोन आया। कलकत्ते की सड़क पर गाछ-वृक्ष गिरे। गंगा हरहराती हुई किनारे तक आयी।

पानी वाले कमरे के बड़े-बड़े मटकों से साँप सरक कर जा रहे हैं।

'मालिक, तुम मुझे कहाँ लिये जाते हो?'

सवाल का कोई जवाब नहीं। दरवाजा खोला गया। तूफानी हवा उस सुरंग में घुस कर ऊधम मचाने लगी। गों-गों, सो-सों। कैदखाना

जैसे उमड़-घुमड़ कर रोता रहा।

वह और बजरंगी। आमने-सामने।

'देखो, बजरंगी, आज सृष्टि का अन्तिम दिन है। अकाल की तरफ देखो। चन्द्र ग्रहण। चाँद लाल हो गया है।'

'मालिक! मेरे मालिक!'

बिछुआ की मूँठ बाहर थी, इस्पाती पंजर में। शराबी की तरह बजरंगी लड़खड़ा गया। उसके बाद, उसी समय उसके गले से कितना असीम, अपार प्यार झड़ पड़ा था। जैसे पूरा प्यार देकर बजरंगी ने केवल दो नामों की रचना की। जैसे वह नाम लेने में उसका दिल फट रहा है। इसी तरह अस्फुट शब्दों में बोला, 'मेरे मालिक! मेरी मुन्नी! मेरे मेहरबान मालिक।'

उसके बाद, बादल ने आकर ग्रहण के चाँद को ढँक लिया। एक ही क्षण में जैसे सृष्टि व स्थिति को एक में मिलाता हुआ प्रलय का अन्धकार छा गया।

फिर। फिर और कुछ नहीं। कुन्दन की छाती के भीतर हृतपिंड में आग की तरह, लोहे की लाल सींक लेकर जैसे किसी ने दो आँखों की निगाहें दाग दीं।

उन आँखों में आकाश की छाया। उन आँखों में भोली-भाली ममता।

कुन्दन उठा।

दोनों आँखें आँसू से अन्धी। वह दरवाजा भी नहीं देख पाता। बेईमान, बेईमान, बेईमान! अन्धे अभिमान में गालियाँ देते हुए वह बाहर निकल आया।

तेरह

निसार को देखकर कुन्दन अवाक् ।

निसार को खोजने वह मटियाबुर्ज गया था । पता चला कि निसार वहाँ नहीं है । लाल बाजार में प्यारे साहब ने एक बासा लिया है । वहीं निसार आया है । निसार की माँ भी आयी है ।

कुन्दन वहीं गया ।

नीचे का तल्ला अंधेरा । चीनी बढ़ई काम कर रहे हैं । जीना चढ़ कर ऊपर जाते ही बड़ा अच्छा लगता है । बहुत बड़ी खुली छत । बड़े-बड़े कमरे । कमरे के दरवाजे पर परदा । दासियाँ परदे की ओट में छिपती गयीं । हाथ उठाये एक आदमी दौड़ा आया, 'रुक जाइये, रुक जाइये ।'

निसार से मिलना चाहता है । सुन कर एक महिला परदे की ओट से क्षीण स्वर में बोली, 'साहब को छत पर ले जाओ ।' सम्भवतः निसार की माँ ।

निसार छत पर बैठा था ।

वर्षा का मौसम । पर बादल नहीं । कड़ी धूप, छत के एक तरफ गमलों की फुलवारी । बड़ी-बड़ी बाल्टी व टीन मे मिट्टी भर कर जूही व दूसरे फूलों के पौधे लगाये गये हैं । बिलकुल हरी लता, चिरे हुए बाँस की धनुषाकार टेढ़ी जाफरी पर फैली हैं । उसके नीचे निसार बैठा है ।

दुबला-पतला शरीर । साफ-सुथरा कपड़ा । बाल बड़े-बड़े । कोमल दाढ़ी और मूँछ से चेहरा ढँका हुआ । निसार के चेहरे पर तपस्वी जैसा भाव । उसका व्यवहार और भी विस्मयकर । वह कबूतर को दाना व मटर खिला रहा है । एक नौकर पास ही खड़ा है ।

'क्यों, निसार, वेश बदल लिया ?'

'चुप, चुप रहो ।' निसार ने होंठ पर उँगली रखी । नौकर से बोला 'कुर्सी लाओ ।'

कुन्दन से बोला, 'रोज चिड़ियों को दाना चुगना पड़ता है, फकीर को पैसा और खाना देना पड़ता है। माँ पुण्य करा रही हैं।'

'क्यों ?'

'मर जाऊँगा, इसलिये। कुन्दन, इन लोगों ने मुझे बच्चा बना दिया है। जानते हो, अब मैं रोज नहाता भी हूँ।'

'क्या कह रहे हो ?'

'हाँ। दो बार। ये सब मुझे माँस नहीं खाने देते। सिर्फ दूध और फल। कुन्दन, मैं और नहीं बचूँगा।'

'क्यों, अच्छा-अच्छा ठीक तो हो! बहुत अच्छी तरह बातचीत करते हो। मैंने तो सुना था कि गले से आवाज नहीं निकलती।'

'नहीं। कुछ अच्छा हूँ। लेकिन बचूँगा नहीं! जानते हो, माँ क्यों आई हैं ?'

'क्यों ?'

'यहाँ से मुझे मुर्शिदाबाद ले जायेंगी। वहाँ शायद कोई बहुत बड़ा फकीर है, उनकी दवा बेकार नहीं जाती।'

'अच्छा तो है।'

निसार हँसा। बोला, 'तुम्हें देख कर बड़ा अच्छा लग रहा है। ये सब कैसे हैं ?'

'कौन ?'

'यही, शिरीन आदि।'

'शिरीन अच्छी है। तुम आओगे, यह बात तो उसी ने बतायी।'

'जानता हूँ, मेरी खोज-खबर वह रखती है।'

'निसार, क्या तुम एक दिन खिदिरपुर आओगे ? चल फिर सकते हो तो ? गाड़ी भेज दूँगा।'

'हाँ, हाँ। चल फिर सकता हूँ। लेकिन क्यों आने को कहते हो ?' हठात् निसार ने संदेह भरी नजरों से देखा। बोला, 'एक बार बहुत सारे रुपये पैसे तुमने दिये थे। वापस तो नहीं माँगोगे ? हम लोगों की

अवस्था लेकिन खोखली है। ये नौकर नौकरानी जो भी देख रहे हो, सब माँ के लिये हैं। माँ को पहले से ही आदत है। पुरानी चाल नहीं बदल सकतीं।'

'नहीं, रुपये नहीं मागूँगा।'

कुन्दन नीचे उतर आया। आते समय उसने देखा, एक हट्टे-कट्टे प्रौढ़ पुरुष जीने पर चढ़ रहे हैं। चुपचाप कुन्दन को नमस्ते किया। कुन्दन ने टोपी छू ली और उतर पड़ा। प्रौढ़ पुरुष के पहनावे में नीली पंजाबी, सफेद बेल-बूटे। सम्भवतः वही प्यारे साहब हैं। लायली के बड़े भाई।

निसार आया।

बोला, 'मुझसे तुम लायली के बारे में पूछोगे ?' वह थोड़ी देर के लिए कुछ सोचता रहा।

इसके बाद बोला, 'लायली नहीं है, बजरंगी नहीं है, इस मकान में अकेले किस तरह रहते हो ?'

'इस मकान में तो नहीं रहता न !'

'आते तो हो ! अच्छा लगता है ?'

कुन्दन ने जवाब नहीं दिया। थोड़ा झुक कर कार्पेट पर किस चीज का दाग लगा है, देखता रहा।

निसार बोला, 'समझ गया।'

'क्या ?'

'हठात् मन-प्राण का हिसाब लगाने में तुमने सब-कुछ गोलमाल कर दिया है।'

'नहीं निसार।'

हठात् निसार ने अपनी बात कहनी शुरू की। 'बड़े भाई से कहा था, इस बार मुझे छोड़ दो। मैं कितने दिन बचूँगा ? लखनऊ वाले मकान के एक कोने में पड़ा रहूँगा। लेकिन उन्होंने एक न सुनी। उन्हें

पाया है ?'

'हाँ ! कुन्दन की मैं प्यार करती हूँ। क्या नहीं जानते ?

'उसकी दासी कहा करती, 'नहीं जानती। इन लोगों के चले जाने पर मालकिन अकेली छत पर चहल-कदमी करती है। अकेली-अकेली, फुलवारी में टहलती रहती है।'

'लायली, उस समय अँधेरे से भी नहीं डरती हो ?'

'नहीं। कभी रोशनी अच्छी लगती है, कभी अँधेरा। लेकिन यह सब बात क्यों ? गाना गाओ।'

'गाना, नाच, मौज, आतिशबाजी। एक-एक दिन, एक-एक किस्म की पोशाक। किसी दिन शौक से ढाका की साड़ी, सोने का जेवर।

'देखो, देखो, लायली का नया सिंगार तो देखो !'

'लायली इतना साज-सिंगार किसे दिखा रही हो ?'

'आइने को दिखाती हूँ। अपने आइने को।'

लेकिन फिर भी लायली ने एक दिन निसार को पास बुलाया। निसार कहता है, 'उसने मेरा हाथ पकड़ा। ठंडा हाथ, जैसे सफेद पत्थर का हाथ हो। बोली, 'मैं शान्ति नहीं पा रही हूँ।' मैंने कहा, 'लायली मैं एक शराबी हूँ। मैं तुम्हें क्या बताऊँगा ?' वह बोली, 'सुनो, मेरी बातें सुनो।' कुन्दन, तुम तो जानते हो कि वह मुझे सगा भाई की तरह मानती थी।'

'जानता हूँ।'

'मुझे डाँटती, मुझ पर शासन करती। उस दिन वह रोने लगी। कुन्दन मुझे दुःख हो रहा था, मैं हैरान भी हुआ। किसे पता था कि वह एक दिन आँखों से आँसू बहायेगी। वह तो कभी रोती नहीं थी। उसकी माँ ने उसकी आँखों में कभी आँसू नहीं देखे थे। कुन्दन तुम लायली के लड़कपन के बारे में कुछ भी नहीं जानते हो, यही न ?'

'नहीं।'

लायली का लड़कपन। कुन्दन भला किस तरह जानेगा? लायली के माने ही जैसे यौवन हो। हाथी के दाँत की तरह रंग, एकदम सफेद, सादी कुर्ती, हल्के नीले रंग की साड़ी। पाँव में नागरा। सिर पर एक. बोझा केश।

'कुन्दन कबूतर ला दो।'

अच्छा लगा। एक साथ, एक सौ कबूतर खरीद लिया। मन उचटा तो सबके सब उड़ा दिये। अस्थिर, चंचल, दीठ। और फिर कभी गंभीर।

कभी कुन्दन को पास बैठा लेती है। शीशे के कटोरों में पानी भर कर लकड़ी से बजाती है। बोलती है, 'सुनो कितना सुन्दर बजता है।' कभी धूम-धाम से बिल्ली का ब्याह रचाती है। नौबत बजा-कर, आतिशबाजी करके। और फिर कभी चुपचाप बैठी रहती है। कभी कहती, 'आओ कुन्दन बैठो, देखो, देखो, यह बादल किस तरह रंग बदल रहा है।'

एक के बाद एक ख्याल, जब जो खुशी हुई, वही। नहीं। हो सकता है, चूँकि लायली को भरी जवानी में देखा है, इसलिये कुन्दन उसके लड़कपन की कल्पना ही नहीं कर सकता।

कुन्दन ने एक लम्बी साँस छोड़ी। बोला, 'अपने बचपन की बातें वह नहीं बताती थी। एक दिन केवल उसने कहा था, 'यह अच्छा ही हुआ है।'

'क्या अच्छा हुआ है, लायली?' कुन्दन ने पूछा।

'यही जो भगवान ने मुझे परिवार नहीं दिया, संतान नहीं दी।'

'इससे भला क्या अच्छा हुआ?'

लायली कुन्दन की गोद में सिर रखकर छत पर लेटी है। लायली बोली, 'देखो, यदि वह सब मेरे भाग्य में बदा होता तो भगवान मुझे दूसरे के घर भेज देते। ऐसा तो नहीं हुआ।'

'नहीं दिया है, तो अच्छा ही हुआ है। तब क्या मैं भी तुम्हें देख पाता ?'

'तुम्हारे घर भी तो जा सकती थी।'

'क्या बोलती हो ? ऐसा होने से तो फिर नाक सिकोड़तीं। कहतीं, तुम्हें प्यार नहीं करती हूँ।'

लायली सहसा हँस पड़ी थी। बोली थी, 'बात तुमने उल्टी कही। उस समय मैं सहज में ही तुम्हें प्यार करती। कोई और ख्याल मन में न आता।'

'यह क्यों ?'

'उस समय तुम मेरे पति होते, पति को क्या कोई सोच-विचार कर प्यार करता है ? यों ही प्यार हो जाता है।'

'इतनी सारी बातें तुम जान कैसे गयीं ?'

'यह बात रहने दो कुंदन। मैं कह रही थी, मेरी जैसी जो सब हैं, उन्हें संतान न होना ही अच्छा है।'

'क्यों ?'

'क्यों ?' अचानक लायली नाराज हो गयी। नाराजी में ही बोली है, 'वे अपनी ही संतान को प्यार नहीं कर सकतीं। उनकी संतानें, अकेले-अकेले मन का दुःख लिये आदमी बनती हैं।'

'तुम भी तो किसी एक की संतान हो ?'

'हुश !' लायली कुन्दन के गाल पर उँगलियाँ लरजाती है। बोलती है, 'मैं कभी भी छोटी नहीं थी। मैं हमेशा ही ऐसी बड़ी थी। इसी तरह बड़ी बनाकर भगवान ने मुझे पृथ्वी पर भेजा था। समझे !'

निसार बोला, 'जानते हो, लड़कपन में वह अजीब किस्म की थी। हम और वह एक दिन घर से निकल पड़े। उस समय हम दोनों एकदम बच्चे थे। शहर में जिप्सी आये थे। सबों ने कहा, बच्चे पकड़ते हैं, वे सब बच्चे पकड़ने वाले हैं। हम और लायली, निश्चय किया कि जाना ही होगा, देखना होगा। दोपहर में हम दोनों भाग खड़े हुए।

'जाकर देखते हैं, वे सब अच्छा भला संसार फैलाये बैठे हैं। बड़े-बड़े गाछों की डाल पर हिंडोला झूल रहा है। उस पर मासूम बच्चे सोये हुए हैं। नीचे रसोई भी पक रही है। गाछ की डाल तोड़कर, कोई झाड़ू दे रहा है। जंजीर में बँधा हुआ बंदर का बच्चा आँखें मिलमिला रहा है। एक बूढ़ी सिर की जटाओं को सुलझा-सुलझा कर पता नहीं क्या बड़बड़ा रही है।

'वे सब मुझे और लायली को बहलाने लगे। बोले, हम लोग दो दिनों तक रहेंगे। जाने के दिन आओ। जो कुछ चाहते हो, वही दूँगा। यह बंदर यह कुत्ता। एक हरा तोता दूँगा, हिरण की एक सींग दूँगा।

'हमलोग चले गये थे। लायली और मैं। लेकिन बड़े भाई से पता नहीं कौन कह देता है। वे सब ऊँट पर सामान लाद रहे हैं और हम दोनों वहाँ हैं। बड़े भाई आदमी लेकर गये। जवान-जवान मर्दों को जाने कितना पीटा। वे सब हमें निःसंदेह पकड़कर ले जाते। बेच देते या और कुछ करते। वे बड़े निष्ठुर होते हैं। अपने बाल-बच्चों को भी वे बिना किसी हिचकिचाहट के जब चाहें बेच देते हैं। उन लोगों में माया-दया का नाम भी नहीं।

'मैं डरपोक था। ऊँ, ऊँ कर रोता हुआ घर आया। लायली ने भाई से कुछ न कहा। मेरी माँ के पास गयी तो उसके क्रोध का ठिकाना ही क्या? बहुत अच्छा किया जो गयी। अपने बेटे को मारो। माँ बोली, 'क्यों री, तुम्हारा ख्याल तो अच्छा है? अपने बेटे को मारूँगी?' इस पर उसने क्या कहा, जानते हो?

'वह बोली, छोटे भाई की तो तुम हो। तुम कितनी भली माँ हो। तुम्हारे रहने से वह क्यों भागने गया था? मैं भागूँगी। अच्छा ही करूँगी।

'क्यों री?' माँ फिर पूछती है। वह उदास चेहरे से बोलती है, 'मेरी माँ, केवल अपने आपको प्यार करती है। मुझे प्यार नहीं करती।

लेकिन हम लोग जानते हैं, मेहरुन उसे कैसा प्यार करती थी। उसके आँखों से ओझल होते ही यह घर, वह घर, खोजती फिरती।'

चौदह

मेहरुन लखनऊ की नामी बाईजी थी।

बेगम कोठी के पास ही उसका मकान। सफेद रंग का दो मंजिला मकान, सामने बरामदा। उसमें हरे रंग की झिलमिली लगी हुई। मकान देखने में बहुत सुंदर। हर वर्ष राज-मिस्त्री लगाया जाता। दरवाजा और जंगला रंगा जाता। छत पर बाँस के ऊपरी भाग पर एक झाड़ू, एक हाँड़ी। देखने में जरा भद्दा, लकिन मुहर्रम या ईद में भी उसे हटाने का कोई उपाय नहीं। मेहरुन की माँ उसी समय पालकी मँगा कर रवाना हो जायेगी।

बेटी से झगड़ा नहीं करती। जान के डर से। बूढ़ी मरने से बहुत डरती। क्या दिन, क्या रात, वह बहुत सारे जादू टोना लिये बैठी रहती। घर में जहाँ-तहाँ कहीं पर एक कठपुतला, कहीं पर एक टीन का डिब्बा, टूटी हुई सिकरी, छूरी का फल, हाथ से बनाया हुआ पुवाल भरा पक्षी, यही सब दिखायी पड़ेगा। कोई झूल रहा है, कोई अच्छी तरह सुरक्षित रखा गया है।

उन सबों का मतलब क्या कोई नहीं जानता! छत के बाँस, झाड़ू, हाँडी सब तूफान व वर्षा से बचाने के लिए। बिजली गिरने से इस हाँडी में जाएगी, वर्षा आएगी तो ऊपर बैठे। तूफान आने पर यह झाड़ देखकर भाग जाय। बूढ़ी ने जाने किस अनजान, किसी हिन्दू राजे मिस्त्री को बुला कर यह सीख लिया था।

बूढ़ी दिन-भर जादू-टोना, जंतर-मंतर लिये ही रहती। उम्र सत्तर, अस्सी या एक सौ, यह पता लगाने का उपाय नहीं था। बिल्कुल

गोरा रङ्ग। फरफराता हुआ सफेद केश, भौंहें और आँख की पलकें। हाथ और चेहरे की चमड़ी की सफेदी पर छोटा-छोटा अस्पष्ट तिल जैसा असंख्य दाग। माथे पर केश खोंपा में बँधा हुआ। पहरावे में, एक सफेद रङ्ग की ढीली सी पोशाक। पूरी बाँह वाली ब्लाउज, खूब फैला हुआ लहँगा। आँखें दोनों बिलकुल भूरी। रह-रह कर बूढ़ी जैसे मेहरुन को नहीं पहचान सकती, लायली को नहीं पहचान सकती, बुलाती 'मार्गरेट। क्लद।'

उस समय दासियाँ भागी-भागी आतीं। मेहरुन के सामने खड़ी होकर आदाब बजातीं। कहतीं, 'बूढ़ी अम्मा को फिर दौरे पड़ रहे हैं।'

मेहरुन भागी-भागी आती। माँ को कमरे के अंदर ले जाती। कहती, 'चुप रहिये, अम्मा चुप रहिये।'

'नहीं, नहीं मैं उन्हें चाहती हूँ। उन्हें बुलाओ।'

'किन्हें अम्मा ?'

'मार्गरेट, क्लद ?'

मेहरुन होंठ काटती। कहती, 'अम्मा देखो, मैं तो मेहरुन हूँ !'

उस समय बूढ़ी की आँखें कोमल हो आतीं। 'यही तो, यही तो, तुम तो मेहरुन ही हो। मेहरुन, मेरे मुअज्जम की बेटी।'

'हाँ अम्माँ !' मेहरुन चैन की साँस लेती।

'लेकिन क्लद कहाँ है ? क्लद ? मार्गरेट ? इसके बाद बूढ़ी थोड़ा-थोड़ा हिलती-डुलती। उसे याद आयी है। वह आँखें बंद कर जैसे कुछ सोचती है, बोलती है, 'मेहरुन तुम मोमबत्ती भेजती हो ? फूल भेजती हो ?'

'चुप रहिये अम्मा, चुप रहिये।'

'बोलो, भेजती हो ?'

'भेजती हूँ, अम्मा !'

और फिर कभी-कभी वह कमरे में बैठ कर तकिया फाड़ती रहती।

कमरे में रुई उड़ाती। आईना फोड़ती, माल-असबाब फेंकती। उस समय मेहरुन दौड़ी आती, ईश्वरलाल आते। दास-दासी, नौकर-चाकर सब के सब आते।

बूढ़ी अम्मा को सभी जोर से दबोचकर पकड़े रहते। वह चिल्लाता रहता, 'टीपू नहीं हैं, मैसूर टायगर डेड। पियेर नहीं है। तुम लोग मुझे क्लद के पास जाने दो। वे उसका दोनों हाथ जोर से पकड़े रहते हैं। वह हठात् इधर उधर कंधा घुमाती। 'हट जाओ। क्लद आ रहा है, क्लद लॉ मार्टिन।'

बोलती है, 'हाँ क्लद हाँ! पियेर के तुम दोस्त हो, तुम एमिलि को आश्रय दोगे।'

सब हँसते हैं। उस समय जबर्दस्ती मेहरुन बूढ़ी को कमरे में ले जाती। दरवाजा बन्द कर देती। कहती, 'रहो, बन्द पड़ी रहो। अकेली-अकेली चीखती रहो, दिमाग की गरमी उतर जायेगी।'

शाम को दरवाजा खोलकर देखती। बूढ़ी चुपचाप बैठी है। इस बीच काफी रोना-धोना हुआ है, सामने ही लायली बैठी है। निश्चय ही हमाम के दरवाजे से घुसी है। गड़गड़े में तम्बाकू भी चढ़ी है। बूढ़ी के हाथ में नल है।

बूढ़ी कहती है, 'मेहरुन इधर आओ।'

अभी भी माँ को देखकर मेहरुन डरती है। बीच-बीच में बूढ़ी बोलती है, 'तुमसे मुझे बातें करनी है। सुनो, बीच-बीच में मेरा सब कुछ गड़बड़ हो जाता है। तुम भी याद नहीं रहती हो। सुनो, तुम मार्टिन के घर आदमी भेजो तो। मैं गवाह चाहती हूँ, बसीयत लिखूँगी।'

मेहरुन कपाल पीट लेती है। कहती है, 'आप सब भूलती जा रही हैं। उन लोगों के मकान में साहबों का स्कूल खुला है न? वे सब अब कहाँ है?'

'वे कहाँ हैं?'

'वे सब मर गये।'

'पियेर कहाँ है ?'

'सेरिंगापत्तम में अम्मा !'

'हाँ, हाँ ! सेरिंगापत्तम, सेरिंगापत्तम। पियेर को उन लोगों ने दफनाया था ?'

'यही तो सुना है।'

'क्लद ?'

'क्लद, आसाई में अम्मा।'

'आसाई, आसाई में, क्यों ?'

'क्लद जो सिन्धिया का कमांडर था अम्मा !'

'था, था, क्यों ?'

'आसाई। औरङ्गाबाद के उत्तर में अम्मा। आप जो कहा करती हैं, युद्ध हुआ था।'

'ठीक तो।' बूढ़ी बड़ा जोर लगाकर नल खींचती है। इसके बाद चिन्तित मुँह उठाकर बोलती है, 'क्यों री, क्लद को उन लोगों ने दफनाया था ?'

'हाँ अम्मा।'

'क्या लिख दिया था रे ? क्लद मोरां, पियेर मोरां का बेटा।'

'सिन्धिया की कैवेलरी में कमांडर—

'उम्र इक्कीस वर्ष, साहस के साथ—

'युद्ध करते-करते कर्तव्यरत् अवस्था में—

'प्राण विसर्जन।

'प्राण विसर्जन।

'दे विल बी डन्।

'बी डन्।'

अचानक बूढ़ी रो पड़ती है। फफक-फफक कर रोती है, कहती है, 'उन लोगों ने लैटिन में नहीं लिखा, फ्रांसीसी में नहीं लिखा। उन लोगों ने अंग्रेजी में लिखा !' मेहरुन चुप रहती है।

'अँग्रेजों को मैं नहीं चाहती, नहीं चाहती। पियेर को उन लोगों ने सेरिंगापत्तम में मारा, क्लद को आसाई में।'

'अम्मा वह सब बातें भूल जाइये।'

'मेहरुन तुम नहीं जानती। उस समय मार्गरेट छोटी बच्ची थी। यही इतनी बड़ी।' हाथ से बूढ़ी दिखाती है, इसके बाद बोलती है, 'ला मार्टिन बड़े अच्छे आदमी थे। क्लद का नाम उन लोगों ने ही रखा था। ला मार्टिन क्लद के धर्म बाप हुए न! क्लद के मरने पर मैं बड़ी कठिनाइयों में उलझ गयी थी। उस समय तुम्हारे पिता ने झट से मुझसे विवाह कर लिया।' वह नस रख कर उठ खड़ी होती है। बोलती है, 'ठहरो मैं नवाब महल जाऊँगी। कहूँगी, मोअज्जम तो तुम्हारे ही वंश का एक लड़का है। उसने क्रिश्चियन मेम से शादी की है तो इससे क्या, उसकी बेटी को जागीर नहीं दोगे? ठहरो, मैं मुकदमा करूँगी।'

बोलती है, 'हुश् मैं क्या पूरी मेम हूँ? मेरी माँ तो काश्मीरी थी।'

किसी-किसी दिन बूढ़ी को कुछ भी याद नहीं रहती। वह क्लद को खोजती है, पियेर को खोजती है। मार्गरेट को खोजती है। दासियों को मारने दौड़ती है। बोलती है, 'इमली, इमली, इमली। इमली, तुम सब खाती हो। तुम सब किचपिच करके बोलती हो। तुम सब इमली खाती हो। मेरा नाम एमिलि है। एमिलि मोरिया।'

बूढ़ी सब कुछ भूल जाती है। हताश होकर मेहरुन रोने बैठती है। कौन उसे याद दिला देगा कि मैसूर टायगर-टीपू सुल्तान का प्यारा फ्रांसीसी गोलंदाज ऑफिसर पियेर मोरां १७९९ ई० में सेरिंगापत्तम में युद्ध करते-करते मारा गया था। पियेर का एक दिन का दोस्त क्लद मार्टिन भी कब का मर गया है। रह-रह कर बूढ़ी सब कुछ भूल जाती है।

भूल जाती है कि पितेर का बेटा क्लद १८०३ ई० में आसाई में

मारा गया है। क्लद की बहन मार्गरेट एक फ्राँसीसी व्यापारी से शादी कर कटक में रहती थी। वहीं मर जाती है।

भूल जाती है कि यह सब मेहरुन के लिए जानना जरूरी नहीं। कभी-कभी मेहरुन की बोलने की इच्छा होती है, मैं मेहरुन हूँ। मेरे अब्बा मोअज्जम अली बख्श थे। अयोध्या के नवाब महल के एक पट्टीदार के बेटे। अब्बा से तुमने १८०६ ई० में विवाह किया। १८०८ ई० में मैं पैदा हुई। अम्मा, अभी १८४७ ई० है। मेरी उम्र उन्तालीस हुई। और बड़ी ही कोशिश करके जिसे पाया है, वह मेरी बेटी है। कुल सात वर्ष उम्र।

कुछ भी नहीं बोल पाती। क्योंकि उसी समय उसकी माँ फुसफुसा कर पूछती है, 'वह क्या है, री?'

'आपके लिए खाना, अम्मा।'

दुखी मेहरुन टेबुल खींच लाती है। अरवा चावल का नरम-नरम पोलाव, मांस का शोरबा, फिरनी। बोलती है, 'मैं खिला दूँ?'

'यह क्या है री, मेहरुन?'

पोलाव अम्मा। आप सादा पोलाव पसंद करती हैं।'

'वह क्या है, छीमी मटर, मांस और अंडे का टुकड़ा।'

'हाँ अम्मा।'

उस समय बूढ़ी सीधी उठ खड़ी होती है। फिर दोनों आँखें घूमने लगती हैं। इसके मुँह से उसके मुँह पर। बोलती है, 'नहीं मार्गरेट, नहीं सोनामणि, यह सब विलासिता हम लोगों को शोभा नहीं देती। भूलना नहीं कि तुम्हारे पिता टीपू के लिये ही लड़ते-लड़ते मारे गये। एक बार नवाब ने उनको काफी मोहरें और मुक्ता आदि दिया था। इन दिनों उसी नवाब के बाल-बच्चे कलकत्ते में कैद हैं। आह, कल-कत्ते का पानी नरम है। आह, वहाँ उन लोगों को कितनी तकलीफ हो रही होगी। कम से कम हम लोग उन लोगों की याद कर, यह सब विलासिता नहीं करेंगे।'

गम्भीर भाव से बूढ़ी टेबुल पर से हाथ उठा लेती है। गले में हाथ से जैसे कुछ खोजती है। शायद चेन बँधा क्रास ही। इसके बाद झुक-झुक कर बोलती है, 'उनकी मैं सेवा करती हूँ। उनका नाम दिल से लेती हूँ। एक रोटी और नमक मेरा भोजन हो, भोजन हो।'

दासियाँ मजा देखती हैं। लायली हैरान होकर देखती रहती है। बड़बड़ाती हुई मेहरुन बाहर निकल आती है। बोलती है, 'सबके सामने मुझे ज़लील करना ही उनका काम है।'

ईश्वरलाल हँसते हैं। कहते हैं, 'ढाढ़स रखो मेहरुन, उन्हें माफ करो। उम्र अर्सा की हो गयी है। इस जिंदगी में शोक-दुख तो कम नहीं पाया है। इसलिये सब भूल जाती हैं।'

मेहरुन बोलती है, 'मेरी तो चर्चा ही नहीं करतीं। अब्बा के बारे में भी नहीं बोलतीं। अब्बा ने उनके लिये कौन-सा कष्ट नहीं उठाया?'

'मेहरुन तुम्हारे अब्बा से जिस समय उन्होंने शादी की उसके पहले ही उनकी जिंदगी का अच्छा समय बीत चुका था। मुहब्बत, प्यार, बाल-बच्चा सब पाया, सब खो दिया। तुम्हारे अब्बा के लिये उसमें कृतज्ञता रह सकती है, प्यार कैसे होगा?'

मेहरून नहीं समझती। मेहरून ने नहीं समझा, लेकिन लायली ने समझा था। बहुत बाद में। वह जब बड़ी हुई तब।

मेहरुन ईश्वरलाल से बोली, 'इतना जादू टोना, इतना जंतर-मंतर क्या क्रिश्चियन भी करते हैं?'

'मेहरुन, तुम अपना दिल जरा बड़ा बनाओ तो।'

'वाह, बड़ी कड़ी बात कही!'

'सुनो, मेरी बात सुनो। मेरी और तुम्हारी तराजू पर उनको तौलना, भूल होगी। उनके पिता बंगाल के नवाब सिराजुद्दौला के दल में शामिल थे। बाद में आकर हैदरअली के दल में भाग लिया था। पहले पति टीपू के दल में थे।

'कितनी ही जगह रही हैं, घूमी-फिरी हैं। कितने ही देश, कितनी ही तरह की अवस्था। आधा खून देशी, बाकी कैथोलिक। केवल जो लड़ाई झगड़ा करते हैं, वे क्या लिखना, पढ़ना सीख पाते है? नाना जगह में रहते-रहते, नाना किस्म के आदमियों से मिलते-जुलते, यह सब संस्कार, विश्वास उनके भीतर घुस गया है। जादू टोना करें भी तो क्या! जो इच्छा हो करें। करके खुश रहें।'

फिर भी मेहरुन को धीरज नहीं होता। वह एक दिन बोलती है, 'अब फिर दिलासा देती हैं, मुकदमा करके जागीर लेंगी! मुकदमा करके ही तो सब कुछ खोया है।'

ईश्वरलाल के चेहरे पर एक छाया झटपट फैल जाती है। वह बोलते हैं, 'तुम्हें तो किसी चीज की कमी नहीं है। और फिर रुपये-पैसे जितने रहते हैं, लगता है अशान्ति भी उतनी ही बढ़ती है।'

'क्या कह रहे हो?'

हैरान होकर मेहरून ईश्वरलाल की तरफ देखती है। कहती है, 'रुपया-पैसा रहने से अशान्ति होती है, किसने कहा है? मेरे पास जब जो कुछ आया है, मैंने एक रुपया भी बर्बाद नहीं किया। सब सूद पर लगा लगाकर अभी भी देखो कोई कमी नहीं है। रुपये का भी क्या कभी तिरस्कार करना चाहिये?'

ईश्वरलाल हँसते हैं, बोलते हैं, 'तुम्हारी केवल उम्र ही बढ़ी है। बुद्धि नहीं बढ़ी है, मेहरून।'

'लायली को बूढ़ी नानी की बड़ी याद आती है। बीच-बीच में बूढ़ी नानी उसे बुला कर अपने कमरे में ले जाती हैं। बोलती हैं, 'मार्गरेट! तुम क्या बड़ी न होगी? तुम यदि छोटी ही रहोगी, तो मैं किससे बातें करूँगी?'

'बूढ़ी नानी, मैं मुन्नी हूँ। आपकी पोती।'

'ओ, यही तो।'

बूढ़ी हँस पड़ती है। बोलती है, 'सुनो, अपनी माँ से नहीं कहना कि मैंने तुम्हें मार्गरेट कहा है।'

'नहीं, नहीं। माँ से मैं कोई भी बात नहीं कहती।'

'क्यों री, तुम घर के बाहर जाती हो?'

'क्यों?'

बूढ़ी फुसफुसा कर बोलती है, 'यदि जाओ तो बाहर झाँककर देख आना कि छत पर वह बाँस है या नहीं?'

'क्यों बूढ़ी नानी, मैं तो सीढ़ियाँ चढ़कर ही छत पर जा सकती हूँ।' बोलते ही बूढ़ी उसे पोपले मुँह से चूम लेती है। बोलती है, 'नहीं, नहीं। छत पर अकेली मत जाना। हो सकता है कोई बुरी हवा लग जाये।'

'ऐसा भी क्या कहीं होता है?'

'निश्चय।'

बूढ़ी नानी उसे फुसफुसा कर बहुतेरी कहानियाँ सुनाती हैं। बीच-बीच में बूढ़ी नानी को पकड़कर दासियाँ नहलाने ले जाती हैं। बूढ़ी नानी के हाथ-पाँव में, गाँठ-गाँठ में दर्द, एड़ी का ऊपरी हिस्सा फूला हुआ। लायली ने देखा है कि दाबने से गड्ढा बन जाता है। वहाँ दर्द होता है। नानी की खास दासी हैदराबाद की मुसलमानिन। मोटी तगड़ी, ताकतवर, काला रंग, प्रौढ़ अवस्था। वह इस मकान की हकीम भी है। रोग शोक में वही चिकित्सा भी करती।

वह कहा करती कि एड़ी के इस सूजन में जोंक लगाने से खराब खून निकल जायेगा। सुनते ही बूढ़ी नानी डर के मारे चीख उठतीं। बूढ़ी नानी के पैरों में मोजा रहा करता। लायली ने पहले किसी को मोजा पहनते नहीं देखा था। बहुत दिनों तक उसका ख्याल था, बूढ़ी नानी के पैर की चमड़ी का रंग बदलता रहता है। कभी गुलाबी होता है तो कभी बादामी।

हफ्ते में एक बार बूढ़ी नानी के हमाम में एक बहुत-बहुत बड़े टब

में गरम पानी भरा जाता। उसमें नानी की दासी जाने क्या-क्या दवा छोड़ती। एक सुगन्धित लाल पत्थर नानी की पीठ पर घिसा जाता। पीठ में, शरीर में, हाथ में, गले में। आश्चर्य, पत्थर गल जाता और टब फेन से भर जाता।

नहाकर बूढ़ी नानी झटपट कई कुर्तियाँ, दो तीन लहँगे पहन लेतीं। उसके बाद बरामदे में आकर धूप में लेटी रहतीं।

हैदराबाद की यही औरत बूढ़ी नानी के कमरे का दरवाजा और खिड़की खोलती। खिड़की के बाहर कार्निश पर चिड़ियों को बूढ़ी रोटी का टुकड़ा, बदाम, छोला खिलाती। एक फेंके हुए पुराने रंगीन छाते की लोहे की सींक से हाथ पाँव बँधी हुई छोटी-छोटी गुड़ियाँ झूलती रहतीं। पुराने कपड़ों से बनायी गयी गुडियाँ। बूढ़ी जानती है, कौन-सी गाँठ में दर्द के लिये, कौन-सी दाँत दर्द के लिये, कौन-सी हाथ-पाँव की सिहरन और कौन-सी गुड़िया सिर-दर्द के लिये है। उनके ऊपर विभिन्न मंत्रों का प्रयोग किया जाता है। टाँग कर रक्खी जाती हैं।

दासी कुछ धूप में सुखाती, साफ करती। किसी समय साहब की आया थी, उसके मालिक थे मिशनरी। बड़ी ही साफ सुथरी औरत, हमेशा धोना, पोंछना-झाड़ना लिये ही रहती। बाद में लायली के मन में हुआ कि बचपन में उसे पाया था, इसलिये बच सकी। वह उसका हाथ मुँह धुलाती, केश सँवारती, कपड़ा-लत्ता बदलवाती!

बूढ़ी नानी की बुद्धि शायद बुढ़ापे के कारण सठिया गई थी, संभवतः मेहरुन की उसे याद नहीं रहती। लेकिन लायली उसे अच्छी लगती। फरफराते हुए केश की जड़ में बूढ़ी फीता बाँधती। पूरे शरीर में पावडर लगाती। फिरंगी दूकानदारों के यहाँ से जैसे भी हो मेहरुन को पावडर ला ही देना पड़ता।

बूढ़ी लायली को पावडर या साबुन छूने नहीं देती। उदास हँसी-हँस, सिर हिलाकर कहतीं, 'नहीं, नहीं, तुम्हारी दासी तुम्हें मलाई, मैदा पिसा बदाम, नीबू का रस लगायेगी।'

'इससे क्या होगा ?'

'इससे तुम और भी सुंदर हो जाओगी ?'

शाम के समय बाहरी कमरे से गाने की आवाज़, पायल की रुम-झुन, टमटम के रुकने और पुरुषों की हँसी की आवाज़ आती।

लायली आकर बूढ़ी के पास बैठती।

बीच-बीच में बूढ़ा बहुत अच्छी तरह बातें करती। टीपू सुलतान क्या बहुत बड़े नवाब थे ? सभी उससे डरते थे !

'जानती हो, उनके पास मशीन का एक बाघ था। गोरा सिपाही उस पर बैठता तो पंजामार कर वह गुर्राता था।'

'आपने देखा है ?'

'हाँ।'

'वह कहाँ है ?'

'किसे पता है ? शायद उसे भी तोड़-फोड़ दिया हो।'

कभी कहती, 'मोअज्जम मुझे बड़ा प्यार करता था। लहँगा, पेश-वाज पहन कर गड़गड़ा खींचना तो उसी ने सिखाया। हम और वह बैठे रहते, मेहरुन घूम-घूम कर नाच दिखाती।'

'मेरी माँ ?'

'हाँ री ! जैसा गाती, वैसा ही नाचती भी। मैं यदि उसके बाप के मरने पर होशियारी से उसे लेकर समुद्र पार भाग जाती तो बड़ा अच्छा होता।'

बाद में लायली ने सुना था, उसकी नानी उसके नाना के साथ विवाह के समय बहुत रुपया-पैसा लायी थीं। उसके नाना मशहूर बीबी की बातें बहुत मानते थे।

बाद की जिन्दगी में लायली कुन्दन को अपनी नानी के बारे में बहुत कुछ सुनाया करती। कहती, 'मैं केवल यही नहीं सोच पाती हूँ, वह फिर मेरे नाना से विवाह करने क्यों गयीं ?'

बोलती, 'अन्तिम समय में वर्ष भर कुछ भी होश नहीं रहता था।

जाने क्या-क्या बोलतीं, किसे बुलातीं, वह भी कोई न समझता। किस-किस भाषा में बातें करतीं, यह भी समझ में न आता।'

बिलकुल सच।

मरने के एक साल पहले बूढ़ा होश-हवास खो बैठी थी। हिल-डुल भी नहीं सकती थी। उस समय उसकी उम्र पचासी की थी। लायली की उम्र बारह वर्ष की थी। उसे बहुत कुछ याद है।

उस समय शायद बूढ़ी नानी फिर से अपनी पहली जिंदगी की सुख-सुविधा में लौट गयी थीं। रात-दिन पियेर, क्लद, अन्ना, हेलेन, मारगरेट जिसे-जिसे बुलाती, उसे मेहरून पहचान भी नहीं पाती थी।

लायली तरह-तरह की बातें सोचती रहती। बाद में एक दिन कुन्दन से वह बोली थी, 'नानी के लिये मुझे दुःख होता है। शायद बिल्कुल अकेली पड़ गयी थी, इसलिये फिर से शादी की। लेकिन लगता है, खुद शान्ति नहीं मिल पायी थी। तुम नहीं जानते, उसकी उसी बेटी का बेटा कटक से आया था। उसके मरने के बाद उसकी कौन-सी बेइज्जती माँ ने नहीं की!'

मेहरून बहुत बेइज्जती करती।

उस समय कब्र में दफनाने का काम खतम हो गया था। बूढ़ी का वही नाती खबर पाकर आया था। वह न जाने किस काम से फैजाबाद आया। खबर का पता लगाते-लगाते वह सुनता है कि मोअज्जम बिहार अख्तर की मेम बेगम भी मर गयी है।

वह पूछता, 'उसका कोई स्मृति-चिन्ह भी नहीं?'

मेहरून जवाब देती, 'नहीं, नहीं।'

शायद भला आदमी बूढ़ी के रुपयों के लालच से आया था। मेहरून कहती, 'नहीं, नहीं, रुपया पैसा कुछ भी नहीं है।'

भला आदमी शरमाकर बोला, 'नहीं, रुपया-पैसा नहीं चाहता। उनके व्यवहार की यदि कोई चीज बीज हो। कुछ मत सोचिए। मैंने

यों ही जानना चाहा था। वह मेरी भी तो नानी थीं।'

मेहरून उसके सामने नहीं गयी थी। चिलमन की ओट से ही बोली थी। भले आदमी चले गये थे। माँ के व्यवहार से लायली हैरान हुई थी। वह जानती थी कि उसकी नानी इसी नाती का चिट्ठी लिखा करती थीं, उपहार भेजा करती थीं। वह यह भी जानती थी कि उसकी नानी के व्यवहार की सोने की नाशदानी, गुलाबपाश और भी दो-एक चीजें थीं।

मेहरुन कहती, 'हुश् मैंने देखा है, सेवा सुश्रूषा की है, खिलाया-पिलाया, पहनाया। यह सब मेरा है।'

लायली यह भी जानती थी कि केवल डाहा-डाही से मेहरून ने उस आदमी को लौटा दिया था। यों एक-दो चीजों की परवाह मेहरून नहीं करती थी।

बूढ़ी एमिलि बेगम के मर जाने के बाद लायली की जिंदगी का एक अध्याय खतम हो गया।

पन्द्रह

मेहरून के मकान में एक बड़ी सी मज़ार।

बाहर का बैठकखाना सुंदर। सजा-सजाया। बड़े-बड़े बरामदे, झिलमिली के हरे रंग पर सफेद अंगूरी लता। एक बड़े कमरे में, बड़ी-ऊँची दीवालों पर बड़े-बड़े आईने। फर्श पर गलीचा, चौकी पर कालीन। छोटे-छोटे तकिये। मकान की छत से झाड़-फानूस झूलती रहती। चारों कोने में बड़े-बड़े पीतल के हाथी। सूँड़ उठाकर स्वागत की मुद्रा में।

उस कमरे के दोनों ओर दो गुसलखाने। साहबों की देखा-देखी मकान की छत पर बना हुआ दो मंजिला बंगला।

एक बहुत बड़ा चौकोर आंगन। इसके बाद अंदर महल। मकान का यह हिस्सा भी सुंदर। अच्छे बड़े रहने लायक चार कमरे। साथ में छोटे-छोटे कमरे, गुसलखाने। चारों ओर बरामदा। इसी मकान में लायली, मेहरून और बूढ़ी एमिलि रहती थीं।

इसके बाद ही भूल-भुलैया शुरू होती। रसोई घर, दास-दासियाँ और बांदियों के रहने के कमरे। रिश्तेदारों के रहने के कमरे। कोई कमरा डेढ़ तल्ला। कहीं दो मंज़िला, पर सिर्फ तीन गुसलखाने। कहीं पर ऐसा लगता कि घर-द्वार खतम हो गया है। मिट्टी के आगन में मुर्गियाँ चर रही हैं। इसके बाद फिर दो कमरे, रसोईघर, कुँआ।

पूरे मकान में जहाँ-तहाँ इंदारा, जहाँ-तहाँ कमरा-कमरा, गुसल-खाना, छत बरामदा। जब बूढ़ी एमिलि समर्थ थी, उस समय वह और उसकी लड़की मेहरून गुस्सा-गुस्सी में ही कमरे बनवाती। नहाती-नहाती एमिलि तौलिया या चादर लपेटे निकल पड़ती। बोलती, 'बान्दा, मिस्त्री बुला दो। पूरब की तरफ कमरा बनायेगा, कुँआ खोदेगा।'

सुनकर मेहरून उफनती रहती, 'मैं जरा छत पर बैठती हूँ। पूरब की तरफ कमरा बनाकर मेरी हवा बन्द करना चाहती है? ठहरो!'

ऐसा करते-करते ही, इसी तरह यह मकान पूरा भूल-भुलैया बन गया। अपने ही घर में छोड़ दिये जाने पर मेहरून इधर से उधर घूम कर नहीं आ सकेगी। दास-दासियाँ रहते हैं। दूर-दूर के रिश्तेदार रहते हैं। एक बार पूरा मकान चहारदीवारी से घेरा जा रहा था। पता लगा कि रिश्ते में मेहरून की बुआ, फुफेरा भाई, सब बाहर पड़ जायेंगे। उसी समय चहारदीवारी उठाने का काम बन्द कर दिया गया। चहार-दीवारी के लिये जो ईंट, चूना, सुरखी लायी गई थी, उस पर दास-दासियों के बाल-बच्चे खेलते।

बूढ़ी एमिलि जब सशक्त थीं, उस समय हैदराबादी के साथ जाकर देखतीं, सुनतीं। कहतीं, 'देखो किन लोगों ने एक अच्छा खासा

घर बना रखा है। जैसे गुड़िया खेलने का घर हो।' यह बात सुनकर हैदराबादी कहती, 'साहेबान, वे सब आपके ही घर रहते हैं। वे सब रंगरेज हैं।'

बूढ़ी एमिलि जब सुनती कि उसके मकान में इसी बीच इक्कीस कमरे, नौ इंदारे, ग्यारह आंगन बन गये हैं, उस समय बोलती, 'नहीं भई, नहीं, यह सब देखने से तो दम फूलने लगेगा।'

इसके बाद वह अपना कमरा छोड़कर बाहर नहीं निकली।

बैठकखाना और उन लोगों की खास हवेली के बीच की खाली जगह और आस-पास सुंदर फुलवारी। कितने ही फूलों के पौधे, फौवारा, मेंहदी की अच्छी तरह कटी-छँटी दीवाल।

इसके बाद दास-दासी, रिश्तेदारों का घर-दरवाजा। उधर बाहर की तरफ जो सब घर दरवाजे हैं वहाँ अपनी इच्छा से मेहरुन ने रंगरेजों को बसाया है। धोबियों और दर्जियों को बसाया है। उन लोगों के घरों के बाद ही बड़ी सड़क शुरू होती है। वे सब रास्ते से घूमकर सदर महल में घुसते हैं। बोलते हैं, 'मालकिन अर्जी है, अर्जी है!'

पर्दे की ओट में खड़ी होकर मेहरुन सुनती। बोलती, 'तुम लोग घर में रहते हो, मैं लगान तो नहीं लेती हूँ। घर में सफेदी कराओगे, दरवाजे और बंगला में रंग दिलवाओगे, यह क्या अपने आप नहीं कराओगे?'

'मालकिन पैसा कहाँ है?'

'मैं जो तुम लोगों से कपड़े रंगवाती हूँ, कपड़े सिलवाती हूँ, उसके लिये तो मजूरी दिया करती हूँ। और पैसे कहाँ से पाओगे, यह मैं क्या जानूँ!'

उस समय वे सब सिर झुकाते। वह बोलती, 'यह तो है ही, यह तो है ही।'

रंगरेजों के यहाँ मेहरुन के परिवार भर के कपड़े रंगे जाते। बड़े-बड़े गमलों में दास-दासियों के कपड़े रंगे जाते। लायली और मेहरुन

के पतुले-पतले दुपट्टों में अबरक की गुंडी झलमल करती। दरवाजे और जंगले का परदा बारहों महीना हरा व नीले रंग का रहता। उत्सव के दिन सबके सब बिलकुल सफेद। सफेद परदा, सफेद चादर, तकिया का खोल, सब का सब हैदराबादी के पास रहता।

हैदराबादी। लायली के बचपन की एक दिली याद।

वह जैसे जेल की पहरेदारिन हो। खास महल से लायली को बाहर निकलने का हुक्म नहीं। खास महल में कुछ चुनी हुई दासियाँ ही जा सकतीं। रसोई घर से मेहरुन और लायली के लिये खाना बूढ़ा बावरची लाता। चीनी मिट्टी का मुँह ढँका बर्तन। बावर्ची के हाथ में मोमबत्ती। नौकर के हाथ में खाना।

हैदराबादी सब कुछ देखती। एमिलि के समय वह पचास रुपये तनख्वाह पाती। मेहरुन उसे पचहत्तर रुपये देती। उसके हाथों में सोने की चूड़ियाँ, चेहरा गंभीर। मेहरुन उसकी थोड़ी इज्जत करती। क्योंकि वही खास महल साफ सुथरा रखती। बर्तन-बासन, कपड़ा-लत्ता, माल असबाब का हिसाब रखती। उसकी ताबेदारी में दास-दासियाँ काम करतीं। लायली को देखने सुनने का भार उसके ऊपर था।

लायली की नानी के मरने के बाद लायली को दुश्चिन्ता होती है। उस कमरे में अब कौन रहेगी। ओट में ले जाकर हैदराबादी खूब गंभीर होकर उससे कहती, 'तुम रात में कोई आवाज सुनकर डरना नहीं, हाँ। आँखें बन्द किये रहना।'

'क्यों ?'

'तुम्हारी बूढ़ी नानी शायद उस कमरे की माया नहीं छोड़ सकी हैं, रात में आती हैं।'

यह बात सुनकर लायली उस समय जूड़ा नचा कर भाग जाती। लेकिन रात होते ही वह बड़ी मुश्किल में पड़ती। शरद काल की रात। चाँदनी चमक रही है, इतनी कि किताब भी पढ़ी जा सकती है। ऐसी रात में उसकी माँ फिर नहीं आती। आज बाहर वाले मकान में बड़ी

धूम-धाम है।

लायली ताक कर देखती है, कमरे के एक कोने में छोटी-सी खाट पर हैदराबादी सोयी पड़ी है। यद्यपि दरवाजा खुला है। लायली साफ-साफ देख पाती है, उसकी बूढ़ी नानी के कमरे में चाँदनी पड़ रही है। टेबुल, कुर्सी, बड़ी-बड़ी खूँटी, सब दिखाई पड़ रही हैं। लायली उधर नहीं देखना चाहती फिर भी उसकी आँखें, उस तरफ चली जाती हैं। माँ पर गुस्सा आ रहा है।

अन्त में बड़ी कोशिश करके वह बिना कोई आवाज किये खाट पर से उतरी। चट्टी नहीं पहनती, नंगे पैर, केवल भागना चाहती है। इसके बाद ही वह पत्थर बन गयी। उस कमरे में जैसे कोई हलचल कर रहा है। लायली ने चिल्लाना चाहा, गले से आवाज नहीं निकली। इसके बाद जैसे किसी बड़े आश्चर्य ने उस पर चोट कर उसे निकम्मी बना दिया।

हैदराबादी और सिकन्दर।

रंगरेजिनों का पति। उम्र यही चालीस साल होगी। दिन रात अपनी पत्नियों को मारता, अपने बच्चों को पीटता। बहुत पैसे कमाता। उसकी बीबियाँ रोज ही काँच की चूड़ियाँ फोड़तीं। रोज रोतीं। सिकन्दर यहाँ क्यों? कमरे में कौन झुका हुआ है? वे दोनों जाकर खाट पर बैठे। लायली ने देखा सिकन्दर के मुँह में हैदराबादी ने जाने क्या दिया।

लायली खाट से कूद पड़ी। यह लो, गुसलखाने का दरवाजा खुला है। हुश्। बूढ़ी नानी अभी आयी, अभी आयी।

वह जोर से भाग खड़ी होती है। हैदराबादी समझ सकी है या नहीं, कौन जाने। वह भागती रहती है। आँगन, बगीचा, फौवारा। फिर दरवाजा, आँगन, बरामदा, सीढ़ियाँ। जीने पर दरबान। बड़े कमरे के दरवाजे पर काँच के मोतियों का परदा। बाहर रोशनी हो रही है। हँसी-मजाक।

कमरे में घुस कर वह इधर-उधर देखती है। रोशनी में आँखें धुँधला जाती हैं। शीशे का गिलास, बोतल, कितने ही किस्म का खाना। सफेद कालीन पर लाल गुलाब।

इतना जेवर पहने, यही उसकी माँ है? वह माँ की देह पर गिर पड़ती है।

'मैं अकेली नहीं रहूँगी। नहीं रहूँगी, नहीं रहूँगी। बदमाश हैदराबादी, बदमाश सिकन्दर मुझे डराते हैं।'

'मुन्नी!' मेहरुन हैरान हो गयी। झटपट डर कर उठ बैठी। देह और सिर पर कपड़ा रख लिया। बोली, 'तुम?'

'हाँ। बहुत अच्छा किया जो आयी हूँ फिर आऊँगी। मैं वहाँ अकेली रहूँगी?' बूढ़ी नानी वहाँ रात होने पर नहीं आती? मुझे अगर पकड़ ले जाये?'

उसी समय पीछे से पता नहीं किसने बुला कर झट से उसे गोद में उठा लिया है। बोला, 'वाह, वाह, तुम्हारी लड़की का याद नहीं क्या नाम रखा है! जाने कितने दिनों से नहीं देखा था। इतनी सुन्दर हो गई है, क्यों?'

सुन्दर नाक, आँख, मुँह। कान में हीरा, सफेद वेश-भूषा। दोनों आँखों में भरी हँसी। 'नहीं, नहीं, तुम वहाँ मत जाना। मेहरुन, यह तुम्हारा बड़ा अन्याय है। जब कभी पूछता हूँ, तुम जवाब देती हो, वह अच्छी तरह है, देख-भाल के लिये आदमी हैं।'

'अन्याय क्या?' मेहरुन फिर भी हँसी। उसके बाद झटपट उस रात मजलिस से उठ आयी। झटपट अन्दर आयी।

हैदराबादी के साथ क्या-क्या बातें हुई, लायली यह नहीं जानती। लेकिन इस बार बूढ़ी नानी के कमरे में ढेर सा सामान रख कर गोदाम बना दिया गया। उतने सुन्दर चकमक-चकमक करने वाले नहाने के टब में पुरानी रजाई और तोशक रक्खा गया। कमरे में ताला लगा दिया गया।

लायली की खाट मेहरुन के कमरे में आयी। कई दिनों तक लायली का मेहरुन ने बड़ा ख्याल रखा। इसके बाद फिर जैसे का तैसा। फायदे में फायदा यह हुआ कि हैदराबादी कुछ नरम पड़ गयी। लायली के सम्बन्ध में उदासीन? शायद इच्छा से ही।

कुछ दिनों बाद हैदराबादी भाग गयी। साथ-साथ अच्छा खासा गहना-गाँठी, रुपया-पैसा भी लेकर चम्पत हुई।

उस रात मेहरुन घर में नहीं थी। लायली को पता चल गया था, हैदराबादी कमरे मे चहलकदमी कर रही है, गठरी बाँध रही है। वह एक बार पूछती है, 'बू कहाँ जा रही हो?'

'नहीं, नहीं, कहीं भी नहीं जा रही हूँ। बस, कपड़ा-लत्ता रख रही हूँ। दिन को समय नहीं पाती।'

'बू, इतनी रात में क्यों?'

'दिन में जो समय नहीं पाती।'

'बू, तुम रो रही हो?'

'नहीं, नहीं।'

उसका गला—भरा-भरा है। बातें वह धीमी आवाज में कर रही है। लायली के पास आकर एक बार बैठी। बोली, 'सो जाओ, सिर सहला दूँ।'

लायली सो जाती है। एक बार जैसे उचटी हुई नींद में सुना, लड़की के लिये कष्ट हो रहा है। बड़ी ही धीमी आवाज, फिर कोई बोला, 'सोचने से क्या होगा! उसे तो मैं नहीं बचा सकूँगा। इस घर की लड़की। जैसा नसीब लेकर आयी है।' फिर जैसे कोई बोला, 'यह क्या, जंगला बन्द नहीं किया?'

लायली को गहरी नींद आ रही है। आँख खोलने की इच्छा होती है। लेकिन उपाय नहीं। आँख की पलकें जैसे सख्त लट्ठा से सटी

हुई हों। इतनी नींद क्यों आ रही है, किसे पता! हैदराबादी के पास दर्द की दवा है। छोटी डिबिया में रहती है। काली-काली लठदार। जरा सा मुँह में डाल कर हैदराबादी ऊँघती रहती है।

'वह क्यों खाती हो, बू?'

'उससे दर्द कम होता है।'

'तुम्हें कहाँ दर्द है?'

'मुन्नी, मेरे दिल में दर्द है।'

आज सोने के पहले लायली का कीड़ा लगा हुआ दाँत कन-कन कर रहा था। वह बोली, 'बू मेरे दाँत का दर्द तुम्हारी उस दवा से कम होगा?' हैदराबादी हँसी। बोली, 'ठहरो, थोड़ी सी दूँ।'

एक सींक की नोक भर दी। इसीलिये शायद इतनी गाढ़ी नींद आयी।

सुबह-ही-सुबह शोरगुल मचा।

मेहरुन सुबह लौटी। इसलिये चढ़ती वेला तक सोती रही। दासी और बाँदियों ने आकर उसे जगा दिया। आँखें मलते मलते वह उठ गयी। दासी बोली, 'साहेबान, मुन्नी नहीं उठ रही है।'

'उठती नहीं है? यही सुनाने के लिये मुझे जगाया है?'

'हैदराबादी नहीं है। भाग गयी है।'

'मुन्नी को क्या हुआ है?'

वे सब कमरे में घुसती हैं। मेहरुन अचानक बेटी को उठा लेती है और छाती में सटा कर बरामदे में बैठ जाती है। वह चीख-चीख कर रोने लगती है। मेहरुन की एक बूढ़ी बुआ आयी। उन लोगों ने बड़ी हाँक-पुकार कर लायली को जगाया। सिर पर शायद पानी-वानी भी डाला था।

उस समय फिर आँगन में नया शोरगुल शुरू हुआ। आबरू और मनाही की बात भूलकर सिकन्दर का बड़ा लड़का आया और उसकी तीनों माँ आयीं। लड़के की उम्र अठारह वर्ष होगी। तगड़ा, जवान।

नाटा और रोबीला चेहरा। उसकी तीनों माँ के कपड़े रंग से भरे हुए। वे सब चीखती रहीं। मेहरुन बोली, 'इन लोगों को घर से निकाल दो।'

सिकन्दर की बड़ी बीबी शायद खाविंद की हम-उम्र ही थीं। भरा पूरा शरीर, आँखों के नीचे कालापन। गला बाँसुरी की तरह पतला। वह बोली, 'हम सब खाविंद को लौटाने के लिये जरा भी उत्सुक नहीं। हम सब मिनती करती हैं कि साहेबान, अगर दारोगा को खबर दें तो दारोगा उन लोगों को पकड़ कर रुपया-पैसा छीन ले सकता है। सब कुछ घर से झाड़-झूड़ कर सिकन्दर ले गया है।'

सिकन्दर का बेटा मुँह बाये लायली और मेहरुन को देख रहा था। मेहरून तंग आकर लायली को लेकर कमरे में घुस जाती है।

इसके बाद कुछ दिनों तक लायली पर मेहरुन बड़ी नजर रखती। जो माँ उतनी दूर थी, उसे पास पाकर लायली जैसे कृतार्थ हो जाती है।

फिर एक दिन अचानक मेहरुन बड़ी व्यस्त हो जाती है। लायली की देख-भाल के लिये तीन दासियाँ हैं, फिर भी उसके केश में कंघी नहीं फिरी। उसके कपड़े सन्दूक में भरे पड़े हैं फिर भी वह मैला-कुचैला गरहरा पहने घूमती है।

बीच-बीच में टूटी हुई चहारदीवारी से होकर भाग जाती है। सड़क पार कर आम का बगीचा। आम के बगीचे के बाद एक तालाब। आम बाग की छाया में टोकरी लेकर सभी भिखारी शहर का फटा-चिथरा कपड़ा, टूटी-फूटी हाँड़ी सजाते रहते। वे सब शहर भर का कूड़ा-कर्कट एक जगह जमा कर कभी-कभी आग लगा दिया करते।

वे सब लायली की तरफ देखते रहते। भागी-भागी, बस एक ही बार में दूध अम्मा के घर। वहाँ पहुँच जाने पर फिर कोई चिन्ता नहीं। बड़े भाई से सभी डरते हैं। उनका गला बिल्कुल गंभीर है। उनके कमरे में सितार की रिमझिम आवाज आती रहती है।

वहाँ दूध-अम्मा रहती हैं। दूध-अम्मा के पास जाने पर वह तेल पानी लेकर केश बाँध देती हैं। नहला देती हैं। इसके बाद पास बैठकर खिलाती हैं।

रोज-रोज दूध-अम्मा के पास नहीं जाया जा सकता। बीच-बीच में मेहरुन गुस्सा हो जाती। बोलती, 'रोज-रोज दूसरे के घर क्यों जाती है?'

उस समय लायली अपने ही घर में घूमती-फिरती। दासी बाँदियों का ही संसार देखती फिरती।

उन लोगों के साथ रसोईघर में बैठकर भात-रोटी खाती। ईद के दिन थाल से मिठाई छीना-झपटी कर के खाती। उन लोगों के बाल-बच्चों के साथ आँगन में लकीर खींचकर उछल-उछल कर खेलती।

सोलह

लायली की जिन्दगी में सबसे पहले उसे प्यार करने वाली थी उसकी माँ।

एक बार माँ और ईश्वरलाल जी उसे आलिशाह का दरबार दिखाने ले जाते हैं।

उसकी माँ जब गाना गा रही थी, लायली हैरान होकर ऊपर की तरफ देख रही थी। छत से कतार की कतार अबरख की मालाएँ लटक रही थीं।

आलिशाह का वह जन्मदिन था। लखनऊ के गरीबखाना, यतीमखाना, मकतब और मस्जिद में नवाब महल से तोफा भेजा जा रहा था। दरबार में कितने ही आदमी आये थे, कितनी धूम-धाम थी। लायली ने कुछ भी नहीं देखा था, वह हैरानी भरी नजरों से अबरख की मालाएँ भर देख रही थीं।

उस दिन उसकी बात सुनकर ईश्वर लाल खूब हँसे ।

'सुनो, सुनो, मेहरुन तुम्हारी बेटी अबरख की माला माँगती है ।'

बाद में वह लायली को एक जोड़ा बुलबुल ला देते हैं । आश्चर्य, धीरे-धीरे अबरख की माला की बात लायली भूल गयी ।

माँ को वह पास से नहीं देख पाती । माँ को दूर से ही देखती । थोड़ी बड़ी होने पर माँ के साथ ईश्वरलाल का सम्बन्ध वह समझ गई थी ।

उस दिन शाम को जलसा नहीं हुआ था । बाहर के आदमी भी नहीं थे । वह उस समय गाव तकिया और तकियों की ढेर के ओट में सो रही थी ।

माँ की दबी हँसी सुनकर नींद टूटी । वह हिली-डुली नहीं । चुपचाप लेटी-लेटी दो गले की बातचीत सुनती रही ।

माँ की आवाज कितनी मीठी व नरम । ईश्वरलाल का गला भारी, आवाज कुछ फँसी-फँसी ।

'मेहरुन इस तरह मैं दूर-दूर नहीं रह सकता हूँ ।'

'क्या करोगे, बोलो ?'

'चलो, कहीं चले जायें ।'

'कहाँ जाओगे ?'

'जहाँ भी हो ।'

'मुन्नी जो है !'

'उसे भी ले चलो ।'

'नहीं ।'

'क्यों ?'

'जहाँ भी जायें, तुम्हारी और हमारी जाति जो नहीं मिलेगी । धर्म जो बिल्कुल अलग-अलग हैं ।'

'मैं धर्म छोड़ दूँगा ।'

'नहीं, नहीं, । ऐसी बात भी मुँह से नहीं निकालते ।'

'मेहरुन, पास आओ।'

'पास ही तो हूँ।'

'मेहरुन, तुम नहीं जानती हो कि मैं तुम्हें कितना प्यार करता हूँ।'

'जानते हो, मुझे ऐसा लगता है कि हम और तुम एक दूसरे को नहीं पा रहे हैं, इसलिये तुम्हें इतना प्यार है।'

'छिः मेहरुन।'

'तुम्हीं तो कहते हो, कभी तुम अपनी बीबी को भी कितना प्यार करते थे।'

'वह मुझसे नफरत करती हैं।'

'क्या पता। हो सकता है, उसने तुम्हें दूर भगा दिया, इसीलिये तुम मेरे पास आये।'

'नहीं, नहीं! अविश्वास मत करो।'

'क्यों?'

बातचीत सुनकर लायली हैरान हुई थी। उसके सामने तो वे इस तरह की बातें नहीं करते थे। उसके न रहने पर वे सब कितने प्यार से बातचीत करते हैं।

लायली का बचपन बहुत जल्द बीत गया।

दस लगते ही, मेहरुन ने बेटी की तरफ ध्यान दिया। अब समय बर्बाद नहीं करना है। अब उसे सिखाना होगा, तैयार करना होगा।

हठात् लायली के जीवन में नया-नया तर्जुबा शुरू हुआ। आँख-मुँह में पानी छिड़क कर सुबह से ही गाना गाने के लिये बैठना पड़ता है। उसके सामने मेहरुन एक बड़ी सी मोमबत्ती जला देती है। मोमबत्ती जल कर आधी हो जाने पर सुबह छुट्टी होती।

दासियाँ दूध और पिसे हुए बादाम लगाकर उसका रंग साफ करतीं। केश सवाँरतीं। अब आँगन में उतरने का हुक्म नहीं है। अपने मन से घर में मेहरून घूमने भी नहीं देती।

वह बेटी को अपना गहना-गाँठी दिखाती है, मोहर पहचनवाती

है। कहती है, 'मैं नहीं कर सकी हूँ, तुम सोने की पीकदान में पीक फेंकोगी। तुम्हारी पचास बाँदियाँ होंगी।'

ईश्वरलाल शाम को आते हैं।

उस समय लायली आकर पास बैठती है। हाथ में मेंहदी, आँख में सुरमा, जूड़े में सोने का फूल। रंगीन लहँगा, रंगीन पेशवाज। ईश्वरलाल के पास बुलाने पर वह हाथ हटा लेती है। वह बड़ी हो गयी है। इस समय अब पहले जैसी चचलता शोभा नहीं देती।

बाद में लायली को याद आया, वह बहुत घबड़ा जाती थी। उसे अच्छा नहीं लगता था।

निसार के साथ बातें करते समय भी बाँदी पास ही रहा करती। बीच-बीच में माँ उसे शिरीन के पास भेजती।

उस समय शिरीन ने जवानी में पैर रखा था। खूब नाम हो रहा था। वहाँ लायली शिरीन की माँ के पास नाच सीखती थी। द्वार बन्द कर प्रौढ़ा महजबीन उसे नाच सिखाती थी।

इसके बाद फिर बाँदी के साथ पालकी पर वापस आ जाती थी। फिर साज सिंगार। दूध-चंदन घिस-घिस कर नहाना। फिर रियाज़। जंगले और दरवाजे पर परदे। झिलमिली की फाँक से भी बाहर देखने का हुक्म नहीं। बाँदी लोग माँ से कह देती हैं।

लायली कभी-कभी रोती। बाँदियाँ उस पर कठोर ताना कस के कहतीं, 'तुम माँ के लिए मोहर की पेड़ हो। अभी बड़ी बना रही हैं। बाद में हिलाने से सोना गिरेगा।'

कौन जाने, उन सब बातों के क्या अर्थ थे ?

उन्हीं दिनों, बूढ़ी नानी के मरने के कुछ दिनों बाद, ईश्वरलाल मेहरून और लायली को साथ लेकर घूमने निकले।

काशी में बड़ी से बड़ी नाव और बजरा भाड़े पर लिया जाता। काशी से एक बार पटना, पटना से कानपुर, फिर कानपुर से काशी।

अचानक जैसे नियम और मनाही की सभी जंजीर गिर पड़ी।

बिल्कुल आज़ाद, बिल्कुल मुक्त।

बाद में लायली की समझ में आया। ईश्वरलाल व मेहरून एक दूसरे के साथ ज्यादा रह सकें इसीलिये इस नौका-भ्रमण की व्यवस्था।

वे सब शाम-सुबह नाव पर से उतरते। किनारे पर टहलते।

बजरे की छत पर बैठकर लायली देखती रहती। कितनी नावें चल रही हैं। कितने आदमी हैं। वैसे ही समय, एक दिन वह छत पर से झटपट उतर पड़ी।

'माँ, ऐ माँ, जल्दी आओ। वे उसे मार देंगे।'

ईश्वरलाल और मेहरुन बाहर निकल पड़े। नाव किनारे पर बँधी थी।

प्रौढ़ माँझी एक किशोर बालक को बेदर्दी से पीट रहे हैं। लड़का बीच-बीच में चीखता, लेकिन रोता नहीं।

मेहरुन देख कर अंदर चली गई। बोली, 'क्या हुआ है, घर में हैदराबादी दासियों को चाबुक लगाया करती थी, नहीं देखा है ?'

ईश्वरलाल माँझियों को डाँट देते हैं। कहते हैं, 'क्या हुआ है ?'

हुजूर लड़के ने पानी में एक थाली फेंक दी है।

'फेंक दी है ! तब अब क्या होगा। तुम मुझसे दाम ले लेना।'

उस दिन शाम को लायली ने लड़के को बुलाया। लड़का एक छोटा-सा कपड़ा पहनकर चूल्हे में मिट्टी लगा रहा था। बोली, 'ऐ, ऐ लड़के, इधर आओ।'

लड़के ने आँख उठाकर देखा। बोला—'मुझे बुला रही हो ?'

'हाँ।'

'मेरा नाम बजरंगी है।'

'मेरा नाम मुन्नी है। मेरा नाम लायली है। तुम आओ न।'

लड़का नाव के शिरोभाग से उछलकर बजरे पर चला आया। लायली बोली, 'यहाँ बैठो। मुझे अकेले-अकेले डर लगता है।'

'वे सब कहाँ हैं ?'

'टहलने गये हैं। तुम बैठो न।'

वे बैठे रहे। आकाश में चाँद उगा है। गाँव में रोशनी दिखाई दे रही है। गाय की गर्दन में घंटी, नदी के घाट पर दो लड़कियाँ माथे पर कलशी लिये पता नहीं क्या बोल रही है।

लायली ने लड़के की तरफ देखा। बोली, 'ऐ अमरूद खाओगे ?'

'अमरूद ?....कहाँ ?'

'खाओ न। देखो कितना मीठा है।'

थोड़ी देर बाद ही माँझी बाजार करके लौटे। बजरंगी झटपट उतरकर नाव पर चला गया। बोला, 'कहना नहीं, हाँ, कि मैं यहाँ आया था।'

'वे मारेंगे शायद।'

'डाँटेगा, बहुत डाँटेगा।'

इसके बाद लायली और बजरंगी बहुत घुल-मिल गये। कभी-कभी बजरंगी और लायली किनारे पर टहलते। दोनों खेत से भुट्टा तोड़ लाते। चूल्हे में सेंक लेते।

'भुट्टा खाने से दाँत बहुत सुंदर हो जाते हैं, जानती हो ?'

'तुम्हारे दाँत तो बहुत सुंदर हैं, बजरंगी।'

'भुट्टा के दाना की तरह ?'

'हाँ। तुम्हारे शरीर में बहुत ताकत है, न ?'

'निश्चय। देखो न, हाथ कितना चौड़ा है। नाव पर जब पाल खींचना पड़ता है, उस समय शरीर में बिना ताकत रहे काम नहीं चलता।'

वे सब पतंग उड़ाते हैं। बजरंगी लाल-नीले कागज काट-काट कर पतंग बनाता है। बोलता है, 'आओ, पतंग पकड़ोगी ? आओ।'

लायली पतंग पकड़ती है। पतंग धीरे-धीरे ऊपर की तरफ उड़ती चली जाती है। लायली चिल्लाकर कहती है, 'गयी, गयी। बादल में खो गयी।' मेहरुन बीच-बीच में भौंहें कसती है।

ईश्वरलाल कहते हैं, 'आह, खेलें न वे सब। बड़ी होने पर नहीं

खेलने पायेगी। इस तरह आजाद होकर घूम फिर भी नहीं सकेगी।'

बीच-बीच में इच्छा करके ही बजरंगी को लायली देखकर भी नहीं देखती है। बजरंगी छिप-छिपकर देखता है। बर्तन माँजता है, मसाला पीसता है। छुरी से आलू काटता है। चेहरा उसका जाने कैसा हो जाता है। सोचता है, अनजाने में जाने कब क्या दोष हो गया है। नहीं तो हठात् लायली बातें करना क्यों बंद कर देती।

बजरंगी अपना काम खतम कर लेता है। इसके बाद नदी किनारे उतर कर चुपचाप बैठा रहता है। इच्छा करके भी इधर नहीं देखता।

लायली उस समय उतर पड़ती। कहती, 'आओ, आओ। देखो, रस्सी में बाँध कर हाँड़ी झुला दी थी, उसमें छोटी-छोटी मछलियाँ फँस गई हैं।'

बजरंगी मान करना नहीं जानता। उसी समय वह भागा-भागा आता। इसके बाद बोलता है, 'छोड़ दो। उतनी छोटी-छोटी मछलियाँ नहीं पकड़नी चाहिये। पाप होता है।'

छोटी मछली पकड़ने से पाप होता है! चाँद को गणेश ने कलंक दिया है। कछुआ को भात देने से पुण्य होता है। ऐसी ही कितनी बातें बजरंगी बोलता है।

बजरंगी नदी में तैरता है। धोती का छोर पकड़कर हवा में सुखा लेता है। बजरंगी को भूख कब लगती है, किसे पता। चढ़ती बेला में जब छोटी-छोटी दरियायी चिड़िया नाव के पास आकर झगड़ने लगतीं, उस समय बजरंगी खाने बैठता। लाल चावल का भात, लाल दाने का नमक, उबाला हुआ करेला और कच्ची मूली।

'बजरंगी, हम लोगों के लिये तो कितनी ही तरह की चीजें पकती है, तुम क्यों नहीं खाते?'

'अरी मुन्नी, तुम बड़ी बेवकूफी हो।'

'क्यों?'

'तुम लोगों की रसोई मुझे नहीं खानी चाहिये।'

'अच्छी बात है, न खाओ। तुम्हारी नाव पर भी तो ईश्वरलाल जी के लिये जाने कितनी चीजें पकती हैं, वह क्यों नहीं खाते ?'

'वह मुझे खाने ही क्यों देंगे। माँझी लोग। मैं जो उन लोगों का नौकर हूँ। तुम लोगों ने उन लोगों की नाव भाड़े पर ली है। तुम लोगों का खाना क्या मुझे देने को है ?'

'बजरंगी, तुम्हें नाव पर रहना अच्छा लगता है ?'

'नहीं, पर क्या-क्या करूँ ?'

'क्यों, चले नहीं जा सकते ?'

'कहाँ जाऊँगा ?'

'और कोई जगह क्या जाने के लिये नहीं है ?'

'नहीं।'

बजरंगी हँसता है। कहता है, 'यह सब बातें मत सोचा करो। तुम्हें दुख होगा।'

'क्या कहते हो ?

'हाँ मुन्नी, तुम्हें बड़ा दुख होता है। बात-बात में। तुम्हारा मन बड़ा ही कोमल है, है न ?'

'कौन जाने ?'

दोनों बजरे की छत पर पाँव झुलाते बैठे रहते हैं। बजरंगी कहता है, 'तुम लोग क्यों चले जाओगे ? आश्विन महीने तक रहो। काशी चलो। देखना, दशहरा, दीवाली में कितनी धूम-धाम, कितनी रोशनी, आतिशबाजी।'

'वाह, खूब कही !' लायली हँसती है। बोलती है, 'मेरी बात क्या वे लोग भी मानेंगे ?'

थोड़ी देर सोचकर फिर बोलती है, 'क्यों हम लोगों के चले जाने पर तुम्हें दुःख होगा ?'

बजरंगी इस बात का जवाब नहीं देता। चुपचाप अनमना होकर जाने क्या सोचता रहता है।

एक दिन। विदा लेने का दिन करीब आ गया।

लायली माँ से बहुत कहती-सुनती है। 'माँ उसे ले चलो, बजरंगी को।'

'मुन्नी, तंग न करो।'

'ले चलो न माँ, हमारे घर में तो कितने ही आदमी रहते हैं।'

'वहाँ वह क्यों रहेगा?'

'माँ, तुम्हारे मल्लाहों के साथ रहेगा।'

'आओ मुन्नी, तंग मत करो। घर में गुलाम नौकर बहुत काफी हैं। इतने आदमियों की भी कोई जरूरत नहीं, उस पर और भी एक आदमी।'

ईश्वरलाल बोलते हैं, 'उसे ले जाने से वह वहाँ क्या काम करेगा मुन्नी?'

'काम क्या करेगा? वह कबूतर पोसेगा, हम लोगों की चिड़ियाँ पोसेगा। वह पतंग बनायेगा, पतंग उड़ायेगा।'

मेहरुन पान की पीक फेंक कर बोलती है, 'वह सब बात मत बोलो, मुन्नी। वह सब खेल-कूद की बातें भूल जाओ। मल्लाह का नौकर हमारे घर बैठ-बैठ कर खायेगा, पियेगा और पतंग उड़ायेगा?'

वह तंग आकर ईश्वरलाल से कहती है, 'यह निश्चय ही उस लड़के की बुद्धि है। लड़के को बुलाओ तो सही!'

लायली रोना शुरू कर देती है। कहती है, 'उसे कुछ मत कहना। वह क्या कुछ कहता है? मैं कह रही हूँ। उसे शायद तुम माँझियों से पिटवाना चाहती हो।'

मेहरुन की इच्छा नहीं थी, ऐसी बात नहीं। लेकिन बेटी का रोना-धोना देखकर वह कुछ भी नहीं बोलती। केवल कहती है, 'अरे, तुम अच्छे बेईमान आदमी हो। उसके सामने खूब नमक-मिर्च लगाकर शायद दुख की कहानी सुनाई है?'

'नहीं, बीबी जी!' बजरंगी डर-डर कर बोलता है।

'जाओ। बात-बात में इस बजरे पर मत आया करो। ज्यादा दौड़ धूप करने पर मल्लाहों से कह दूँगी।'

बजरंगी उदास मुँह लिये चला जाता है।

उसके बाद तीन दिनों तक वह नहीं आया। काम का बहाना दिखा कर छिपा-छिपा रहा।

विदाई के दिन जब मल्लाह सब लेन-देन के हिसाब में मशगूल थे, उस समय लायली एक किनारे खड़ी थी।

बेनीमाधव की पताका के पास एक मकान में बैठकर बातें हो रही थीं।

ईश्वरलाल समझा-बुझाकर रुपये-पैसे दे रहे थे।

बजरंगी के हाथ में मेहरून ने एक रुपया रख दिया था। बजरंगी वही लेकर भाग खड़ा हुआ। लायली सोचती है, कितने आश्चर्य की बात है, मुझे कितनी जल्द भूल गया। सिर्फ मेरा ही मन खराब हो रहा है। कहाँ, उसे तो कुछ भी नहीं हो रहा है।

मल्लाह सब चले जा रहे हैं। गठरी-मोटरी बाँध कर प्रसन्न या अप्रसन्न हैं, पता नहीं चलता। माँ कहती है, 'देकर उन लोगों को खुश नहीं किया जा सकता। आदमी हमेशा 'और' लेने के लिये हाथ फैलाये ही रहता है।'

लायली का दिल हताश हुआ जाता है। अभी-अभी तो वे सब चले जायेंगे। रात बीतने पर सब विन्ध्याचल पहुँच जायेंगे। और फिर भेंट नहीं होगी।

लेकिन नहीं। बजरंगी ने उसे निराश नहीं किया। बजरंगी भागा-भागा आया। उसके हाथ में एक बहुत बड़ी पतंग। मुँह पर हँसी, दोनों आँखों में करुणा। लायली को ऐसा लगा कि शायद वह दुःख होने पर भी हँसता ही है।

बहुत बड़ी पतंग। लाल, सफेद, काली और पीली चौरंगी पतंग। बजरंगी बोला, 'रुपया मैं भुना नहीं सका। कितने कष्ट से चार पैसे

का इन्तजाम किया है। चार पैसे और दो दमड़ी। देखो, कितनी सुन्दर है। लो मुन्नी, पतंग लो, लटेर लो।'

लायली ने हाथ बढ़ाकर ले लिया। बोली, 'तुम कितने बेवकूफ हो बजरंगी!'

'क्यों?'

'वे सब क्या मुझे पतंग उड़ाने देंगे?'

'नहीं उड़ाने देंगे?' किसी ने जैसे फूँ करके उत्साह की बत्ती ही बुझा दी।

अचानक लायली को बड़ा दुःख हुआ। दिल के अन्दर दर्द भी हुआ। एक बात भी नहीं कह सकती। पतंग लिये खड़ी रहती है।

बजरंगी फिर थोड़ा हँसा। बोला, 'फिर जब आओ। फिर हम लोगों की ही नाव लेना, क्यों?'

'अच्छा।'

सड़क पर बहुतेरे आदमी, ताँगे चल रहे हैं, धूल ही धूल! बजरंगी उसमें खो गया। लायली ने देखा, वह डगमगा कर चल रहा है, उसकी छींट की कमीज दिखायी पड़ रही है। एक बार उसने मुँह फेरा, शायद हँसा।

सत्रह

हठात् लायली ही जैसे बड़ी हो गयी।

हमेशा मन उदास। कुछ भी अच्छा नहीं लगता। रह-रह कर पता नहीं क्या याद आता, जाने कहाँ जाने का मन होता। कभी-कभी वीरान दोपहरी में अपने आपको ही आईने में देखती।

एक दिन, उस समय उसकी माँ, घर पर नहीं थी। गाने के अंत में हठात् लायली रो पड़ी। क्यों आँखों में आँसू आये, क्यों वह रो पड़ी? वह खुद ही नहीं जानती।

अपने तानपुरा पर खोल पहना कर ईश्वरलाल ने अलग रक्खा। उसके बाद हँसमुख होकर उसकी ओर देखा। उनकी नाक का शिरो-भाग और उनका मुँह लाल था। पेशानी पर पसीना। उसे पास खींच लिया। बोले, 'तुम बड़ी सुन्दरी हो।'

उसे चिपका लिया, चूम लिया। बहुत आहिस्ते-आहिस्ते।

हाथ से सहलाते हुए, सिहर कर लायली की उभरती हुई छाती की कली पकड़ ली। लायली चुपचाप, स्थिर। डर, रोमांच, उसके साथ ही अनजाने में शरीर और मन में प्रबल हर्ष। ईश्वरलाल ने सहसा उसे बहुत करीब खींच लिया। उनका हाथ काँप रहा था, शरीर काँप रहा था।

पुरुष की काम-वासना के साथ यही उसका प्रथम परिचय था।

रोकर वह अपने कमरे में भाग गई। मुँह उठाकर देख नहीं सकी। और फिर साथ-साथ एक आश्चर्यजनक उल्लास!

वही पहली बार।

ईश्वरलाल को फिर उसने बढ़ावा नहीं दिया। छिपे हुए किसी अचूक हथियार की तरह एक दिन उनका उपयोग किया था। सो भी बहुत दिनों बाद।

लायली आसमान, लायली आसमान! हठात् एक दिन उसका नाम बहुतों के मुँह पर गुनगुना उठा।

सादिक लखनवी, लखनऊ के एक नामी शायर। प्रौढ़, लाल आँखें, घनी भौंहें। शायरी करते हैं, मुशायरों में उनका नाम सुनते ही भीड़ लगती है।

सादिक लखनवी ने लायली के नाम पर एक कविता लिखी। लायली कुछ बोलेगी, इसी आशा से वह घंटों बैठे रहते हैं। मेहरुन कहती है, 'आप केवल गुलाब का फूल लाते हैं। केवल फूल से क्या लायली का दिल पाया जा सकता है?'

लायली की ओर वह ईर्ष्या भरी नजरों से देखते हैं। लायली की माँ मेहरुन। उसकी हँसी में क्षोभ, उसकी आँखों में संदेह। वह पूछती है, 'कहाँ से ऐसा चेहरा पाया, आँखें पायी?'

लायली हँसती है। कहती है, 'तुमने तो यही चाहा था माँ। जब तुम्हारी मजलिश की बत्तियाँ बुझेंगी, तब मेरी मजलिश में जलेंगी।'

'लायली तुम्हें बड़ा घमंड है। इतना घमंड अच्छा नहीं।'

'माँ, घमंड करने लायक रूप रहने से दिल में गरूर तो होता ही है।'

'तुम बड़ी निर्दयी हो।'

लायली नीली ओढ़नी लपेटती है। गले में मुक्ता का हार पहनती है। अलसायी आवाज में बोलती है, 'यह रूप किसने दिया है, पता नहीं, दिल लेकिन तुमने दिया है।'

'मैं कठोर हूँ? मैं निर्दयी हूँ?' मेहरुन फफक-फफककर रोती है। वह भाग कर चली जाती है। ईश्वरलाल से कहती है, 'बहुत हो गया।' अब चलो, हम दोनों कहीं चले जायें।'

ईश्वरलाल जवाब नहीं देते। तानपुरा के तार में उँगलियाँ चलाते हैं। टेंग-टांग, आवाज निकालते हैं। उसके बाद बोलते हैं, 'वख्त बीत गया है, मेहरुन।'

'वख्त बीत गया है?'

'हाँ! वख्त बीता, उसके बाद भी सात-आठ वर्ष बीत गए। दिल क्या एक ही जगह रहता है?'

मेहरुन लम्बी सांस छोड़ती है। कहती है, 'नहीं। मेरी भूल हुई है। अभी लायली अपना अच्छा-बुरा नहीं समझती।'

सच में क्या लायली को मेहरुन की जरूरत थी?

सादिक लखनवी को कई महीने तक उसने खूब बढ़ावा दिया। लखनवी अब घर नहीं जाते। उनकी जमीन गयी। आलीशाह की दी हुई जागीर भी गयी। जौहरी की दूकान पर सब कुछ ढालने लगे। आज हीरा, कल चुन्नी, उसके बाद मुक्ता।

लायली बोली, 'सभी कहते हैं कि तुम सर्वनाश के नशे में पागल हो गये हो ?'

'ऐसे नशे के पागलपन में भी बड़ा सुख मिलता है, लायली ।'

'सुख ? तुम सुखी हुए हो ?' लायली जैसे हँसती है । 'तुम्हारी बीवी रोती-रोती आयी थी ।'

'आने दो ।'

'मुझे बहुत कुछ सुना गयी ।'

'सुनाने दो ।'

'मैंने दरवाजा बन्द कर लिया । दरवाजे के बाहर खड़ी रहकर उसने मुझे अभिशाप दिया, कोसा ।'

'दे ।'

लायली इस बार हँसी । बोली, 'समझ गयी ।'

इसके बाद हठात् एक दिन लखनवी के सामने भी लायली का दरवाजा बन्द हो गया । उसे समय नहीं है । दिल्ली के बादशाह के पोते आये हैं । उन्हें लेकर ही वह व्यस्त है ।

लखनवी बोले, 'लायली मैं एक शेर लिखकर लाया हूँ । वह तुम्हें दूँगा । देकर चला जाऊँगा ।'

लायली बोली, 'लखनवी, यही शेर यदि तुम सोने के पत्ते पर लिख लाते, अगर मुक्ता से मेरा नाम लिख देते, तब मैं सँभाल कर रख लेती । कागज के ऊपर लिखा हुआ शेर लेकर मैं भला क्या करूँगी ?'

मेहरुन बोली, 'सर्वनाशी, तुम्हारे लिये बेचारा भिखारी बन गया । आज उसे भगा देने में तुम्हें थोड़ी भी हिचक नहीं होती ?'

लायली की हँसी में जैसे मोती बरस पड़े, 'माँ तुम ऐसी बातें करती हो ? कागज की कविता तुम्हें कीमती जँचती है ? नहीं, तुम्हारी ऐसी ही उम्र हो रही है ।'

लखनवी को उस दिन मायूस होकर ही लौटना पड़ा । दो दिन

बाद लखनवी की लाश गोमती के पानी पर तैरती हुई देखी गई। लायली उस दिन दिल्ली के बादशाह के पोते से उनके दादा की बनायी हुई शायरी सीखने में मशगूल थी। कुछ दिनों बाद ही लखनवी का नाम भी लोग धीरे-धीरे भूल गये।

मशहूर मेहमान की लखनऊ में और कुछ दिनों तक रहने की इच्छा थी। लेकिन दिल्ली का खजाना तो बहुत दिनों पहले ही खाली हो चुका था। बादशाह और बेगम दूसरों की आज्ञा में ही दिन काटते। अपनी खानगी दौलत के कुछ बचे-खुचे जेवर, मोहर, जड पत्थर का जाम और एक रत्नखचित फलक लायली को देकर शाहजादा दिल्ली वापस चले गये। लायली से बोले, 'शेर लिखकर दिये जा रहा हूँ। मैं जिस दिन बादशाह बनूँगा, उसी दिन तुम मेरे दरबार में आना।'

'आप बादशाह होंगे ?'

'हो सकता हूँ। आजकल क्या कुछ यकीन के साथ कहा जा सकता है ? हो भी सकता हूँ। हाँ, उस समय तुम मुझे याद नहीं रक्खोगी। जानता हूँ।'

'रक्खूँगी।'

'नहीं लायली, सिर्फ पंद्रह दिन तक तुम से घुला-मिला हूँ। तुम्हें पहचानने में मुझे देर नहीं लगी।'

'मालिक, दिल्लगी करते हैं ?'

'तुम्हारा दिल इसी आईने की तरह है। जिस समय जो सामने रहता है, उस समय उसी की छाया पड़ती है। जो चला जाता है, उसकी याद भी मिट जाती है।'

उन्होंने लायली के केश कपाल पर से हटा दिये। मीठी आवाज में बोले, 'दोष नहीं देता, दोष दे नहीं सकता। आईना से छाया हट जाती है तो क्या आईना को दोष देना ठीक है ? तुम्हारा इसमें दोष नहीं।'

बोले, 'अगर एक बार तुम्हें दिल्ली ले जा पाता तो जीनत महल

को दिखाता। बेगम साहिबा का रूप का घमंड टूटता। लेकिन ऐसा नहीं हो सकता। मैं जो यहाँ आया हूँ, वह भी तो सभी के जानने की बात नहीं है। यह तो छिपाकर रखने की बात है। तुम्हें ले जाने से तो बात खुल जाएगी।'

लायली बड़ी मुग्ध हुई थी। पंद्रह दिन जैसे एक आश्चर्यजनक मोह में बीते थे।

वह कह गये, 'बड़े सुख, बड़े आनंद में ये कुछ दिन बीत गये, लायली। हम लोगों के जीवन में सुख-शांति की बड़ी कमी है।'

'सो क्या बात है, मालिक ?'

'हाँ, लायली। हम लोगों की जिंदगी की कोई कीमत नहीं, फिर भी डर-डर कर रहना पड़ता है। वह धन नहीं, वह कोहिनूर, वह मयूर सिंहासन नहीं। केवल है, मार-काट, संदेह, षड्यंत्र। जानती तो हो कि तैमूर वंश का कोई भी यदि बूढ़ा होकर स्वाभाविक रूप से मर सके, तो उसे सौभाग्यवान पुरुष कहा जाता है।'

फिर वह चले गये।

दो वर्ष बाद लायली ने उनके मरने की खबर सुनी थी। उस समय लखनऊ और दिल्ली एक विस्तृत युद्ध का मैदान बन गया था। लायली वगैरह उस समय अपने दादा की जागीर, तिलोया गाँव भाग कर चली गयी थीं। उसने सुना था, अंग्रेज सेनापति ने बादशाह के उसी पोते को बड़ी कठोरता से गोली मार दी है।

सुनकर वह हँसी थी और ईश्वरलाल से बोली थी, 'देखें न, उन्होंने सच ही कहा था।'

उनकी बातें याद आया करतीं। जब कभी वह शेर गाती, उसी समय याद पड़ती। शेर उसने याद कर लिया था। कागज खो दिया था।

'दाग नहीं मिटता। किसी भी तरह उसके दिल का दाग नहीं

मिटता है। उसे देखने से मुझे डर लगता है, ईश्वरलाल।' मेहरून कहा करती है।

ईश्वरलाल जवाब नहीं दिया करता।

'एक-एक कर आदमी उसके पास आते हैं। वह उन लोगों की खुशी, आनंद, आशा, उत्साह जैसे सब कुछ चूस लेती है। वह सर्वनाशी है।'

'मेहरून, वह तुम्हारी बेटी है।'

'जानती हूँ। वह मुझ पर ताने जो कसती है। मुझे देखकर हँसती भी है। वह मेरे दिल में आग लगा देना चाहती है। जानते हो, वह अपना जेवर, मोहर, कहाँ क्या रखती है, मुझे देखने भी नहीं देती। मुझ पर वह यकीन नहीं करती।'

'चलो, अब चले जायँ।'

'चले जाओगे?' हठात् मेहरून जैसे चमक उठती। बोलती, 'क्यों जाओगे? उस दिन तो नहीं गये?'

'जाऊँगा, अब जाना ही होगा। नहीं तो सर्वनाश हो जायेगा।'

'ऐसी बातें क्यों बोलते हो? मैं तुम्हारी बातें नहीं समझ पाती हूँ।'

ईश्वरलाल चुप रहा।

'मैं नहीं जाना चाहती, मैं आखिर तक देखना चाहती हूँ। मेरे अभी चले जाने पर सर्वनाशी हँसेगी। बोलेगी, माँ डर कर भाग गयी। माँ हार गयी।'

'तुम उसकी बर्बादी देखोगी, इसलिये यहाँ बैठी हो? मेहरून! मैं और कुछ देखना नहीं चाहता, इसलिये भागना चाहता हूँ।'

'भागोगे। कहाँ भागोगे? भागा नहीं जा सकता। जहाँ भी जाओगे, जंगल या रेगिस्तान! दिल तो निकालकर नहीं जा सकोगे। नहीं, नहीं ईश्वरलाल। सुनसान में बैठकर दिल की आग में नहीं जल सकूँगी।'

ईश्वरलाल बोलते हैं, 'मैं क्या यह बात नहीं जानता ? जाया नहीं जा सकता । भागा भी नहीं जा सकता । जानता हूँ, जानता हूँ सब । फिर भी....।'

मेहरून उनकी तरफ हैरान होकर देखती है । इसके बाद कहती है, 'भागूँगी क्यों ? अभी भी लोग मेरा गाना सुनना चाहते हैं । तुम्हारा घरेलू....।'

वह ईश्वरलाल का हाथ पकड़ती है । प्यार भरे लहजे में कहती है, 'यह तो तुमने उसे नहीं दिया है, ईश्वरलाल ! गाने में तुम्हारा इतना नाम है । आओ, इस बार हम और तुम केवल गाने की मजलिश जगमगा देंगे ।'

'बहुत अच्छा, ऐसा ही होगा ।' ईश्वरलाल एक लंबी साँस छोड़ते हैं । दर्द भरी हँसी हँसकर बोलते हैं, 'हम और तुम बालू की दीवार खड़ी कर रहे हैं, यही न मेहरून ?'

'क्यों ?' मेहरून डर गयी है ।

'यदि तुम नहीं समझ सकी हो तो मैं तुम्हें नहीं बताऊँगा । फिर भी दुःख होता है । शायद आखिरी चोट तुम मुझसे ही पाओगी ।'

'आखिरी चोट !'

'हाँ मेहरून, हाँ ! सर्वनाश करीब आ रहा है । भयंकर सर्वनाश ! तुम लोग भूलती चली जा रही हो, तुम्हारा गाना कोई नहीं सुनना चाहता । इससे भी बड़ा सर्वनाश करीब आता जा रहा है ।'

'क्या ?'

उन्होंने मेहरुन का हाथ पकड़कर खींच लिया । बोले, 'मेरी छाती पर हाथ रक्खो । मुझे तुम मत छोड़ देना । वह सर्वनाश एक दिन हमें और तुम्हें चकनाचूर कर के आगे बढ़ जायेगा । मैं सब समझ रहा हूँ ।'

ईश्वरलाल ने एक भयंकर परिणाम के बारे में कहा था । क्या हो

सकता है ? क्या हो सकता है ? मेहरुन ने बहुत सोचा पर कूल-किनारा नहीं पा सकी। सगे-संबंधी, परिवार-परिजन, सब एक-एक कर ईश्वर लाल को छोड़ते चले गये। सिर्फ मेहरुन की तरफ देखकर वह सभी आघात सहते गए।

हाँ, रुपया है। लेकिन रुपये से ही क्या सभी कमी पूरी होती है ? रुपया तो मेहरुन के पास भी है। लायली उसकी ही औलाद है। लायली की ख्याति, लायली की इज्जत देखकर वह संतुष्ट क्यों नहीं हो पाती ?

'यौवन का मलिकाना छोड़ने में आज मेरी छाती फटी जा रही है। अब समझ पा रही हूँ कि एक सिंहासन पर दो राजा क्यों नहीं बैठ पाते ?'

मेहरुन ने बहुत सोचा। लेकिन जब भी मुसीबत आयी, वह जैसे भटक सी गई। पैरों तले की मिट्टी सरक गयी। ईश्वरलाल से लायली उस समय भी गाना सीखा करती थी।

लेकिन हठात् ईश्वरलाल एक दिन नहीं आये। लगभग पन्द्रह-सोलह वर्षों में यही उनकी पहली गैरहाजिरी थी।

मेहरुन हैरान। उसने आदमी भेजा। नहीं, ईश्वरलाल को कुछ भी नहीं हुआ है। ईश्वरलाल की तबीयत भी खराब नहीं है।

वह फिर आदमी भेजती है। संभव हो सकता तो खुद ही भागी-भागी जाती। पर यह नहीं हो सका।

उसकी उत्कंठा देखकर लायली ने भौंहें खींची। बोली, 'माँ, तुम बेशरम क्यों बन गयी हो ? तुम्हें शर्म नहीं आती ?'

'शर्म !' मेरुहन ने अपने कपाल पर कंगन दे मारा। बोली, 'तुम नहीं समझ सकोगी, मुन्नी। तुमने मुहब्बत जो नहीं की है। वह है, इसीलिये दुःख तकलीफ में भी मैंने पतवार नहीं छोड़ी है। क्या हुआ, आया क्यों नहीं ?'

लायली हँसी। बोली, 'ठहरो। मैं खत लिख देती हूँ।'

लायली ने खत लिख दिया।

मेहरुन चुपचाप अपने घर में बैठी थी।

शाम हो गयी। रोशनी जल गयी। मेहरुन माथे पर हाथ रख कर सोच रही थी। हठात् उसने वही जानी-पहचानी आवाज सुनी। टुंग-टांग, तार की आवाज। ईश्वरलाल बीच-बीच में अकेले बैठकर तार में सुर मिलाते हैं।

वह निश्चिन्त हुई। दिल से पत्थर जैसा बोझ उतर गया। झटपट केश संवार लिया। दुपट्टा लिया। चुपचाप सीढ़ियाँ उतर गयी।

सीढ़ियाँ एक साँस में पार कर गयी। डगमगाते पैरों से वह आगे बढ़ी, पर्दा उठाया। कमरे में एक बत्ती जल रही है। चिरागदान हाथ में लिये लायली खड़ी है, ईश्वरलाल उसके पैरों तले बैठे हैं। लायली के घुटनों में सिर घिस रहे हैं।

लायली, लायली, लायली!

मेहरुन ने सुन लिया।

उसी रात।

ईश्वरलाल ने कोई भी बात नहीं छिपायी। कष्टपूर्वक, अस्थिर कंठ से मेहरुन से बोले थे, 'मैं अब नहीं सह सकता हूँ, नहीं सह सकता हूँ। पाँच वर्षों से कष्ट भोग रहा हूँ, मेहरुन! जब और नहीं सह सका, उस समय चला जाना ही ठीक समझा था।'

लायली बाहर आ गयी।

ईश्वरलाल और मेहरुन। बीच में सिर्फ एक बत्ती जल रही है।

'मैं भयानक कष्ट पा रहा हूँ। मेरी छाती फटी जा रही है। अपने दिल के अंदर की हालत यदि तुम्हें दिखा सकता।'

मेहरुन बिलकुल चुप। वह अश्रुहीन आँखों से सब देखती रही।

पंद्रह वर्षों तक प्यार, मुहब्बत साथ ही संगीत-साधना भी।

'मेहरुन, हमारे तुम्हारे प्रेम की कहानी लोगों के दिल में अमर रहेगी। कितने ही दिन, कितनी ही रातें। थोड़ा-थोड़ा करके खुद को खतम कर देना यही है। फिर तो मृत्यु भी हम लोगों को अलग न कर सकेगी।'

मेहरुन अवाक होकर सब देखती रही। अभी भी ईश्वरलाल बोल रहे हैं। क्या बोल रहे हैं, यह तो उसने नहीं सुना।

उसके कानों में कोई बात नहीं घुसी।

ईश्वरलाल उसका हाथ पकड़ना चाहते हैं। लेकिन क्यों?

और हाथ पकड़कर क्या होगा? बाई जी की जिंदगी, रक्कासा की जिंदगी। गृहस्थ परिवार की बहुओं की तरह सुख-शान्ति क्या वे सब नहीं पाती है? किस तरह पायेंगी? पुरुषों को वे खींच लाती हैं, कितने ही सुखी व शान्त परिवार में आग लगा देती हैं। इसीलिये अभिशाप उन लोगों के आस-पास घूमता रहता है। लेकिन मेहरुन को तो वैसी अशान्ति का पता नहीं था। उसने तो सब कुछ पाया था। भरी जवानी में भी उसने कभी किसी पराये मर्द की तरफ नहीं देखा था। केवल ईश्वरलाल के संग ही वह खुश बनी रही।

लेकिन स्थायी कुछ भी नहीं है। ऐसा ही हुआ करता है। कुछ भी स्थायी नहीं है।

मेहरुन ने बत्ती उठायी। बाहर आ गयी।

मेहरुन दूसरे ही दिन चली जाती है।

बहुत दूर तिलोया। जहाँ कोई उसे जानता नहीं, पहचानता नहीं।

जाने के पहले उसने लायली से एक बात भी नहीं कही। केवल एक छोटी डिबिया दी थी। बोली थी, 'विष, बहुत ही तेज ज़हर। मैं रात भर डिबिया हाथ में लिये बैठी थी। साहस नहीं हुआ। तुम रखो। किसी दिन तुम्हें जरूरत पड़ सकती है। एक दिन आखिर

तुम्हारी जवानी भी तो चली जायेगी।'

ईश्वरलाल सर्वनाश से डरे। लेकिन जब सर्वनाश सामने आ खड़ा हुआ, उस समय वह भी चूँकि एक पागलपन के नशे में बह चलेंगे, यही सोचकर उन्होंने कमर कस ली।

'लहर में कूद पड़ा हूँ, अब डर किस बात का?' बड़बड़ा कर बोले।

लायली के साथ गाते हैं। लायली के कमरे में पड़े रहते हैं।

क्या दिन, क्या रात! शराब पीते हैं और उसे प्यार भी करते हैं। कहा करते हैं, 'हट मत जाना, आँखों के सामने से हट मत जाना।'

बीच-बीच में खामोश बैठे रहते हैं। हाथ से आँखें बन्द किये, सिर झुकाकर जाने क्या सोचते रहते हैं।

लायली से पूछते हैं, 'लायली, तुम्हें दुःख नहीं होता?'

'माँ के लिये? नहीं।'

'जरा भी नहीं?'

'नहीं। माँ ने मुझे जो सिखाया था, मैं वही तो कर रही हूँ। दुःख क्यों होगा?'

ईश्वरलाल हैरान होकर देखते रहते हैं। लायली हँसती है। कठोर और मजाक भरी हँसी। बोलती है, 'आपको देखकर भी दुःख नहीं होता।'

'मेरे बारे में क्यों कहती हो?'

'यही जो आप दिन-रात माँ के बारे में सोचा करते हैं। अन्याय किया है, यह चिंता आपके दिल से नहीं जाती, यह देखकर भी मुझे कष्ट नहीं होता।'

'लायली, मैं तुम्हें प्यार करता हूँ।'

'प्यार करते हैं?'

लायली खिलखिलाकर हँस पड़ी। बोलती है, 'प्यार के बारे में भला

आप क्या जानते हैं ? एक को तो पन्द्रह वर्ष तक प्यार किया। फिर उसे भूलकर और फिर किसी से········।'

'लायली तुम यदि कभी प्यार करो तब समझोगी कि मुहब्बत में कितनी जलन है।'

'किस तरह समझूँगी, बताइये। मुहब्बत नहीं की है न !'

'प्यार नहीं किया है लायली ? तुमने क्या मुझे थोड़ा भी प्यार नहीं किया है ? जरा भी नहीं ?'

लायली सिर हिलाती है। गंभीर होकर बोलती है, 'ईश्वरलाल जी, आपको देखकर मैंने समझा है, प्यार में बड़ी जलन है। नहीं-नहीं। आपकी तरह आज इसे, कल उसे प्यार करने में सचमुच बड़ी अशान्ति है।'

वह जाने क्या सोचती है। फिर मुँह नीचा कर तानपुरा के तार पर उँगलियाँ रखकर बोलती है, 'माँ की तरह दिलोजान से एक ही आदमी को प्यार करने में वैसा सुख नहीं है। इससे अच्छा है कि प्यार के बारे में सोचा ही न जाय।'

'मुझे उस दिन क्यों, उस तरह खींच लिया था, यह बताओगी, लायली ?'

'माँ को दुःख दूँगी, यही सोचकर। माँ ने मुझे बहुत दुःख दिया है। वाह, लेकिन मजा देखिये, माँ को दुःख दिया है, इसलिये आपको देखकर ही मुझे नफरत होती है।'

'नफरत होती है ?'

'हाँ। जिस दिन माँ के हाथों से आपको छीना था, उस दिन मन-ही-मन बड़ी आशा थी कि आप मेरा गरूर तोड़ देंगे। आप माँ के पास जाकर खड़े होंगे। यह देखकर संभवतः मुझे दुःख होगा। फिर भी मेरा दिल दस हाथ का हो जायेगा। मैं समझूँगी कि संसार में मुहब्बत ही सबसे बड़ी चीज है। ऐसा यदि देखती, ईश्वरलाल जी, तो शायद मैं भी एक दिन मुहब्बत कर सकती। लेकिन········।'

उसकी दोनों आँखों से जैसे चिनगारियाँ निकल रही हैं। वह बोलती है, 'मैंने देखा, एक कमसिन लड़की के रूप-यौवन में बड़ी शक्ति है, उसके सामने पन्द्रह वर्ष का पुराना प्रेम क्षणभर में झूठ सिद्ध होता है'। ईश्वरलाल जी मैं जीत गयी हूँ। लेकिन इस जीत से मुझे गर्व नहीं हुआ। और जीतकर जो पाया है, उस चीज़ के लिये मुझे कोई दिलचस्पी नहीं थी।'

सचमुच नहीं थी।

कोई दिलचस्पी नहीं थी, कोई आकर्षण नहीं था। इसलिये एक दिन बिना किसी कारण ही लायली ने ईश्वरलाल जी को छोड़ दिया। बोली, 'अब आप नहीं जायेंगे। मैं जा रही हूँ।'

'कहाँ लायली ?'

'कलकत्ता। आलिशाह जहाँ हैं।'

'लायली, एकदम चली जाओगी ?'

'एकदम।'

लायली घर के अंदर जाते-जाते वापस आ गयी। उसके बाल रूखे-सूखे। उसकी आँखों के नीचे कालापन। बोली, 'और भी एक बात आपके लिये जानना जरूरी है। तिलोया में मेरी माँ मर गयी है। वह बीमार पड़ी थी। उसने मुझे खबर भी नहीं दी थी। नहीं, ईश्वरलाल जी, लखनऊ में मैं और नहीं रह सकती हूँ।'

दस दिन बाद ही लायली आसमान लखनऊ छोड़कर चली गयी।

अट्ठारह

बजरंगी ने जब लायली को देखा, वह हैरान रह गया।

कुंदन इस मकान में एक नया प्राणी ला रहा है, यह वह जान गया था।

उसकी एक जमाने की परिचिता मुन्नी ही आज लायली आसमान हो गई है, यह उसे पता नहीं था।

लायली के आने के पहले, इस मकान में जाने कितना आयोजन हुआ। मकान रंगाया गया। साहब के मकान से माल-असबाब आया। चीनी कारीगर ने आकर काठ की सुन्दर खिड़की बनायी। नर्सरी के माली ने आकर फुलवारी का नक्शा बनाया। दरवाजे और जंगलों पर पर्दे, फर्श पर गलीचा, गुसलखाने के फर्श पर सफेद पत्थर।

बजरंगी यह सब देखकर बहुत खुश हुआ। उसका मालिक इतना खुश है, इसी बात से वह भी आनन्दित है।

लायली के सामने वह आना नहीं चाहता। मालिक ने कहा है, 'उसकी इज्जत करना बजरंगी। वह बड़ी तेज है।'

बजरंगी दूर ही दूर रहता है। बीच-बीच में जरूरत पड़ने पर ही लायली के सामने आता है। बोलता है, 'कारीगर आया है। सोफा सेट का ढक्कन लाया है।'

कभी फुलवारी से फूल तोड़कर भेज देता है। कुंदन ने आने पर उसे बुलाया। वह आकर खड़ा हुआ। कुंदन ने कहा, 'बजरंगी, मालकिन की बड़ी इच्छा है कि फुलवारी में एक छोटा-सा पैगोडा बनवाया जाय।'

'अच्छा!'

'मिस्त्री मिलेगा?'

'निश्चय। ये चीनी मिस्त्री जरूर ही पता दे सकेंगे।'

'बजरंगी, बजरे के भीतर गद्दी नहीं लगायी गयी है न!'

'अब लग जायेगी।'

बजरंगी दरवाजे से उठंग कर खड़ा है। लायली जंगले के पास एक कुर्सी पर बैठी है। थोड़ा-थोड़ा झूल रही है। रेशम की एक कोमल डोरी दीवाल से लगी हुई है। उसका एक छोर लायली के हाथ में है। वह उसे धीरे-धीरे खींच रही है। ऊपर झाड़-फानूस में

धक्का लगने से आवाज होती है, टुंग-टुंग।

लायली आँखें बंद किये आवाज सुन रही है। बजरंगी की ओर नहीं देखती। बोली, 'कुंदन, असल बात ही भूले जा रहे हो?'

'क्या लायली?'

'मिडलटन रो में मेमसाहब की सब चीजें नीलाम पर उठा दी जायेंगी? तुम मुझे नहीं ले चलोगे?'

सच तो! कुन्दन को याद आयी। मिसेस एलिस के बोर्डिंग की सब चीजें नीलाम पर चढ़ायी जा रही हैं। मिसेस एलिस उतने दिनों बाद कारोबार से छुट्टी ले रही हैं। शादी करके कराची चली जा रही हैं। उनके बोर्डिंग वाले मकान के कमरे में कितना सामान, कितना पर्दा, चादर, काँच का बर्तन था। लायली ने बेंत का एक सुन्दर सेट खरीदना चाहा है।

कुंदन व्यस्त होकर बोला, 'बजरंगी, तुरन्त खबर दो। गाड़ी तैयार करने को कहो।'

बजरंगी व्यस्त होकर नीचे उतर गया। वह अब्दुल को बुलाता है। अब्दुल झटपट दौड़ा जाता है। दोनों सईसों को जहाँ-तहाँ धक्का मारता है। बोलता है, 'हटो, बेटे, झटपट गाड़ी तैयार करनी होगी।'

सईस लोग सिर पर टोपी पहन लेते हैं। गाड़ी के पीछे चढ़ जाते हैं। बड़े-बड़े बदामी घोड़े। शरीर चकमक-चकमक कर रहा है। गर्दन में घन्टी भी बँधी है।

गाड़ी बरामदे में आकर रुकती है।

बजरंगी भागा-भागा ऊपर चला गया। बोला 'मालिक गाड़ी तैयार है।' कहकर वह शर्म में डूबा बाहर आ गया। कुंदन लायली के गले में हार पहना रहा था। लायली की साड़ी का पल्ला जमीन पर लोट रहा था।

वह नीचे चला गया! भागा-भागा माली आया और गुलाब के फूलों का दो गुच्छा उसके हाथ में दे गया। बजरंगी ने वह सब गाड़ी

पर रख दिया।

लायली नीचे उतर आयी। साथ में है कुंदन। नीली बनारसी का पल्ला लोटाते-पोटाते लायली गाड़ी पर चढ़ी। गाड़ी की खिड़कियों पर परदे। दरवाजा बन्द हो गया। एक खिलखिलाती हुई हँसी सुनाई पड़ी। इसके बाद ही गाड़ी सड़क पर निकल पड़ी।

बजरंगी ऊपर आ गया।

कुंदन की गैरहाजिरी में बिना उसकी इज़ाजत लिये सभी को ऊपर जाने का हुक्म नहीं है। लायली की दासियाँ सीढ़ी के मुँह पर खड़ी थीं। बजरंगी कमरे में घुस गया।

वह भौंहें चढ़ाकर खड़ा रहा, होंट काटता रहा। बिछावन की रेशमी चादर फर्श चूम रही थी। बड़े-बड़े कान के बाले, पन्ना की कंठी, बाजूबन्द सभी बिछावन पर पड़े थे।

बजरंगी ने वह सब उठाया। जेब में रखा। बाहर आ गया। नीचे अपने कमरे में बैठकर उसने महाराज को खबर भेजी। उसे तुरत खाना चाहिये। क्योंकि चीनी कारीगर को खोजने के लिए जल्दी ही निकलना पड़ेगा।

'लेकिन तभी एक सईस भागा-भागा आता है।'

'बजरंगी बाबू। बजरंगी बाबू।'

'अरे क्या बात है? तुम तो गाड़ी के साथ गये थे?'

'आप अभी-अभी चले जाइये। होगसाहब के बाजार से फल ले जाइये और मांस, चावल, छिमी मटर भी। वे सब लोग गाड़ी लेकर बैरकपुर चले गये। वहीं कोठीबाड़ी में रसोई पकेगी। खाना वहीं होगा।'

'मालिक, मालिक के खाने-पीने का क्या होगा?'

'मुझे क्या मालूम! आप एक किराए की गाड़ी लेकर चले जायें।'

बजरंगी उठ खड़ा हुआ। झटपट जूता कमीज पहन ली। गाड़ी

लाने को कहा।

बहुत देर बाद। बैरकपुर की सड़क पर चलते-चलते बजरंगी सोचता है, अब आज मालिक का खाना-पीना नहीं होगा।

बैरकपुर में गंगा के किनारे कोठी। बाबर्ची आ गया। नौकर सब भाग दौड़ कर रहे थे। आबदार व्यस्त होकर पानी भर रहा था। बजरंगी को देखकर सभी ने शिकायत की 'आगे से खबर दिये बिना मालिक क्यों आ गये ?'

आबदार ने कहा, 'बजरंगी साँव, नयी मालकिन तो आसमान की परी हैं !'

'वे कहाँ हैं ?'

'फुलवारी में।'

बाग में गाछ के नीचे गलीचा। उस पर आधा-आधी लेटे हुए लायली और कुंदन बैठे हैं। सामने शतरंज की बिसात बिछी है। इस भरी दोपहरी में दोनों जन शतरंज खेलने बैठे हैं। पास में शरबत का गिलास।

जिस समय शतरंज की बिसात उठायी गई, उस समय धूप काफी हो गयी थी।

शाम को लायली हठात् बोल उठी, 'आज अब नहीं लौटूँगी। कुंदन, आज यहीं रहूँगी।'

बजरंगी की सलाह किसी ने जाननी नहीं चाही थी। फिर भी बजरंगी हठात् बोल उठा, 'यह कैसे होगा ? इस तरह मालिक का खाना नहीं होगा।'

'ऐसा ? मेरे लिये तुम्हारे मालिक ने एक दिन मानो उपवास ही कर लिया।'

तंग आकर कुंदन ने कहा, 'बजरंगी जाओ। मेरे खाने के लिये फिर चिंता ?'

बजरंगी ने कहा, 'तब मैं ही चला जाऊँ। कलकत्ता में खबर दे दूँ।'

'कहाँ जाओगे, भाई ? अँधेरा हो गया है न ?'

'मालिक, खिदिरपुर के घर के सब कमरा, दरवाजे खुले हुए हैं।'

लायली कठोर आवाज में बोली, 'इससे तुम्हारा क्या ? तुम्हें तो मालिक अपने काम से भेज रहे हैं, जाओ न।'

बजरंगी कुंदन की तरफ देखता रहा। अगर बात ही सुननी हो तो वह कुंदन की ही बात सुनेगा। ऐसा ही भाव है।

'बजरंगी जाओ !' कुंदन ने आँखें नीची करके कहा।

बजरंगी चला गया।

वह बरामदे पर आकर खड़ा हो गया। कमरे में रोशनी जला दी गई। शायद वे सब आराम कर रहे हैं। बजरंगी को खूब थकावट सी लगी। वह निवार की एक खाट खींच लाया। इसके बाद एक चादर खोजने लगा। इस मकान के बक्सा-घर में एक काठ की आलमारी है। उसमें चादर रहती है, पर्दे रहते हैं। बजरंगी एक सफेद चादर ले आया। खाट के पास आकर वह हठात् रुक गया।

लायली बैठी थी। लायली हँस पड़ी। बोली, 'बैठो बजरंगी।'

बजरंगी खड़ा ही रहा।

'क्यों सुना नहीं ?'

'हाँ !'

'बैठते क्यों नहीं ?'

बजरंगी दीवार से उठंग गया। बोला, 'बैठूँगा नहीं।'

लायली थोड़ा हँसी। बोली 'पहले दिन तुम मुझे पहचान सके थे ?'

'जी !'

'यह क्या ? इस तरह बातें क्यों करते हो ?'

'शायद मालिक बुला रहे हैं, देख आऊँ।'

'तुम्हारे मालिक तो सो रहे हैं बजरंगी।'

लायली ने एक बार बाहर की तरफ देखा। बोली, 'जाने क्यों यहाँ आना चाहा, रहना चाहा। अब एकदम अच्छा नहीं लगता। कैसा अँधेरा-अँधेरा, बड़े-बड़े गाछ, मकान भी बहुत पुराना है।'

'पुराना मकान है, साहब का मकान है।'

इसीलिये शायद इतनी चीजें, माल-असबाब हैं।'

'हाँ। मकान जैसा था, वैसा ही है। मालिक ने बदला नहीं।'

'तुम्हारे मालिक के पास तो शायद बहुत से मकान हैं?'

'हाँ, मालिक को जो मकान पसंद आता है, उसे ही खरीद लेते हैं।'

कहकर बजरंगी खुद को सम्हाल लेता है। किसे पता, मालिक ने उसे यह सब बताया है या नहीं। नहीं बताने से बजरंगी बोलने वाला कौन होता है?

'तुम्हारे मालिक के पास बहुत रुपये हैं, यह मैं जानती हूँ। मुझे खरीद लेना चाहता है, नहीं देखते?'

हठात् बजरंगी सब कुछ भूल जाता है। अलग रहने का पक्का विचार और नहीं टिक पाता। वह बोलता है, 'वह भला ऐसा कर सकते हैं? मालिक को तो आपने खरीद लिया है?'

'यह क्या देख रही हूँ? अब जुबान फूटी है? मैंने तुम्हारे मालिक को खरीद लिया है?'

'मालिक आपको खुश रखना चाहते हैं। आपके खुश होने पर मालिक को आनंद होगा।'

'मालिक, मालिक सिर्फ कुंदन की बात। मुझे आप क्यों कहते हो? ऐसा भाव दिखा रहे हो, जैसे मुझे पहचानते ही नहीं। पहले की जैसे जान पहचान ही न हो?'

'आप झूठमूठ ही गुस्साती हैं। पहले दिन मैंने बात कही थी। वह आपको बेअदबी लगी थी। बार-बार स्थिति बदलना क्या अच्छा है?'

'बजरंगी, तुमने उस दिन की बात अब तक याद रखी है ?'

'सुनिये, मालिक पुकार रहे हैं।'

सचमुच में कुंदन जाग गया था। नींद टूट गई थी। आलस से भरा हुआ भारी कदम। आँखें लाल। गला भारी।

'तुम लोग क्या कर रहे हो ?' कुंदन लायली के पास आकर धप् से बैठ गया। लायली कुंदन के हाथ को अपनी चोटी से लपेटती हुई बोलती है, 'एक दो बात पूछ रही थी। तुम्हारा बजरंगी बड़ा ही बे-अदब है, भई।'

'क्यों रे, क्या बेअदबी की है ? आँ ?'

बजरंगी चुपचाप था। कुंदन भारी गले से हँसा फिर बोला, "उसकी बात का ख्याल मत करो। वह मुझसे ही कब क्या कह-सुन देता है, इसका कोई ठीक नहीं। बजरंगी ?'

'मालिक !'

'जाओ, जरा उधर देखो-सुनो। आज क्या कुछ-खाना-पीना मिलेगा ?'

बजरंगी चला जाता है।

बड़ी रात गये खाना-पीना होता है। बड़ी रात गये निवार की खाट पर बरामदे में बजरंगी जा पड़ता है। फिर सुबह की धूप आँख पर पड़ने से उसको नींद खुलती है।

सुबह उसे सईस बुलाता रहता है। 'उठिये, उठिये। वे सब लोग तो सुबह ही कलकत्ता चले गये। आपको किराये की गाड़ी कर लेने को कह गये हैं।'

सईस पास जाता है और आँखें गोल-गोल कर के कहता है, 'बजरंगी बाबू ! नयी मालकिन का क्या दिमाग खराब है ?'

'क्यों रे ?'

'गाँव तकिया, तकिया सब गाड़ी पर लाद लिया। बोली, सोयी-सोयी कलकत्ता जाऊँगी।'

बजरंगी बोला, 'जाओ, अपना काम करो।'

कुंदन की माँ ने बजरंगी को बुला भेजा।

इसके पहले बजरंगी अन्दर कभी नहीं गया था। वह सदर अंदर के बीच की गली में आकर खड़ा होता है।

'क्यों रे, आजकल कुंदन बीच-बीच में आता क्यों नहीं है?'

'व्यस्त रहते हैं।'

'तुम उसे ठीक समय पर घर नहीं भेज सकते हो? गोपाल बोलता है कि काम वाले आदमी सब आ-आकर चले जाते हैं? इससे क्या नुकसान नहीं होता?'

'कहूँगा।'

'कहना। सुना है, तुम्हें भी रहने के लिए एक अच्छा सा कमरा दे दिया है! सुविधा पाकर उसे खूब लूट रहे हो, क्यों?'

बजरंगी कुछ नहीं बोलता। उसका कान और गला तक लाल हो जाता है। लगता है, उसके कानों से आग निकल रही है।

'जाओ, उससे मन्दिर में कुछ रुपये भेज देने को कहना।'

वह अपने मन में ही बकबक करती हैं। कुंदन मुझे ऐसी जगह ले आया, कि जहाँ उसके बाप के नाम पर पुण्य करने का भी उपाय नहीं। यहाँ पियाऊ भी भला कहाँ खोलूँ। उस मंदिर में मुझे जाने की इच्छा भी नहीं होती।

फिर कुंदन की माँ बजरंगी से सवाल करती है।

'क्यों रे बजरंगी, थोड़ी सी जमीन खरीद कर कुंदन एक तालाब क्यों नहीं खुदवा दे सकता? पिता का कोई तो निशान रहेगा? इधर उस लड़की के माँगने पर लगता है, आकाश का चाँद तोड़कर ला देगा। यह क्या सब अच्छा हो रहा है? कहाँ की, कौन है? जाति धर्म का भी ठीक नहीं। उसे लेकर इतना पागल बना रहना, उससे इतना घुलना मिलना, क्या अच्छा है?'

खुद सवाल करती है, खुद ही जवाब भी देती है, 'शायद देखने में सुंदर हैं। सुंदर चेहरा के सामने सब वश में रहता है, है न ?'

तंग आकर बजरंगी वहाँ से चला आता है।

कुंदन के कमरे से कुछ काम की चीजें लेना है। वह जाकर मकान देखता है, ऊपर काफी शोरगुल हो रहा है। छत पर गलीचा है, तकिया है।

बजरंगी कुछ देर तक बैठा-बैठा सोचता है। कुंदन की माँ, गोपाल, सब उसे प्रायः कहते ही रहते हैं। कुंदन की कमजोरी का फायदा उठाकर वह क्या सचमुच अपनी सुख सुविधा बना रहा है। वे सब कुंदन से कुछ नहीं कहते। बजरंगी अच्छी तरह समझता है कि कुंदन जो उसे इतना प्यार करता है, यह वे सब अच्छी आँखों से नहीं देखते।

'अपना बालक पड़ा रहा, पराया जाने कौन उसे सोना का दाना खिला रहा है।'

यह बात बार-बार कुंदन की माँ ने दुहराई है। कभी-कभी हँसता है, कभी-कभी दुःखी होता है। दूसरों की तो बात ही क्या, कुंदन भी नहीं जानता कि बजरंगी को कितना कष्ट उठाना पड़ता है। कुंदन बहुत बार काम में मशगूल रहता है। गाजीपुर चला जाता है, बम्बई चला जाता है। बजरंगी उसके कमरे में पहरा देता है। उस समय उस घर का महाराज तक उसकी थाली में उसे तरकारी देना भूल जाता है। दूध या दही देने की याद भी उन सबों को नहीं रहती।

कुंदन दिन में खाना नहीं खाता। केवल रात में ही वह एक बार खाता है। उस समय वह अंदर जाता है। उसकी दादी मोढ़ा पर आ बैठती है, माँ भी बैठती है। कुंदन किसी तरफ भी नहीं देखता। सिर नीचे कर के एक मन से खाये जाता है।

थाल के पास कटोरियों की कतार देखकर उसे पता नहीं क्या याद

आता है। भारी आवाज में बोलता है, 'बजरंगी ने खाया है ? उसका खाना हो गया है ?'

'हाँ, तुम तो खाओ।' उसकी दादी बोलती है।

कुंदन कमरे में आकर पूछता है, 'तुमने खाना खाया ?'

'हाँ, मालिक ! अब तुम सो रहो।'

कुंदन सो जाता है। तब बजरंगी उठकर अंदर चला जाता है। अँधकार से भरा बरामदा। रेड़ी के तेल का चिराग। महाराज बैठे-बैठे झपकियाँ ले रहा है। किसी दिन बजरंगी की भूख मिटती है, किसी दिन नहीं भी मिटती। वह कुछ नहीं बोलता। दूसरों को तकलीफ देने में उसे संकोच होता है।

कुंदन की सभी चीज पर उसका अटूट अधिकार है। इसीलिये बजरंगी अपने लिये चार पैसा खर्च करने में भी इतना संकुचित होता है। उसकी जेब में जब सौ रुपये का तोड़ा रहता है, तब खुदरा न होने पर वह काली घाट से खिदिरपुर, खिदिरपुर से बड़ा बाजार तक पैदल ही चला जाता है।

बजरंगी बैठा-बैठा सोचता रहता है।

हठात् उसे गुस्सा आ जाता है। कुंदन पर गुस्सा आता है। फिर भी वे सब सोचते हैं कि वह कुंदन की कमजोरी का फायदा उठाकर अपनी टेंट भरता है।

रुपये-पैसे की बात में कुंदन उसके अलावा और किसी पर विश्वास नहीं करता। गद्दी से रुपया घर लाने की जिम्मेदारी कुंदन ने यहाँ तक कि गोपाल को भी नहीं दी है।

कुंदन के काम के कारण वह कितने ही दिन खाना भी नहीं खा पाता। कितने दिन तो एक बजे दिन में लौटते ही कुंदन उसे श्याम-नगर भेज देता है।

कुंदन ने इसी घर में उसके रहने का इन्तजाम कर दिया है। लेकिन रुपया-पैसा लाने उसे बार-बार उस मकान में जाना पड़ता है।

कुन्दन की माँ को देखते ही उसे डर लगता है। गोरा रंग, आँखों के नीचे कालापन। सिर पर अधपके केश। आधे केश में गाँठ बन गयी है। वह सब जटा की तरह झूलता है। कुछ केश जटा की तरह झूलता है, कुछ केश रेशम जैसा कोमल है। पीठ पर फैला रहता है। कभी-कभी निगाहें कोमल रहती हैं, कितनी नरम, कभी गरम। जैसे माया-ममता झड़झड़ कर गिर रही है। कभी वे आँखें जलती रहती हैं। बड़ी-बड़ी आँखें इधर-उधर घुमा कर कुन्दन की माँ ताकती है। और कितनी ही अनाप-शनाप बातें बकती रहती है।

उसे देखते ही बजरंगी को डर लगता है। कुन्दन के घर के सभी लोग जाने कैसे-कैसे हो गए हैं।

गोपाल को देखने से नहीं लगता कि वह कुन्दन का ही भाई है। गोरा रंग, सुन्दर चेहरा, वह जैसे न सात में है, न पाँच में।

'बाबा, मैं कुछ नहीं जानता। मैं शान्तिप्रिय आदमी हूँ।' गोपाल चिल्ला-चिल्ला कर यही बात कहता है।

जो यह बात चिल्ला-चिल्ला कर कहता रहता है, वह सचमुच में शान्तिप्रिय आदमी है या नहीं, बजरंगी को इस पर संदेह है। यदि शान्तिप्रिय हो तो फिर क्यों गद्दी पर बैठकर खंजाची से घुलमिल कर बातें करते हो भाई ?

गोपाल बीच-बीच में गद्दी से रुपये लेता है। बजरंगी यह जानता है, लेकिन कुंदन से नहीं कहता। बजरंगी के मन में विश्वास है कि कुंदन यह बात समझता है। कुंदन घर वालों के सम्बन्ध में कभी भी, थोड़ा भी नुकताचीनी नहीं करता। बहुत तंग आने पर केवल इतना कहता है, 'जाने दो। जो इच्छा हो वे सब करें। मैं कुछ भी परवाह नहीं करता। मेरा जो फर्ज है, मैं किये जाता हूँ। फर्ज पूरा करके कोई स्वर्ग नहीं गया है, मैं भी नहीं जाऊँगा।'

बजरंगी चुप रहता है।

कुंदन बोलता है, 'उन लोगों के बारे में मैं कुछ नहीं सोचता,

जाने दो। रुको न, थोड़ा और बूढ़ा हो जाऊँ तब उन सबके हाथों में सब दे दूँगा। देकर चले जायेंगे। हम और तुम।'

कुंदन कपड़े बदलता है। कमर से बिछुआ निकाल कर बजरंगी के हाथों में दे देता है। बिछावना पर लेट जाता है। आँखें बंद करके बोलता है, 'उन लोगों की बातें एक कान से सुनना और एक कान से निकाल देना। वे सब मेरे भला कौन हैं ?'

कभी-कभी कुंदन बहुत नाराज हो जाता है। गोपाल के लड़के को बुलाता है। कठोर शब्दों में बोलता है, 'पुण्यवान ! हैं सब ! अरे, जो सब पापियों के पैसे से खाते-रहनते हैं, उन्हें बार-बार देव मंदिर जाने की भला क्या जरूरत है ? जाओगे या न जाओगे। दो चार सौ रुपया रहे या जाय, कुंदन इसकी परवाह नहीं करता। लेकिन मैं जानना चाहता हूँ कि बजरंगी का बुलाकर मनोहर ने उसे नौकर क्यों कहा ? उसे बुलाकर रुपये-पैसे का हिसाब क्यों माँगते हो ? क्यों ? जवाब दो।'

गोपाल का लड़का मनोहर रो पड़ता है।

कुंदन की माँ दौड़ी जाती है। दादी दौड़ी आती है। गोपाल की पत्नी दरवाजे की आड़ में खड़ी-खड़ी काँपती रहती है।

गोपाल पूछता है, 'किसने तुमसे यह सब बात कही ?'

'वह नहीं बोलता। उसने तुम लोगों की तरह लिखना-पढ़ना भी नहीं सीखा है। चुगली करना भी नहीं सीखा। कौन कहता है ? गोपाल तुम कब-कब हीरालाल की गद्दी पर जाते हो, कब मसाले की आढ़त जाते हो, मुझे सब खबर मिलती है।'

गोपाल का चेहरा सफेद। कुंदन अपनी माँ और दादी से कहता है, 'जाओ यहाँ से। पुण्यवती सब ! एक आदमी समय पर खाता है या नहीं इसकी खबर भी नहीं रख पातीं ?'

इसके बाद अपने आप ही चिल्लाता रहता है। 'सब बर्बाद कर दूँगा। बाहर चला जाऊँगा। यहाँ नहीं रहूँगा। मेरा क्या, मेरा अपना कौन है यहाँ ?'

कई दिनों तक बजरंगी की सुख-सुविधा के संबंध में घरवाले सतर्क रहते। बजरंगी घबड़ा जाता। कई दिन कुंदन की हाँक-पुकार सुनी जाती, 'अपनी सुख-सुविधा ले लिया करो। अरे अभागा, मल्लाही बुद्धि लेकर भी क्या बचा जा सकता है? माँगना पड़ता है ज़बर्दस्ती माँगना पड़ता है। जो माँगना नहीं जानता, उसे कोई भी कुछ नहीं देता। समझे!'

फिर धीरे-धीरे सब हो-हल्ला बंद हो जाता है।

कुंदन भूल जाता। घर वाले भी भूल जाते। फिर बड़ी रात तक बजरंगी झपकियाँ लिया करता है। कभी-कभी महाराज उसे बुलाता। अँधेरा बरामदा। रेंड़ी के तेल का चिराग। रोटी, भात, दाल और अचार। बिना कुछ बोले, खाकर बजरंगी उठ जाता।

लेकिन आज का यह अभियोग!

बजरंगी ने अच्छी तरह देखा। खाट, गद्दी, चेयर, टेबुल, खूँटी। बड़ी-बड़ी सेज बत्ती। बड़े लाईट। किसने यह सब माँगा है, भाई? बजरंगी को तो इन चीजों की जरूरत नहीं। बजरंगी यहाँ केवल मालिक का मुँह देखकर पड़ा है।

बजरंगी ने जीवन में कभी भी मालिक को किसी लड़की पर नजर उठाते नहीं देखा।

'शादी करो मालिक, तुम दोनों जने की सेवा करूँगा।'

'मुझे लड़की कौन देगा रे? मेरा नाम सुनते ही सभी डर से काँपने लगते हैं।'

'वे तो जानते नहीं कि तुम कितने भले हो।'

'तुम जानते हो, क्यों?'

'जानता तो हूँ ही।'

'तुम्हारी शादी कर दूँगा। तुम्हारी शादी होगी, वही तेरा परिवार होगा। वहाँ मैं रहूँगा।'

बजरंगी हँसता है। बोलता है, 'मुझे ही भला क्यों कोई लड़की

देने लगा ?'

'कहूँगा, तुम मेरे बजरंगी हो। तुम्हारे लिये एक हसीन लड़की लाऊँगा। उसे लेकर दूर चले जाओगे, बहुत दूर।'

'दूर क्यों चला जाऊँगा, तुम्हारे पास बना रहूँगा।'

'मेरे पास तुम्हें रहने ही भला कौन देता है ? दूर जाओगे, मिहनत कर के खाओगे। मैं तुम्हारे पास आऊँगा।'

'मैं तुम्हें बैठाकर खिलाऊँगा।'

'हाँ। केवल एक ही शाम तो खाता हूँ ? तुम्हें ज्यादा खर्च नहीं करना पड़ेगा।'

'तुम्हारे घरवाले भला तुम्हें छोड़ेंगे ही क्यों ?'

'वे सब मुझे बहुत प्यार करते हैं, क्यों रे ? तुम देख लेना, मसाले का कारबार, गाजीपुर के गुलाब का कारबार, नाव का कारबार, उन लोगों के हाथों दे देने से सभी मुझे भगाकर ही दम लेंगे।'

कहते-कहते कुंदन को अचानक बहुत गुस्सा आ जाता है। वह चहलकदमी करता रहता है। बोलता है, 'वे सब पुण्य करेंगे। पापी को घर से भगाकर, गंगाजल से घर धोयेंगे। रामायण पढ़ेंगे।'

'मालिक तुम गुस्सा क्यों कर रहे हो।'

'तुम्हारी बातें सुनकर तो मुर्दा को भी गुस्सा हो आता है रे ! गदहा, उल्लू, कहीं का ! भगवान ने दो आँखें दी हैं, लेकिन दुनिया का असली चेहरा देखना नहीं सीखा। आदमी बनो, बजरंगी। बड़े बनो बजरंगी।'

'बड़ा होना नहीं चाहता हूँ, बाबा। केवल अपने पास रहने देना।'

'क्यों ? पंडा महाराज, भक्त बाबूसाहब—मेरे पास क्यों।'

'मुझे छोड़कर कोई भी तो तुम्हें नहीं देखता सुनता। सभी तुम्हारे रुपयों से प्यार करते हैं।'

'और बातें मत करो। लो, जरा पाँव दबाओ तो ! फिर मैली

कमीज पहन रखी है ? कमीज नहीं है क्या तुम्हारे पास ?'

कुंदन पैर खींच लेता है। इतनी आसानी से वह नौकर को भी पाँव दबाने को नहीं कह सकता। बोलता है, 'सारंगी की छड़ खींचते हो, इससे हाथ इतना क्योंकर कड़ा हो गया ?'

बजरंगी को आज सारी बातें याद आ रही हैं। गुस्सा भी आ रहा है, दुख भी होता है। इतने दिन बाद यदि मालिक को मन के लायक एक स्त्री मिली भी तो वह उसे दोनों हाथों से लूट रही है।

'छत पर गये हैं। छत पर मजलिस जमेगी !'

झटपट बजरंगी ऊपर चढ़ गया। छत पर चला गया। जो सोचा था वही। कालीन पर कुंदन करवट लिये पड़ा है। लायली उसका हाथ पकड़ कर हाथ की रेखा देख रही है।

'मालिक !'

'कौन, बजरंगी ? क्या बात है ?'

'मालिक, बाद में कहूँगा।' .

लायली हँसी। बोली, 'मेरे सामने नहीं कहोगे, क्यों बजरंगी ?'

कुंदन ने कहा, 'उसे कुछ हुआ है। क्या हुआ है, रे ?'

'मालिक, मैं अब उस मकान पर नहीं आऊँगा।'

'क्यों ?'

'तुमने मुझे कमरा दिया है। माल-असबाब दिया है। माँ ने मुझे कितनी खरी-खोटी सुनाई। तुम उस मकान पर क्यों नहीं जाते हो ? मुझे सभी लोग....'

'अभी यह सब बातें सुनाने क्यों आये ?'

लायली बोलती है, 'ऐसा तो कहेंगे ही कुंदन। नौकर को भी क्या कोई इतना बढ़ावा देता है ?' उसके होंठों से तीखे ताने की हँसी। कुंदन हठात् बिगड़ उठा।

वह उठ बैठता है। बोलता है, 'ये सब मुझे शान्ति से नहीं रहने देंगे। बजरंगी, गाड़ी है ?'

'मालिक, तुम अभी जाओगे ?'

'जाऊँगा नहीं ? तुम आकर बक-बक करोगे, वे सब तुम्हें बात सुनायेंगे। ठहरो।'

वह जूते पहन कर उठ खड़ा होता है। बोलता है, 'जाने की जरूरत है। यों रात में जाता। अभी ही चला जाऊँ।'

बजरंगी उदास निगाहों से लायली की तरफ देखता है, 'आप मालिक को मना कीजिए। रोकिए।'

'नहीं कुंदन, तुम जाओ !'

कुंदन सीढ़ी उतरने लगता है। बोलता है, 'तुम यहीं बैठे रहो। लायली, उसे आने मत देना। ये पुजारी आदमी हैं, पंडा महाराज। मुझे अभी लंबा-लंबा उपदेश देंगे।'

'मालिक तुम मेरी बात सुनकर मत जाओ।'

'अरे हरामजादा, मैं रुपये लाऊँगा न ! तुम्हें फिर से कैसे भेजूँ ?'

'कितने रुपये चाहिए। मैं देता हूँ।'

'तुम्हारे पास कितने हैं ?'

'तीन हजार।'

'नहीं नहीं, मुझे और अधिक रुपयों की जरूरत है। गाजीपुर जाऊँगा न ?'

कुंदन नीचे उतर पड़ता है।

बजरंगी बोलता है, 'आपने क्यों नहीं मना किया ?'

लायली हाय छोड़ती है। बोलती है, 'जाने दो न बाबा। हर समय मेरा मुँह देखता हुआ बैठा रहता है। मुझे भी अच्छा नहीं लगता।'

'जिस मालिक के रुपये अच्छे लगते हैं, उस मालिक का साथ अच्छा नहीं लगता ?' यह बात बोलकर बजरंगी डरा। इतनी बड़ी बात बोल देना, शायद उसके लिये उचित नहीं था। किसे पता, लायली बिगड़ी या नहीं।

लायली ने शायद उसकी बात का कोई बुरा नहीं माना। बोली, 'बात तो झूठ नहीं है बजरंगी। रुपये देकर तुम्हारे मालिक ने मुझे बाँध रखा है। मैं अगर अच्छी न लगूँ तो दोष दे सकते हो ?'

'आपको दोष देने वाला मैं भला कौन होता हूँ ?'

'बजरंगी, तुम्हें क्या देकर मालिक ने खरीदा है, बताओ तो ? उसके लिये तुम इतनी जान क्यों देते हो ?'

'क्या कहूँ ?'

'मुझे यही जानने की इच्छा है। वह तुम्हारी बात इस तरह क्यों मानता है ?'

'मालकिन, आपने तो मेरे मालिक का दिल ही खरीद लिया है।'

'इसके मतलब ?'

'सच कहता हूँ। आपकी हँसी भर देखने के लिये मालिक जान तक दे सकते हैं। आप क्या समझ नहीं पातीं कि वह प्यार पाने के मामले में कितने कंगाल हैं ?'

'नहीं ! नहीं समझती। और तुम्हें भी तो नहीं समझ पाती।'

'क्यों ?'

'तुम तो जैसे मुझे पहचानते ही नहीं। जैसे मुझे बिलकुल भूल ही गये हो।'

'मैं जिसे पहचानता था, वह कहाँ है ?'

'वही मैं हूँ।'

'नहीं, नहीं, उसका नाम मुन्नी था। वह कागज की पतंग पाकर ही कितनी खुशी होती थी ! आज तुम्हारा मन पाने के लिये मेरा मालिक सर्वस्व लुटा रहा है।'

'बजरंगी, मैं उतनी अच्छी नहीं ?'

'वह बहुत अच्छी थी। तुम यकीनन बहुत हसीन हो। लेकिन उसका दिल बड़ा था, लायली ! अब देखता हूँ, लोग जो कहते हैं, वह सच ही है।'

'लोग क्या कहते हैं ?'

'बहुत ज्यादा कीमत दिए बिना लायली आसमान का दिल नहीं पाया जा सकता।'

'लोग ऐसा कहते हैं ?' लायली उठ बैठी। उसके गले का हार उसकी छाती पर उठता गिरता है। लायली जोर-जोर से साँस लेती है। बोलती है, 'लोग नहीं जानते इसलिये ऐसा कहते हैं। मुन्नी को कितनी कीमत देनी पड़ी है, कितनी कीमत चुकाकर वह लायली आसमान बनी है ? यह क्या कोई जानता है ?'

लायली बजरंगी की ओर देखती है। उसकी आँखों में दर्द की छाया है। मुँह पर कठोर हँसी।

'बजरंगी, शायद मेरे लिये तुम्हारे मालिक को प्यार करना उचित है। लेकिन आदमी को प्यार करने वाला दिल तो मैं रास्ते में ही खो आयी हूँ। मुन्नी से लायली बनने में मुझे लंबा रास्ता तय करना पड़ा है। शायद इसीलिये, आज मेरा दिल आसानी से नहीं मानता।'

बजरंगी चुपचाप सुनता रहा।

'बजरंगी, तुम्हें वह सब बातें याद आती हैं ?'

'याद नहीं आतीं ? कितने दिन कितनी रात सोचता रहा हूँ, फिर तुम आओगी। फिर एक बार नाव पर घूमने का तुम्हें शौक होगा। कितना डर, शायद तुम नहीं पहचान पाओगी। लेकिन लायली—।'

'बोलो !'

'तुम मालिक को थोड़ा तो प्यार करो। मालिक ने जिंदगी भर बड़ा दुःख उठाया है। तुम नहीं जानतीं। तुम उसे थोड़ा—'

'बजरंगी !'

लायली तीव्र भर्त्सना करती है, 'मालिक-मालिक ! उसकी बात तो मैं समझूँगी। तुम क्यों अपने अधिकार की सीमा पार कर रहे हो ?'

बजरंगी घायल निगाहों से देखता रहा। फिर धीरे-धीरे बोला, 'मुझे माफ करें।'

'जाना मत, रुको '

बजरंगी जाते-जाते पलटकर खड़ा हो गया। लायली बोलती है, 'तुम मुझे कुन्दन मत समझो। अच्छी तरह बात करने से ही तुम बहक जाते हो। नीचे जाओ। फिर, फिर कभी भी जब मैं और कुन्दन अकेले रहें, उस समय बिना बुलाये मत आना। नीचे से मेरी दासी को भेज दो। जाओ!'

बजरंगी के नीचे उतरने के पहले ही कुन्दन आ गया। साथ में एक और अनजान आदमी। कुन्दन के हाथ में एक हार था। कुन्दन पूछता है, 'देखो लायली तुम्हें यह पसन्द है?'

लायली बोलती है, 'गले में पहना दो।'

कुंदन ने लायली के गले में हार पहना दिया। बोला, 'कमल हीरा। बजरंगी, यह तोड़ा लो। इसे चार हजार रुपये देकर रसीद लिखा लो।'

'रुको बजरंगी। कुंदन, उसे कमल हीरे का ब्रेसलेट और बाली लाने को कह दो।'

वह आदमी आँखें फाड़े लायली को देख रहा था। वह सलाम करता है। कुंदन बोलता है, 'उसे रुपये देकर ऊपर आना।'

बजरंगी नीचे जाता है। वह आदमी रसीद देते-देते बोलता है, 'कुंदन मिश्र ने इतने दिनों तक जितना रुपया कमाया है, इस बार सब उड़ जायेगा।'

बजरंगी ने जवाब नहीं दिया। रुपये दिये, रसीद ली। इसके बाद ऊपर चला।

लायली कुंदन की गोद में सिर रखकर लेटी है और बातें कर रही है।

'कुंदन तुम्हारा बजरंगी बड़ा ही बेअदब है। सोहबत नहीं जानता।'

'लायली, उसे तुम सिखा देना।'

'बजरंगी, सुनो, तुम्हारी मालिकन क्या कह रही हैं।'

बजरंगी का मुँह गम्भीर। वह रसीद देता है।

'मैं तो चला। तुम देखना मालकिन को कोई तकलीफ न हो!'

'हाँ।'

कुंदन उससे बोलता है, 'सारंगी लाओ तो।'

बजरंगी हठात् बोल उठता है। कुंदन की तरफ देखकर बोलता है, 'मैं नहाने जा रहा हूँ, मालिक! नहाऊँगा, खाऊँगा। इसके बाद आऊँ क्या?'

'यह क्या? अभी तक तुमने खाया नहीं?'

'नहीं।'

'जाओ, जाओ।'

उतरते समय बजरंगी सुनता है, कुंदन कह रहा है, 'उसे लेकर तो बड़ी मुश्किल है, लायली। हठात् यदि गुस्सा आये तो तत्काल चला जायेगा।'

'वाह, सर पर इतना चढ़ा रखा है तो क्या होगा?'

'तब फिर मुझे दौड़ना पड़ता है, क्या करूँ, कहो!'

'उस पर विश्वास करके जो इतने रुपये देते हो, वह क्या बेईमानी नहीं कर सकता?'

'नहीं लायली, वह बेईमानी नहीं कर सकता।'

बजरंगी नीचे आया, नहा रहा है। महाराज खाना लेकर आया है, उसे भगा दिया। उसके बाद चुपचाप गाल पर हाथ रखे बैठा है।

काफी शाम हो गयी है। कुंदन नीचे उतर पड़ा। बोला, 'बजरंगी, मैं चला, तुम रहो।'

'हाँ मालिक!'

'देखना, एक बार भी घर छोड़कर बाहर मत जाना।'

'नहीं।'

'और सुनो लायली बड़ी ख्याली है। वह किस समय क्या बोलेगी, उसका बुरा नहीं मानना।'

'नहीं।'

'जब जो कहे, सुनना।'

'सुनूँगा।'

'उसे गुस्सा मत होने देना।'

'नहीं, तुम जाओ।'

पास आकर हठात् कुंदन की छाती पर बजरंगी ने हाथ रखा। बोला 'कवच क्यों पहने हो ?'

'हाफिज नियामत आया है, बजरंगी।'

'तब मैं चलूँगा। मैं तुम्हें पहुँचा कर आऊँगा।'

'नहीं, नहीं। मैंने आरबि को साथ ले लिया है।'

'तुम अपने से मारपीट करने मत जाना।'

'नहीं, तुम मेरी चिन्ता मत करो।' कुंदन रूखे गले से बोलता है। कुंदन उसकी तरफ देखता है। आँखें लाल हो उठती हैं। कुंदन गुस्सा भरी आवाज में गरज उठता है। दबी हुई गर्जना। उफन-उफन कर बोलता है, 'तुम वैसा मत करो। मैं नहीं सह सकता हूँ।'

बजरंगी हैरान होकर खड़ा रहता है। कुंदन बाहर निकल जाता है। बजरंगी सोच नहीं पाता कि रह-रहकर उसकी सहज उत्कंठा और उद्वेग कुंदन को ऐसा बेचैन क्यों कर देता है।

उन्नीस

कुंदन चला जाता है।

लायली के पास शिरीन आती है, साथ में निसार भी। बजरंगी नीचे बैठकर सुनता है, ऊपर गाना बजाना हो रहा है। नौकर सब ऊपर-नीचे दौड़ रहे हैं। बोतल लेकर, गिलास लेकर। बजरंगी कमरे

से निकल आता है। फुलवारी में एक चबूतरा। उसी पर बैठे-बैठे बाजा सुनता है। बीच में ही नौकर दौड़ा आता है, 'बजरंगी साब्! सारंगी लेकर चलिये।'

बजरंगी ऊपर जाता है।

सारंगी लिये सिर झुकाकर बैठता है।

निसार बोलता है, 'गाओ लायली।'

'बजरंगी, वही गाना बजाओ।'

बजरंगी पूछता है, 'कौन सा गाना जी?'

'वहीं, लगता नहीं है, जी मेरा।'

—बजरंगी बजाता है। लेकिन लायली गाना नहीं गाती। चुपचाप सुनती रहती है। कुछेक क्षण बाद बजरंगी मुँह उठाता है। उसकी आँखों में जैसे एक करुणा तैर रही है। उस समय लायली गाना शुरू करती है। इसके बाद भी, एक गाने के बाद दूसरा गाना। गाने, गाने में ही रात हो जाती है।

गाना समाप्त होने पर निसार एक अजीब सवाल कर बैठता है, 'लायली, गाना क्यों गाती हो? सुखी होती हो, इसीलिये शायद?'

अजीब प्रश्न! लायली बोलती है। लायली के मुँह पर हँसी, कोमल। आँखों में जैसे किसी की छाया।

'बोलो! अच्छा बजरंगी, बजाते क्यों हो?'

'अच्छा लगता है जी।'

'अच्छा लगता है, या खुद को थोड़ा भुलाना चाहते हो?'

'शायद दोनों ही।' बजरंगी शरमा कर हँसते हुए जवाब देता है।

'निसार, शायद कविता दोहराना चाहते हो?' लायली बोलती है।

'कविता? नहीं जी, नहीं! मैं थोड़ा अंगूर का रस चाहता हूँ। ज्यादा नहीं। यही तुम्हारी उँगलियों से तीन उँगली। शिरीन गुस्सा मत हो जाना।'

'गुस्सा होने से भी तुम क्या मानोगे?'

'मानूँ क्यों ? पूछता हूँ, मानूँ क्यों ?' निसार का गला भर्राया-सा । वह उँगली उठाकर बोलता है, 'मौज उड़ाना चाहती हो तो पिओ । यदि अपने आप को भूल जाना चाहती हो तो, जितनी खुशी हो, पिओ ।'

'निसार, पीना हो तो पिओ । लेकिन दया कर अपनी इतनी काबलियत मत दिखाओ ।' लायली गिलास आगे बढ़ा देती है ।

निसार हँसता है । बोलता है, 'हमेशा डाँटती रही हो लायली ! कविता-टविता तो पढ़ी नहीं । मैं क्यों कहूँगा, गालिब ने कहा है । मिर्ज़ा ग़ालिब ।'

'क्या कहा ?' शिरीन के गले में एक कठोरता । 'मिर्जा गालिब कह गये हैं, हफ्ता में तीन दिन पेट-दर्द से छटपटाओ, और बाकी चार दिन तक शराब पीओ ।'

'नहीं, नहीं । तुम्हारी तरह ऐसी गन्दी बात वह क्यों कर कहेंगे, बाबा ? सच में शिरीन, ऐसा गाना गाती हो, लेकिन बातचीत में जरा भी तुक नहीं । पढ़ना-लिखना नहीं सीखा । गाने में ही सब लगा दिया । गालिब ने कहा है, 'मय से गरज निसात है किस रुसा ये आह को, इक गुनाह बे-खुदी मुझे दिन-रात चाहिये ।'

एक ही साँस में निसार 'शेर' पढ़ देता है । बोलता है, 'बजरंगी, इन लोगों को पहचान लो । यह शिरीन है । खड़ी ठुमरी सुनना चाहते हो तो ऐसी गायिका दूसरी नहीं मिलेगी । लेकिन बात यदि सुनो तो लगेगा कि मुर्गी बेचती है ।'

लायली खिलखिलाकर हँसती है । निसार बोलता है, 'आप लायली हैं । लखनऊ के मशहूर कवियों और गायकों ने कविता और गाने का अमृत पिलाया है । यहाँ तक कि दिल्ली के बादशाह के पोते मिर्जा आबूबखर ने कुछ दिन लखनऊ में छिपकर बिताए तो वह भी आपका ही मुँह देख-देख कर । जफर और गालिब, मीर तकी मीर और नौसाक़, सब के शेर एक-एक कर सुनाये । लेकिन कुछ भी क्या

उन्नति हुई ? कुछ भी नहीं। बातें सुनो तो लगेगा कि आप मुर्गी पालती हैं।'

निसार ने उँगली मटकायी। 'आप मुर्गी पालती हैं, आप मुर्गी बेचती हैं। बजरंगी, औरतों के दिल की उन्नति-ठुन्नति होने की नहीं, भई।'

'तब औरतों से दूर रहने से ही हुआ, बाबा ?' शिरीन के गले में उग्रता।

'नहीं, नहीं, ऐसा करने से क्या बचूँगा ? खिलाकर, पहनाकर कितने यत्न से बचाकर रक्खी है, यह क्या मैं नहीं जानता हूँ ?' निसार डर कर बोलता है।

लायली हँसती है। 'बात ही बात। सुन्दर-सुन्दर बातें बेचकर ही तुम्हारी उम्र बीत जायेगी। तुम्हें खाने-पहनने या मौज करने में कोई असुविधा नहीं होगी। यह मैं कहे देती हूँ।'

'अच्छी बात याद दिलायी। भूख लगी है, लायली। मैं तो कुन्दन नहीं जो तुम्हारा मुँह देख-देखकर पेट भरूँगा ? बजरगी भी नहीं जो जरा हँसते ही गदगद होकर नशे में चूर रहूँगा।'

'यह क्या बोल रहे हो, निसार ?'

लायली तेज आवाज में बोलती है, 'शराब पी-पीकर अब जबान पर कोई लगाम नहीं ?'

निसार ढीठ हँसी से मुँह लाल करके बोलता है, 'देखता हूँ, देखता हूँ। आँखों की भाषा पढ़ना जानता हूँ, भई !'

'बजरंगी। नीचे जाओ।'

हठात् लायली बजरंगी को डाँट देती है, 'बैठे-बैठे बातें सुनना बहुत अच्छा लगता है. क्या ? जाओ, नीचे जाओ !'

बजरंगी किसी तरह सारंगी लेकर चला जाता है। जाते-जाते सुनता है कि निसार कहता है, 'तुम्हारा मुँह क्यों लाल है, भई ? झूठ बात यदि हो तो सुन कर फूः-फूः कर दो। लाल क्यों हो रही हो ?'

बजरंगी अपने कमरे में आकर खाट पर सारंगी फेंक देता है। उसका मुँह कान सब गरम। छिः छिः कितने शर्म की बात है। निश्चय ही निसार शराब पीकर ऐसी बातें करता है। शराब क्यों पीता है, खुद को यदि अपने वश में नहीं रख सकता? लायली उसे इतना बढ़ावा क्यों देती है?

फिर कई दिनों तक बजरंगी ऊपर नहीं गया।

दूर-दूर ही रहा। मालियों के पास खड़ा रहकर काम की देखभाल करता। फुलवारी के बीच पत्थर का एक छोटा सा हौज बना। उस पर पत्थर की परी मूर्ति। परी के हाथ की अंजलि से पानी गिर रहा है। हौज के पानी में बड़े-बड़े मेढक कूदते हैं। उसमें लाल-लाल मछलियाँ भी तैरती फिरती हैं। बजरंगी ने हौज के चारों ओर सूर्यमुखी फूल के बीज बो दिए।

लायली ने भी तो उसे नहीं बुलाया।

बीच-बीच में ऊपर से उतर कर जाती है। घूम-घूमकर फुलवारी देखती है। बजरंगी को देख कर भी जैसे नहीं देखती। माली से बोलती है, 'गुलाब तोडकर, गुच्छा बनाकर भिजवा देना।'

कभी कहती, 'रास्ता कंकड़ डालकर क्यों बनाया है? घास रहती तो ठीक होता। मैं किस तरह चलूँगी? पैरों में लगेगा नहीं?'

लायली दासी का साथ लेकर, घूम-घूम कर सब देखती रही है। चिड़ियों के कमरे के पास खड़ी होकर चिड़ियों को दाना खिलाती है। नौकरों से कहती है, 'चिड़ियों की देख-भाल करना। सभी विलायती चिड़ियाँ हैं।'

'बजरंगी साब् उन सबों की देख-भाल करते हैं।'

लायली के कानों में जैसे बात ही नहीं गई। वह बोली, 'मोर इस तरह उदास क्यों है रे?'

जवाब के लिये इन्तजार भी नहीं किया। दासी से बोली, 'गलीचा

लाना तो । जरा चबूतरे पर बैठूँ ।'

'मालकिन, चबूतरा तो गन्दा है ।'

'गंदा सही । तुम लाओ तो !'

इसके बाद विना किसी तरफ देखे ही जैसे बोली, 'चबूतरा इतना गंदा क्यों है ? साफ सुथरा नहीं रख सकते ?' कहकर ही वह घास पर चलती हुई घर चली गई । दासी गलीचा लेकर भागी-भागी आई और लायली को न देखकर हताश सी होकर कंधा हिलाती है ।

लायली ने फिर बजरंगी को बुलाया है ।

दोपहर में हवा गर्म । घास से जैसे भाप निकल रही है । आम की मंजरियों की गंध, नये पत्ते और घास की गंध । मधुमक्खियाँ आम की मंजरियों पर दल बाँधकर उड़ती हैं ।

दासी उतर आयी । डरे कंठ से बोली, 'बजरंगी बाबू, मालकिन बुला रही हैं ।'

लायली के कमरे के दरवाजे पर खस की टट्टी लटक रही है । बाहर बैठकर पंखा-कुली पंखा खींच रहा है । एक दासी झपकियाँ ले रही है ।

'आऊँ ?'

'कौन बजरंगी ? आओ, अंदर आओ ।'

कमरे में घुसते ही बजरंगी के पाँव थम गये ।

खस की टट्टी झूल रही है । उसकी सुगंध और कमरे में मटमैली रोशनी । लायली ठंडे फर्श पर करवट लिये लेटी है । एक पतली साड़ी, एक पतला कुर्ता । पूरे शरीर पर पानी छिड़क रखा है । पास में एक गुलाबपाश भी ।

लेकिन यह कैसी लिबास, यह कैसा साज-सिंगार ! तकिये पर गीले केश ! पान की लाली से दोनों होंठ रंगे हुए । कपाल और गाल पर बूँद-बूँद पानी । जेवर सब पास बिखरे पड़े हैं और सफेद रेशमी साड़ी की तरह शरीर का कोमल रंग जैसे साड़ी से फूटा पड़ रहा है ।

हैरान होकर लायली ने देखा !

इसके बाद बोली, 'बैठो न । तुम्हारे साथ तो बहुत ही आइये, बैठिये, कहना पड़ता है । तुमने हमारे यहाँ के लखनौआ लड़कों को भी मात कर दिया ।'

'क्यों बुलाया है ?'

'आप, हजूर मत कहा करो, बजरंगी, हठात् बिगड़ उठूँगी । जानते तो हो ही कि मुझे गुस्सा कितनी जल्द और बिना वजह ही आता है ।'

बजरंगी बैठ जाता है ।

हठात् लायली हैरान होकर फिर देखती है । मुस्कुराकर बोलती है, 'जानते हो, आज सुबह से कुछ भी नहीं खाया है । नींबू का शर्बत और बर्फ पीती रही हूँ, और पान चबाती रही हूँ । बड़ा ही मीठा गुलाबी पान । मुँह में रखने भर से गल जाता है । क्यों, खाओगे एक ?'

बजरंगी दीवाल की आलमारी की तरफ देखता है ।

लायली झटपट उठ बैठती है । आँचल सम्भालती-सम्भालती बोलती है, 'नहीं-नहीं, शरबत के सिवा और कुछ भी नहीं खाया पिया है, यकीन करो ।'

बजरंगी लम्बी साँस छोड़ता है । गुस्साने से कोई फायदा नहीं । अभी लायली निहायत मासूम बच्ची सी लगती है । वह दूसरी तरफ देखता है । बोलता है, 'फिर भी अच्छा है । आजकल तो········'

लायली उठ पड़ी । आँचल फर्श पर लोटाती हुई पूरा कमरा वह एक बार घूम जाती है । गुनगुना कर गाते-गाते गाना बन्द करके बोलती है, 'उम्रे-दरा से माँग लाये थे चार दिन, दो आरजू में कट गये, दो इंतजार में ।' सच में बजरंगी, जिंदगी में बहुत आदमी देखे, लेकिन तुम जैसा अजीब आदमी नहीं देखा ।'

'मुझे क्यों बुलाया है ?'

'इस तरह सख्त होकर, बैठकर, कड़ी-कड़ी बातें क्यों करते हो ?'

'क्या करूँगा ?'

'एक बात कहूँगी, इसलिये बुलवाया है ।'

'क्या ?'

'मैं तुम्हारी मालकिन हूँ न ?'

'जी ।'

'मेरी बात सुनना तुम्हारे लिये उचित है ?'

'जी ।'

'मेरी इच्छा है कि तुम मुझे आप कहना छोड़ दो । और मेरे एक और नाम से मुझे पुकारो ।'

'लेकिन........'

'नहीं, नहीं, सब कुछ सुनो । मेरी और भी इच्छा है, तुम मुझे एकान्त में 'तुम' कहा करो ।'

बजरंगी हँस पड़ा ।

'तुम हँस रहे हो ?'

'बहुत अच्छा, तुम ही कहता हूँ । मुन्नी कहकर भी मानो पुकारता हूँ । लेकिन इससे क्या होगा ?'

'इसके माने ?'

'यह तो हमेशा सम्भव नहीं होगा । बाईस घंटों तक हम दोनों दूर दूर रहते हैं । लुक-छिप कर दो घंटे यदि तुम ही कहा करूँ तो इससे क्या लाभ है ? चोरी करके काम करने का एक गुप्त मजा मिलेगा । लेकिन मुन्नी जो सच नहीं है, उसे सच बनाकर खेल करने से क्या आनंद मिलता है ?'

'समझा कर कहो ।'

हम दोनों के बीच की दूरी तो इससे कम नहीं होती है । तुम और मैं ।.......बीच में जो बहुत बड़ी खाई है । इसके सिवा........।'

'क्या कह रहे हो ?'

बजरँगी सरल आँखों से देखता है। शान्त निगाह। बोलता है, 'जो मुझे मिलने की नहीं है, उसके लिये मुझमें कोई लालच भी नहीं। तुम मेरी मालकिन हो। तुम्हें मेरे मालिक प्यार करते हैं। उसकी आँखों की ओट में तुम से दो-चार हल्की बातें करने की इच्छा मेरे मन में नहीं होती।'

लायली और भी पास आ खड़ी होती है। कहती है, 'खुद को इतना छोटा क्यों समझते हो? सिर्फ मालिक, मालिक! तुम्हारे मालिक ने क्या मुझे खरीद लिया है?'

'आदमी को क्या कोई रुपये देकर ही खरीद सकता है? सुना है प्यार से, स्नेह और ममता से खरीदा जाता है। मुन्नी, मालिक तुम्हें बहुत प्यार करते हैं।'

'तुम मुझे इस नाम से नहीं पुकारो। तुम सब कुछ भूल गये हो। तुम्हें कुछ भी याद नहीं आता।'

हठात् लायली चीख उठी। उँगली उठाकर बोली, 'जाओ, तुम चले जाओ। किसने तुम्हें इतनी देर तक रुकने को कहा है?'

बजरंगी थोड़ा हँसा। बोला, 'जा रहा हूँ।'

लायली ने जैसे उसकी बात ही नहीं सुनी। लायली का गला क्रमशः तीखा होता गया। 'मेरा कपड़ा-लता तितर-बितर है, मैं अकेली सोयी हुई हूँ। तुम जाओ तो। ओफ, बरामदे में क्या कोई नहीं है?'

बजरंगी धम से दरवाजा ठेलकर बाहर निकल पड़ा। बोला, 'चिल्लाओ मत, मैं जा रहा हूँ।'

बजरंगी चला गया। अपने कमरे में बैठकर अपने आपको शांत करने की कोशिश की। बार-बार लायली का चेहरा मन में तैर उठा। उसे जैसे चंचल बना दिया, विह्वल बना दिया। उससे लायली भला क्या चाहती है?

'मुन्नी तुम मुझसे क्या चाहती हो?'

उस दिन रात में बजरंगी ने प्रश्न किया। उस दिन रात में उसके

पास लायली आयी। जहाँ चबूतरे पर बैठकर बजरंगी अपने मन से सारंगी बजाता है, वहाँ। सामने आ खड़ी हुई।

'तुम ? बजरंगी तुम्हारा क्या दिमाग खराब हो गया है ?'

'तब फिर मुझे पास क्यों बुलाती हो मुन्नी, क्यों कष्ट देती हो ?'

'मेरे पास बुलाने पर तुम्हें कष्ट होता है ?'

'मुन्नी, मैं तुम्हारा दास हूँ। मालिक की सेवा करता हूँ, तुम्हारी सेवा करने भर से ही मैं प्रसन्न हूँ। तुम्हारे ऐसे व्यवहार से मुझे कष्ट होता है।'

'बजरंगी, मैं तुम्हें कष्ट देती हूँ ?'

लायली हँसती है। कहती है, 'मैं फुलवारी में घूमती-फिरती हूँ, इच्छा होने पर मैं पास आती हूँ। इससे तुम्हारा क्या ? अच्छा मैं जाती हूँ।' आँचल लोटाती-लोटाती लायली चली जाती है।

कुछेक क्षणों तक बजरंगी हैरान रहता है। इसके बाद सारंगी उठाकर फिर बजाने लगता है। कितनी देर तक बजाता है, इसका ख्याल नहीं रहता। बहुत देर बाद वह सिर उठाकर देखता है, लायली खड़ी है।

'बजरंगी, तुम बहुत अच्छा बजाते हो। सुनते-सुनते फिर उतर आयी।'

लंबी साँस छोड़कर बजरंगी सारंगी नीचे रख देता है। इसके बाद अपने कमरे में चला जाता है।

दूसरे दिन सुबह होते ही नौकर आकर उसे बुलाता है। कहता है, 'दोनों ही मुर्गों को मालकिन लड़ायेंगी। तुम्हें बुला रही हैं।'

पूरी सुबह लायली मुर्गों की लड़ाई लेकर मस्त रही, व्यस्त रही।

सुबह मुर्गों की लड़ाई हुई। शाम को लायली ने कबूतरों को उड़ा दिया। लायली अस्थिर एवं चंचल है। लायली का हाथ काँप रहा है, मुँह लाल है। देखकर बजरंगी कहता है, 'नशा-वशा चाहिये तुम्हें। नहीं तो कुछ भी अच्छा नहीं लगता।'

'नशा ? कौन नशा ?' लायली जैसे उसकी बातें नहीं समझ पाती।

'नशा भी क्या एक किस्म का होता है, मुन्नी ? एक के बाद एक खेल को लेकर पागल हो जाना यह भी एक तरह का नशा ही तो है।'

'क्या कहना चाहते हो, बोलो ? पहेलियाँ मत बुझाओ।'

'असल में तुम अकेली नहीं रह सकती हो। इसलिये कभी शिरीन की खोज करती हो, कभी मुर्गे लड़ाती हो। छिः।'

'तुमने मुझे छिः कहा ?'

'कहूँगा नहीं ? अपनी तरफ ध्यान से जरा देखो तो ?'

बजरंगी फिर बोला,

'आदमी एक दिन छोटा रहता है, एक दिन बड़ा होता है। बचपन का स्वभाव तुम्हारी तरह पीछे कौन छोड़ आता है, मुन्नी ? बचपन में मुझे उन लोगों ने मारा था, यह देखकर तुम रोयी थीं ! आज तुम्हारे मन में दया नहीं, माया नहीं, तुम जैसे क्या से क्या बन गयी हो।'

लायली मुँह फेर लेती है। छत की चहारदीवारी पर हाथ रखकर देखती रहती है। बजरंगी नीचे उतर आता है।

उस दिन रात को फिर उसकी किवाड़ पर धक्का पड़ता है। 'सारंगी लेकर ऊपर चलिये बजरंगी साव्।'

सारंगी लेकर बजरंगी ऊपर चला जाता है। धम-धम कर पाँव पटकता। छत पर जाकर चिल्लाकर बोलता है, 'फिर कौन-सा नया ख्याल तुम्हारे सिर पर सवार हुआ है ? मुझे क्या तुम जरा भी शान्ति से नहीं रहने दोगी ?'

इसके बाद हठात् विस्मय से बजरंगी का गला धीमा पड़ जाता है। 'यह क्या मुन्नी, तुम रो रही हो ? क्यों ?'

लायली उसका हाथ पकड़ लेती है। कहती है, 'बजरंगी मेरे दिल में शान्ति नहीं। तुम मुझे माफ करो।'

बजरंगी बैठ जाता है। 'क्या हुआ मुन्नी ?'

'बजरंगी, मैं सचमुच में जैसे बदल गयी हूँ। इन्सान को कष्ट देकर मुझे आनन्द होता है। क्यों इतना बदल गयी, नहीं जानती।'

'मुन्नी, तुम्हारे मन में किस बात का इतना कष्ट है, मुझे बताओ।'

'जानते हो, मैं सब कुछ समझती हूँ। कुंदन मुझे कितना प्यार करता है, वह समझती हूँ। लेकिन मेरे मुँह की हँसी देखने के लिये उसकी व्याकुलता देखकर मैं जैसे क्या न हो जाती हूँ। इतनी कोशिश कर के मन को दबाती हूँ फिर भी मन सख्त हो उठता है।'

'तब ऐसा क्यों करती हो?'

'मेरी बड़ी इच्छा होती है कि कोई इन्सान मुझे प्यार करे। पुरुष पास आते हैं, हँसी मजाक करते हैं, मुझे बहुत अच्छा लगता है।'

'क्यों?' बजरंगी हैरान होता है।

'नहीं जानती। शायद मुहब्बत में मुझे विश्वास नहीं है, बजरंगी। इन्सान, इन्सान से प्यार कर सकता है, शायद मैं उस पर विश्वास ही नहीं करती।'

'तुम बड़ी अभागी हो, मुन्नी।'

'बजरंगी, तुम मुहब्बत में विश्वास करते हो?'

बजरंगी कंधा तिरछा कर के देखता रहता है। इसके बाद थोड़ा हँसकर कहता है, 'क्या अजीब सवाल कर बैठी हो? क्या जवाब दूँ, कहो तो?'

'तुम क्या कुन्दन को प्यार करते हो?'

'बहुत।'

'सच में प्यार करते हो बजरंगी?'

'उनके लिये दिल का रोना, उसके दुःख को दुःख समझना, उसके सुख को अपना सुख मानना, ये सब यदि प्यार के लक्षण हैं, तब मैं मालिक को प्यार करता हूँ।'

'प्यार क्या एक तरह का होता है बजरंगी?'

'यह क्या बोल रही हो?'

'तुम्हारे मालिक मुझसे जैसा प्यार करते हैं, वैसा प्यार तुमने किसी से किया है ?'

'नहीं। अभी प्यार करूँगा ही क्यों ?'

'कब प्यार करोगे ?'

'मालिक ने कहा है कि मेरी शादी करा देगा। शादी करने के बाद पत्नी को प्यार करूँगा।'

लायली हैरान होकर देखती रहती है। आँखों के आँसू सूख गये हैं। अभी कौतूहल से उसकी आँखें चमक रही हैं। गाल पर उँगली रखकर वह बोलती है, 'देखो, हमारे बजरंगी की बुद्धि तो जरा देखो। देखने पर लगता है कि जैसे किसी तरफ ख्याल ही न हो, लेकिन बुद्धि तो बड़ी तेज है। इतना सब सीख रखा है ? जिससे शादी करोगे, उसी से प्यार करोगे ! ठहरो, कुन्दन से कहती हूँ।'

बजरंगी उसकी तरफ देखता रहता है। लायली ने जैसे एक बहुत बड़ा छिपा हुआ रहस्य पकड़ लिया है।

'कुन्दन तो जानता है कि बजरंगी उसके पैरों पर दिलोजान देकर बैठा है। वह तो नहीं जानता कि असली प्यार बजरंगी ने अपनी पत्नी के लिए बचा रखा है। धन्य हो, बजरंगी, जिसे अपनी आँखो से देखा भी नहीं, उसके लिये इतना आकर्षण ?'

'जिससे विवाह करूँगा, उसे प्यार करना नहीं पड़ेगा ?'

'बीबी क्या देख रहा है ?'

'नहीं, नहीं। तुम भी कैसी हो ? मालिक यदि जोर-जबर्दस्ती से शादी करा देंगे तभी शादी होगी।'

'नहीं तो क्या शादी नहीं होगी ? तुम तो अजीब किस्म के आदमी हो बजरंगी ! कुंदन यदि शादी नहीं करावे तो क्या तुम्हारी शादी ही नहीं होगी ?'

'किस तरह होगी ? मैं यदि जाकर कहूँ, भाई, आप लोग अपनी लड़की से मेरी शादी करें तो इससे क्या कोई शादी कर देगा ? वे सब

खोजबीन करेंगे, पूछेंगे, तुम किस घर के लड़के हो ? उस समय मुझे चुप रहना पड़ेगा। मैं यदि उन लोगों से कहूँ कि मैं बहुत ही अच्छे घर का लड़का हूँ। नाव के मल्लाह सब मुझे उठा लाये थे, इस बात पर क्या ये सब विश्वास करेंगे ? लेकिन, मालिक यदि खड़े होकर कहेंगे, बजरंगी सचमुच में बड़े घर का लड़का है, तो ये सब विश्वास करेंगे ही।'

'लेकिन बजरंगी तुम्हारी शादी तो जल्द नहीं हो रही है। मुझे तुम्हारे मालिक की इन दिनों हमेशा जरूरत है। तुम्हारे लिये लड़की खोजने वह कब जायेगा ? लेकिन हाँ, यदि तुम मुझे प्रसन्न रखो तो मैं तुम्हारे लिये देख-सुनकर एक लड़की खोज दूँगी।'

'तुम मेरे लिये लड़की खोजने जाओगी ?'

'हँसते हो ? देखभाल कर लाऊँगी।'

'लड़की देखने जाने पर, सभी तुम्हें ही तो आँखें फाड़-फाड़ कर देखेंगे।'

'क्यों ?'

'वे सब गृहस्थ घर की लड़कियाँ हैं। तुम लोगों का नाम भर सुनती हैं, आँखों से देख तो नहीं पातीं।'

'तो !' कुछेक क्षण लायली जाने क्या सोचती रही। इसके बाद बोली, 'शादी करने के बाद ही प्यार किया जाता है ?'

'सभी तो यही कहते हैं।'

'क्या पता, मैं तो समझ नहीं पाती। मेरी माँ भी क्या अब्बा को बहुत प्यार करती थीं ? लेकिन अब्बा के मरने के बाद ईश्वरलाल को कम प्यार तो नहीं किया।'

'उन लोगों को देख-देख कर मुझे बड़ा ही अच्छा लगता था। जानती हो, अभी भी याद आती है, वे दोनों किस तरह पास-पास नदी के किनारे टहला करते थे। तुम्हारी माँ बड़ी सुन्दरी थीं, है न !'

'हाँ, सुना है कि मेरे अब्बा भी बड़े अच्छे थे।'

'ईश्वरलाल ने तुम्हारी माँ से शादी क्यों नहीं की थी ?'

हठात् लायली हँस पड़ती है।

उसकी माँ तो कब की मर चुकी है। उन्हें लेकर इतना हँसी-मजाक क्यों ? बजरंगी सोच भी नहीं पाता। लायली को पहचानना बड़ा कठिन है। मरे आदमी को लेकर भी क्या हँसी-मजाक करना चाहिये ? यह बात अभी उसे समझा ही कौन सकता है। उसकी जैसे सब बातें ही अजीबोगरीब हैं। सुबह ही बिना किसी वजह के लायली ने दोनों मुर्गियों को लड़ने के लिये उतारा। बाग में कबूतरों को उड़ा दिया। कुछ देर पहले आँखों में आँसू थे, गले में सकरुण दीनता।

अभी हँस रही है। माँ की बात करते ही जैसे उसके गले में ताने की तेज धारा चकचक कर उठी है।

'ईश्वरलाल भला मेरी माँ से शादी ही क्यों करते बजरंगी ? पन्द्रह वर्षों से वे दोनों विश्वास करते थे कि उन दोनों जैसा संसार में किसी मर्द व औरत ने प्यार नहीं किया है। मैं भी वैसा ही सोचा करती। हठात् एक दिन देखा प्यार नाम की कोई चीज भी नहीं थी। स्वच्छन्द रूप से ईश्वरलाल ने एक और के पास जाकर कहा, तुम्हें प्यार करता हूँ। तुम केवल एक बार मेरी तरफ देखो।'

'वह लड़की कौन थी ?'

'उसी दिन मैंने समझ लिया कि प्यार मुहब्बत आदि बातों का कोई अर्थ नहीं। उसी दिन से मेरे दिल से नफरत पैदा हो गयी। मैं और किसी को प्यार नहीं कर सकूँगी। सब कुछ यदि ऐसा अस्थायी हो—आज जो सच है, कल जब झूठ बन जाता है, तब फिर उस ज्वाला में इच्छा से भला क्यों जलूँ ?'

'बहुत अच्छा ! मुहब्बत की आग में न जलो न सही। फिर भी तुममें इतनी जलन क्यों है ? यह किस चीज की जलन है ?'

यह क्या ? लायली जैसे चमक उठी। बजरंगी ने उसके मुँह की तरफ नहीं देखा। अपने आप ही बोलता चला गया, 'तुम इतने धन

और आराम में भी सुख-शांति नहीं पाती हो। आदमी का दिलोजान से प्यार देख कर भी तुम भागती हो बचती हो। तुम्हारे मुँह पर केवल अजीब हँसी रहती है। वही हँसी देख कर तो डर लगता है, लायली।'

'बजरंगी तुम बहुत ही बढ़-चढ़ कर बातें करते हो।'

'सब कुछ समझता हूँ, सब समझ सकता हूँ।'

'क्या समझते हो ?' लायली को जैसे डर लग गया।

'असल में तुम्हारा यह गुस्सा, यह खामखयाली, बात-बात में बिगड़ उठना, यह सब कुछ भी नहीं है। समझने में भूल नहीं हुई है।'

'इसीलिये कुन्दन तुम्हें पंडित जी, पंडा महाराज, गुरुदेव आदि कहता है। तुम भई, बड़ी-बड़ी बातें करते हो।'

'असल में तुम बहुत कमजोर हो। इसलिये दूसरों पर निष्टुरता दिखाती हो।'

अचानक बजरंगी हँसता है। कहता है, 'जानती हो, मैं जब छोटा था, वे सब मुझे पीटते थे। वे सब काम पर चले जाते थे। उस समय मैं नदी किनारे औंधी नावों पर चढ़कर बैठ जाया करता था। गाछ की डाल तोड़कर उन नावों को अपनी इच्छानुसार पीटा करता करता था। लगता है, तुम्हारा बचपना अभी भी नहीं गया है।'

'बजरंगी, एक समय आता है, तुम बड़े ही ज्ञानी-गुणी हो। एक समय आता है कि तुम बिलकुल बच्चे हो।'

'मेरे बारे में मत सोचो, मुन्नी।'

'नहीं सोचूँ ?'

'नहीं।'

'क्यों ?'

'मेरी एक बात मानोगी ?'

'कौन सी बात ? कह कर देखो।'

'जब कभी तुम्हारा मन खराब हो, तुम इसी तरह मुझसे बातें करोगी। बातें करते-करते मन अच्छा हो जायेगा।'

'किस तरह समझे कि मेरा मन अच्छा हो गया है ?'

'तुम्हें देखकर। खुद को तो तुम देख नहीं पाती हो। आईना होता तो देखती कि कितनी सुन्दर लगती हो।'

'बजरंगी, उँगली काटो।'

'क्यों ? क्या हुआ ?'

'रात में, चाँदनी में बैठकर आईना नहीं देखना चाहिये। आईना की बात भी नहीं करनी चाहिये।'

'क्यों ?'

'इससे अच्छा नहीं होता, अच्छा नहीं होता।'

'तुम भी यह सब मानती हो क्या ?'

'कुछ-कुछ तो मानती ही हूँ। मेरी बूढ़ी नानी क्या दिन, क्या रात, मुझे यह सब सिखाती रहती थीं। यह नहीं करना, नहीं करना। अभी छत पर नहीं जाना। भरी दोपहर में अकेली फुलवारी में नहीं घूमना।'

'तुम्हारी तो बात ही और है, कितने आदमियों के बीच रहकर आदमी बनी हो।'

'हाँ, तुम तो मेरा सुख ही देखते हो। सुख जैसे तह पर तह जमा हुआ हो। मैं केवल इच्छा से कष्ट पाती हूँ। लो, सारंगी उठाओ। गा सकूँगी या नहीं, कह नहीं सकती। इतनी देर से छत पर हूँ, गला जैसे भारी हो गया है। लो, बजाओ तो।'

बजरंगी सारंगी उठाता है। लायली गाना शुरू करती है। लगता नहीं है जी मेरा, लगता नहीं है जी मेरा—बार-बार यही पंक्ति दुहरा-दुहरा कर गाती है !

फिर गाना खत्म हो जाता है। दूर कहीं टन-टन करके घन्टे ने बताया, रात के तीन बज गये। झटपट बजरंगी सारंगी को खोल पहराने लगा। बड़ी रात हो गयी है। बातचीत में इतनी रात बीत जाना ठीक नहीं हुआ। नीचे लायली के कमरे की घड़ी का शब्द सुनाई पड़ता है। सुन्दर, मीठी आवाज। रिमझिम, टुंग-टांग। घड़ी

जैसे मजाक करके बताती है। रात है नहीं, रात बीत गई है। साथ-साथ डेवढ़ी की बड़ी घड़ी से गम्भीर आवाज़ भी निकलती है।

'बजरंगी !'

बजरंगी सारंगी लेकर जाते-जाते पलटकर खड़ा हो जाता है। मायूस आवाज में कहता है, 'लायली अब जाने दो।'

'मत जाओ, ठहरो।'

'मालिक जान लेंगे तो मुझ पर नाराज होंगे, लायली ! तुम्हें तो कुछ नहीं कहेंगे।'

'बजरंगी मेरी बात सुनो। थोड़ा और बैठो। अब थोड़ी देर बाद ही भोर की अजान सुनोगे।'

'बचपना मत करो मुन्नी।' बजरंगी ने अच्छी तरह लायली को डाँटा। लायली बोली, 'कुछ भी तो नहीं चाहती हूँ। केवल बैठाकर ही तो रखना चाहती हूँ।'

बजरंगी ने कहा, 'यह नहीं हो सकता। इतनी देर तक तुमसे बातें की, तुम्हारे साथ बैठा रहा, इतने भर से ही मेरा मन भर गया है। इसके अलावा हम-तुम को छोड़कर भी घर में दूसरे सब आदमी हैं। उन लोगों की बात भूल मत जाना।'

'इतना कहती हूँ, बैठो न बाबा।'

'नहीं !' बजरंगी उसे डाँट देता है।

'क्यों ?'

बजरंगी थोड़ा झुककर उससे कहता है, 'मुँह उठाओ, मेरी तरफ देखो। सुनो, यह रात सच नहीं, क्यों नहीं समझ पाती हो ?'

'सच नहीं ?' लायली और भी हैरान।

बजरंगी आहिस्ते से घुटनों के बल बैठ जाता है। लायली की तरफ देखकर बोलता है, 'तुम्हारा मन खराब था मुन्नी, इसलिये मुझे पास आने दिया था तुमने। इसीलिये पास भी आया। तुमने बात की, मैंने सुनी। तुमने गाना गाया, साथ में मैंने बजाया। बस बीत गयी

रात। तुम्हें भी अच्छा लगा, मुझे भी। इस अच्छा लगने को सुबह तक क्यों खींचे ले जाना चाहती हो ?'

'बजरंगी तुम्हारी बात मैं समझ नहीं पाती। क्यों ? जानते हो ? मैंने बुलाया और तुम आए। क्यों आए ?'

'मुन्नी, यह तुम्हें बताने से लाभ ही क्या ?'

'बताओ. बताकर तो देखो।'

'मुन्नी, मैं जानता हूँ, मुझसे तुम्हारी थोड़ी भी बेइज्जती नहीं होगी। इसलिये निडर होकर चला आया हूँ। तुम्हारे दिल में दुःख है, जानता हूँ, बातें करने से तुम हल्कापन महसूस करोगी। इसलिये बिना किसी सोच विचार के पास आया हूँ।'

'इससे क्या हुआ ? क्या कहना चाहते हो ?' लायली हठात् चीख उठी।

'कहना चाहता हूँ कि तुम्हारे और मेरे इस अच्छा लगने में, इस पास आने में, इसमें कोई पाप नहीं है। लेकिन यदि फिर हम लोग इस समय को लौटाकर पाने की कोशिश करें तो भयानक गलती और दोष करेंगे।'

'दोष ? तुम्हारे साथ बात करने की इच्छा से दोष ?'

'नहीं मुन्नी, बातें करने में क्या दोष ? बातें तो तुम दिन भर करती ही हो। ऊपर से बुलाकर इस उस चीज की फरमाइश नहीं करती हो ?'

'तब फिर क्या ? वह कौन-सा दोष है ?'

'दोष ? किसे पता, हो सकता है दोष नहीं भी हो, संभव है, लेकिन हम लोग क्या केवल बातें करेंगे ? हम लोग इस अच्छा लगने को घूम-फिरकर जोर से पकड़ रखने की कोशिश करेंगे। मेरे नहीं चाहने से भी तुम तो जरूर चाहोगी मुन्नी।'

'तुम्हारा साथ पाने के लिये शायद मैं इतनी कातर हूँ, बजरंगी ?'

'नहीं, नहीं। किसी समय मैं था मल्लाहों का नौकर। बाद में कैसी

नसीब है, देखो, फिर तुम्हारी सेवा करने आया हूँ। मेरा साथ पाने के लिये भला तुम क्यों कातर रहोगी ? यह नहीं। लेकिन मुझे डर लगता है, तुम्हारे लिये डर लगता है।'

'क्यों ?'

'तुम जो बिलकुल जैसी की तैसी हो। बच्चे की तरह असहिष्णु छोटी बच्ची की तरह हँस-हँस कर बहुत बड़ा अनिष्ट भी तो कर सकती हो। इसीलिये डर लगता है। इस रात जो कुछ अच्छा लगा है, यह छत, यह चाँदनी, यही हम तुम, साधारण रूप से बातें कर रहे हैं, शायद ऐसा ही फिर बार-बार चाहोगी, इसलिये डरता हूँ। जानती हूँ मुन्नी, अच्छा लगना, इस छत, इस चाँदनी, वही हम तुम, में नहीं है। इन सबों से अलग, इनके ऊपर और कहीं दूसरी ही जगह है। डर लगता है, तुम वह सब नहीं समझ सकोगी।'

लायली और बजरंगी। आमने-सामने खड़े हैं। लायली महसूस करती है कि बजरंगी अभी भी बहुत दूर है। सम्भवतः इतनी देर तक उन लोगों ने केवल बातचीत ही की है। बातें की हैं, गाना गाया है, हँसे और रोये हैं, सम्भवतः कुछेक क्षण के लिये दोनों पास-पास आये भी थे। लेकिन उसके बाद पता नहीं कब बिना जाने सुने, बड़ी होशियारी से फिर दूर चले गये हैं।

बजरंगी कहता है, 'तुम्हारी ही बात रही मुन्नी। लो सुनो, भोर की अजान। बातें करने में ही रात बीत गयी।'

'हाँ।'

सुबह का आसमान मटमैला और फीका। ठंडी हवा में मस्जिद की अजान मँज-मँज कर आती है। जहाज का 'भों' और भी दूर, कालीघाट की तरफ से एक साथ बहुत से घन्टों की आवाजें तैरती हुई आ रही हैं। मिस्त्री पानी दे रहा है। जाने कौन सब बड़े-बड़े घोड़ों को दौड़ाने ले जा रहे हैं। घोड़ों के खुरों का खप-खप शब्द। लायली पलटकर देखती है।

बजरंगी नहीं है। तकिया, गलीचा, बेला के फूल, रात बीतते ही जैसे लाल हो गये हैं। लायली हठात् अपने आपको बड़ी थकी हुई, अकेली समझती है। सोती हुई दो दासियाँ, कमरे की दीवार पर उठँगी हुई हैं। उन लोगों को लायली नहीं जगाती। उन लोगों के पास से झटपट उतर आती है। खुद को उसने जैसे बहुत ही सस्ती बना लिया था, अभी शर्म आ रही है।

•

फिर दो दिनों तक लायली को नीचे उतरते नहीं देखा गया। बजरंगी भी अपने कामों में ही व्यस्त रहा।

दो दिन बाद ग्यारह बजे जब एक बड़ी पालकी धम-धमकर घुस पड़ी और धूल भरे हुए नागरा के साथ हँसते हुए कुंदन उस पलकी से उतर पड़ा, उस समय कुंदन अपनी अगवानी का तरीका देखकर प्रसन्न और हैरान हो गया। उसे देखकर बजरंगी लगभग जोरों से रो पड़ा।

'तुम आये हो, अब मुझे कोई चिन्ता नहीं!' बजरंगी की बातें सुनकर बिना पलक गिराये ही लाल आँखों से कुन्दन देखता रहा और बिना कुछ बोले ही पतली जंजीर में बँधा एक नेवला उसके हाथ में पकड़ा दिया।

ऊपर चढ़ते ही लायली उसकी छाती पर प्रायः गिर पड़ी। गुलरूख और जावेदी मुँह में कपड़ा ठूँस कर हँसते-हँसते भाग खड़ी हुईं। लायली की आँखें छलछलायी, मुँह पर हँसी।

'आये हो? तुम आये हो?' लायली, कुन्दन का हाथ पकड़कर झूलने लगी। उसकी तरफ कुछेक क्षण देखकर कुन्दन नशे से भरे गले से बड़बड़ा कर बोला, 'इन लोगों को हुआ क्या है?'

लायली बोली, 'कहाँ, मेरे लिये क्या लाये हो?'

'क्यों, अपने आपको?' बड़ी अच्छी रसिकता की है, यह सोच कर कुन्दन आप ही आप खूब हँसा। उसके बाद वह बेलवेट का एक

डब्बा बाहर निकालता है, 'देखो तो पसन्द आती है या नहीं।'

'यह क्या, सोने की एक पतली सिकरी, क्यों ?'

'क्यों, फिर क्या नेवले की गर्दन में पहनाऊँगा।'

'नेवला कहाँ है ?'

'बजरंगी को दे आया हूँ। बुलाऊँ ?'

'नहीं नहीं।' लायली अस्त-व्यस्त हो उठी। बोली, 'बाद में देखूँगी। सुनो कुन्दन, हमारी तुम्हारी बातों के बीच वह जब-तब आ टपकता है, यह मुझे जरा भी पसन्द नहीं है।'

बीस

कुछ दिनों तक लायली ने कुन्दन की ओर ध्यान लगाया।

कुन्दन जो कुछ कहता, वह सुनती। कुन्दन के साथ घूमने-फिरने जाती। शिरीन से भी लायली मुलाकात नहीं करती। कुन्दन जब घर जाने लगता, उस समय लायली बोलती, 'मुहब्बत जैसी बड़ी चीज के लिये बहुतेरी छोटी-छोटी चीजों को छोड़ना पड़ता है, कुंदन।'

'क्या छोड़ूँगा, बोलो ?'

'घर क्या जाना ही पड़ेगा ? खाने-पीने की बात और विचार क्या नहीं छोड़ सकते ? इस तरह करने से भी क्या कभी चल सकता है ? असल में तुम मुझसे नफरत करते हो। बाईजी मुसलमानिन, सोचकर।'

लायली फफक-फफक कर रोती। कुंदन बहुत ही घबड़ा उठता। दिलासा देना उसे विशेष नहीं आता। वह अपने भारी हाथ से लायली की पीठ सहला कर बोलता, 'क्या कहती हो ? क्या कहती हो ?'

'मुझे रात में अकेले डर लगता है, कुंदन।'

'क्यों ?'

'तुम क्या समझोगे ? अकेली, अकेली रहती हूँ। संदूक भर कर जेवर।'

'अरे, तुम्हारे ऊपर कौन हाथ डालेगा ? कलकत्ता शहर में रहकर, कुंदन मिश्र की बागान बाड़ी में घुसने की किसी की हिम्मत है ? नीचे दरवान हैं, डालकुत्ता है। कुत्ते के डर से ही तो कोई नहीं घुसेगा। आदमी की तो बात ही क्या, रात में एक चिड़िया भी नहीं घुस सकेगी, लायली !'

'फिर भी शंका रहती ही है।'

'इसके अलावे, बजरंगी तो है ही।'

'बजरंगी, फिर बजरंगी ! उस पर बहुत भरोसा है ? जानते हो, जिन लोगों पर बहुत भरोसा किया जाता है, एक दिन वही बेईमानी करते हैं।'

यह बात जैसे कुंदन के कानों में नहीं घुसी। वह कहता है, 'ठहरो मैं उससे कहे देता हूँ। ऊपर बुलाता हूँ।'

'नहीं ! उसे ऊपर नहीं बुलाओगे।' लायली चीख उठती है।

कुंदन हैरान हो जाता है। बोलता है, 'कितनी सुंदर दीख रही हो, लायली ! गुस्सा कर के मुँह टुक-टुक लाल बना लिया है ? अच्छा, उसे ऊपर नहीं बुलाऊँगा। बीच-बीच में तो रात में रहता ही हूँ, और भी रहने की कोशिश करूँगा। ठीक न ! अब इजाजत दो। अब जाने दो।'

नीचे उतरकर वह गाड़ी में बैठता है। गाड़ी चलती रहती है। कुंदन बैठे-बैठे अपने सौभाग्य की बातें सोचता रहता है, मुस्कराते हुए।

अच्छे दिन आये हैं, सचमुच में अच्छे दिन आये हैं। कटक की वैसी नमक की आढ़त हाथ से निकलते-निकलते रह गयी। मसाला के कारोबार में इस साल अच्छा लाभ हुआ है। बारिशाल में सुपारी व नारियल का कारोबार भी अच्छा चलेगा, ऐसा लगता है। कारोबार की हालत अच्छी रहने से सब कुछ अच्छा लगता है।

उसकी माँ का मिजाज अब थोड़ा नरम है। जब तब आ आकर तंग नहीं करती। गोपाल को बेटी का विवाह करना होगा। गोपाल के लड़के मनोहर ने अच्छा कारोबार साखा है। इतना छोटा लड़का, किस तरह कपाल पर तिलक लगाकर गद्दी पर जा कर बैठता है। बहुत अच्छा! उन सबों को लोग धार्मिक समझा करें। कुंदन तो शादी नहीं करता। कुंदन की मृत्यु के साथ-साथ ही सब कुछ खतम हो जायेगा।

सबसे ज्यादा खुशी की बात है कि लायली उसे प्यार करती है। लायली जो उसे प्यार करती है, इतने दिनों तक वह समझ नहीं पाया था। इस बार गाजीपुर से वापस आने पर जैसे साफ-साफ समझ में आ रहा है। लायली उस पर प्रसन्न है, इससे बढ़कर सौभाग्य की दूसरी बात भला क्या हो सकती है? बजरंगी को भी नहीं देख सकती। यह भी लगता है, स्वाभाविक ही हो। कुंदन को लायली प्यार करती है, इसलिये कुंदन भी बजरंगी पर इतना निर्भर करता है, यह वह नहीं चाहती।

कुंदन अपने मन में हँसता है। इस बार उसकी व्यवस्था भी कुंदन कर आया है। बजरंगी की व्यवस्था! कई महीने बाद ही सबको कुंदन अवाक कर देगा। गोपाल की पत्नी का रूप आँखे जुड़ाने वाला है! आँखे जुड़ाने वाला रूप किसे कहते हैं, यह कुंदन इस बार देख आया है।

गाजीपुर के गंगाघाट पर। भीम ने उसे खबर दी। बोला है, इस लड़की को देख रखो। उसके बाप ने भीख माँगकर विवाह का खर्च जमा किया, इसमें ही बहुत दिन लग गये। फिर माता-पिता एक ही साल में मर गये। काल शौच (एक साल का अशौच) लग गया। इन दिनों भाई के पास है। बहुत ही गरीब। लेकिन जात अच्छी, ब्राह्मण की लड़की।

कुंदन ने लड़की के भाई से कहा है। जाड़ा में आकर बातचीत पक्की कर लेगा। इसी बीच कुंदन ने भाई को कुछ रुपये दिये हैं और

धमका आया है कि इस लड़की की शादी यदि कहीं करने की कोशिश की तो फल अच्छा नहीं होगा। लड़की गोरी नहीं। फिर भी गठन अच्छी है। शांत लड़की, आँखें नीची कर के नदी के घाट पर आती है और आँखें नीचे किये ही चली जाती है।

कुन्दन ने सोचा, कभी लायली से वह बात बता देनी चाहिए। इससे लायली समझेगी कि बजरंगी एक दिन चला जायेगा। संभवतः लायली का गुस्सा कम होगा।

कुन्दन मज़ाक में ही बोलता है।

'कई दिनों से बजरंगी को गाने का एक सुर ही बजाते पाता हूँ। क्या दिन, क्या रात! यही एक सुर बजरंगी बजाता रहता है। भरी दोपहरी में अकेले-अकेले इस फुलवारी में बैठकर बजाता है, रात में अकेले-अकेले, बैठे बैठे बजाता है।'

उस दिन लायली बोली, 'और यही एक सुर बराबर नहीं सुन सकती।' कुन्दन के हाथ से गड़गड़े का नल लायली ले लेती है। कहती है, 'उसे अदब, कायदा व सोहबत का ज्ञान, देखती हूँ, हो गया है। आज कितने दिन हो गये, उसे न बुलाने पर वह ऊपर नहीं आता। चाहे जो भी कहो, इन लोगों के बीच-बीच में डरा धमका कर उनकी जगह याद दिला देनी चाहिये। नहीं तो सिर पर सवार हो जाते हैं।'

'क्या कहूँ लायली, उसे मैं पहचानता हूँ। वह अपनी औकात जानता है या नहीं, मुझे संदेह होता है। तुम कहती हो, मुझे भी ऐसा लगता है कि बीच बीच में डाँट दूँ। लेकिन ऐसा कर नहीं सकता।'

इसके बाद कुन्दन हँसता है। बोलता है, 'ठहरो न, इस बार उसे अच्छी तरह बाँधने की व्यवस्था की है। कुछ दिन बीतने दो न!'

'क्या किया है?' लायली यों ही सवाल कर बैठती है और दरवाजे की तरह देखती रहती है। इसके बाद ही मुँह फेर लेती है। दीवाल की तरफ मुड़कर पता नहीं क्या देखती रहती है।

आईने में परछाईं पड़ी। बजरंगी आया। कुन्दन एक बार लायली की तरफ देखता है, एक बार बजरंजी की तरफ। कहता है, 'बजरंगी तुम्हारे नाम की नालिश है।'

'बोलो।'

बजरंगी का सिर झुका हुआ। वह कमीज का फीता छूता है। कुंदन देखता है, बजरंगी का कमीज मैला है और केश भी बेतरतीब।

'क्या दिन रात एक ही सुर बजाते रहते हो? बजाने की जगह दूसरी तुम्हें नहीं मिली? तुम इस चबूतरे पर बैठे-बैठे बजाते रहते हो। लायली ऊब गई है सुनते-सुनते।'

बजरंगी कुछ भी नहीं बोलता।

'मैला-कुचैला कपड़ा पहने रहते हो, यह भी वह पसन्द नहीं करती। उसके पास तो शिरीन आती है, निसार आता है।'

'और भी कुछ कहोगे?'

'नहीं।' इस बार कुंदन डाँटता है। 'सीधे होकर बैठो।' बोलता है, 'यह सब बात ध्यान में रखना। तुम्हारे ही काम आयेगी। आज हम लोग कह रहे है, कल और कोई कहेगो।'

और भी कोई? वह फिर कौन है। बजरंगी और लायली दोनों हैरान होकर देखते हैं। कुंदन बोलता है, बोलता है, 'तुम्हारी शादी कर दूँगा। लड़की देख आया हूँ। जाओ, नीचे जाओ।'

लायली ने हैरान होकर कुंदन का हाथ पकड़ा। 'क्या कहा? उसकी शादी कर दोगे? सच में उसकी शादी करोगे?'

'सच। शादी कर दूँगा, दूर भेज दूँगा।'

लायली कुछ न बोल सकी। वह हैरान निगाहों से कुंदन की तरफ देखती रहती है। कुंदन कहे जाता है, 'उसे तो भगा नहीं सकता, लायली। उसने मेरी जान बचायी है। एक बार नहीं, बार-बार। तुम यही कुछ और महीने उसे बर्दाश्त करो। इसके बाद फिर उसका मुँह नहीं देखना होगा।'

'कौन उससे व्याह करेगा ? उसकी न जाने क्या जात है ? जन्म का भी ठिकाना नहीं।'

'किसने कहा ?'

'वही तो कहा करता है।'

'वह नहीं जानता।'

'तुम जानते हो ? किस तरह जाना ? तुम क्या उसके माता-पिता को जानते हो ?'

कुंदन इस साधारण बात को सुनकर हठात् जैसे होश-हवाश खो बैठता है। वह जैसे भूल जाता है कि लायली के साथ बातें कर रहा है। कुंदन चीख उठता है, 'जानता हूँ, मैं जानता हूँ, मुझसे और सवाल मत करो।'

'किस तरह जाना ? यही तो जानना चाहती हूँ।'

'लायली ! कुंदन मिश्र इतनी बातों का जवाब नहीं देता।' साथ-साथ लायली चीख उठती है, 'तुम मुझसे बातें कर रहे हो कुंदन।'

लायली भागकर अपने सोने के कमरे में चली जाती है। दरवाजा बन्द कर लेती है।

कुंदन हाथ से आँखें बन्द कर लेता है। हाथ काँपता रहता है।

उस दिन शाम से ही फिर लायली जैसे बदल जाती है। बोलती है, 'अच्छा नहीं लगता है, कुंदन। केवल तुम और मैं, और यह प्यार-मोहब्बत।'

कुंदन का मुँह सफेद हो जाता है। कहता है, 'बोलो, क्या करना चाहती हो ? लायली चली जाना चाहती हो ? छोड़ देता हूँ, तुम्हें।'

'क्या कहा ? मैंने क्या यही कहा है ?'

'जबर्दस्ती मुझसे प्यार करो, यह तो तुमसे नहीं कहता हूँ लायली।'

'कुंदन, कुंदन ! तुम क्या बच्चे हो ?'

लायली उसके करीब आकर बैठती है। उसके हाथ में उँगलियाँ लरजाकर, नीचे झुककर गाल पर गाल रखकर बोलती है, तुम्हें यदि

प्यार नहीं करती तो फिर तुम्हारे पास रहती ही क्यों ? लायली आसमान क्या यों ही किसी के पास रहती है ?'

'लायली, तब फिर इस तरह की बात क्यों की ?'

'भूल हुई है, माफी चाहती हूँ, हुआ तो ?'

'बोलो, क्या करना चाहती हो ? गंगा की सैर करोगी ?'

लायली तालियाँ बजाकर हँस पड़ती है कहती है, 'यह बड़ा अच्छा रहेगा, क्यों ? तब फिर शिरीन को बुलाऊँ ? निसार को बुलाऊँ ?'

'क्यों, वे सब क्यों ?'

'वे सब क्या इस तरह गंगा की सैर कर पाते हैं ? मेरे कारण वे सब भी थोड़ी सैर कर लेंगे। बोलो, हाँ, बोलो कुन्दन। हाँ कहो, तब मैं तैयार होऊँगी। देखो, आज किस तरह सजूँगी। तुम तो हरा रंग पसन्द करते हो न ? मैं सब कुछ हरा पहनूँगी।'

'तुमसे कौन जीतेगा भला ? गाड़ी भेज दो।'

गाड़ी भेज दी गयी। लायली तैयार होने गयी। कुन्दन ने नहाया और कान में इत्र से भींगी रुई खोंस कर सज-धज कर बैठा।

बजरंगी ने बजरा झाड़ने पोंछने को भेजा। तकिया चाहिये, गलीचा चाहिये। एक आदमी बरफ लाने के लिये बर्फ-कल गया। फल की टोकरी से नौकर चुन-चुनकर खरबूजा, अंगूर, लीची, काँच के बर्तन में रखते हैं। बहुत दिनों बाद घर में चहल-पहल आयी है। एक आदमी गड़गड़ा लेकर चला जाता है।

हठात् ऊपर से रोने की आवाज़ आती है। कोई जैसे दर्द से चीख कर रो उठा हो। बजरंगी सब कुछ भूल जाता है। बिना बुलाये उसका ऊपर जाना मना है, यह बात उसे याद नहीं रहती। वह ऊपर जाकर पूछता है, 'क्या हुआ है, मालिक ?'

लायली जावेदी को पीट रही है। कुन्दन की छड़ी से कठोर होकर पीट रही है। लायली के शरीर पर दुपट्टा नहीं। चोटी साँप की तरह डोल रही है। गुलरूख पास खड़ी है। मुँह में कपड़ा ठूँस कर रो

रही है।

बजरंगी को देखकर कुन्दन गरज पड़ता है, 'तुम्हारे घर में रहते हुए भी मालकिन के जेवर चोरी हो गये ? क्या करते हो ?'

बजरंगी बोलता है, 'क्या हुआ ? क्या चोरी हुई ?'

'मेरी सोने की कंठी, बाजूबन्द, कान का बाला !' लायली कहती है। लायली का चेहरा लाल। तमतमा रहा है। वह बोलती है, 'इसी जावेदी ने चुराया है। हरामजादी, शैतान, मैं क्या नहीं जानती कि गहने से तुम्हें कितना लोभ है ? मैं जब कभी बक्सा खोलती हूँ, तुम दरवाजे के पास आकर खड़ी रहती हो।'

'मैंने नहीं लिया है ? विश्वास करिये, मैंने आपका जेवर नहीं लिया है।'

बजरंगी के सिर में जैसे चक्कर आ जाता है। वह बड़े कष्ट से रेलिंग पकड़कर अपने आपको सम्हालता है। बोलता है, 'नहीं, उसने नहीं लिया है।'

'तुम तो कहोगे ही ! तुम तो उन लोगों की खबर रखते ही हो ! मैं तुम्हें कहती हूँ कुन्दन, वह छिपे-छिपे शैतानी करता है। जावेदी सच बताओ। नहीं तो तुम्हें कुत्ते से कटवाऊँगी। तुम्हारा चाचा तुम्हें बेच रहा था, मैंने ही तुम्हें बचाया। अब मेरा ही जेवर चुराती हो ?'

हठात् बजरंगी चिल्लाकर बोलता है, 'ठहरो ! मैं गहना ला देता हूँ।'

वह नीचे उतर जाता है। दीवाल पर टँगी अपनी कमीज खींच लेता है। ऊपर आकर जेब से जेवर निकाल कर देता है।

कुन्दन की तरफ देखकर कहता है, 'मालिक जिस दिन तुम लोग बैरकपुर गये थे, मैं ऊपर आकर दरवाजा बन्द करते समय देखता हूँ कि जेवर सब बिखरे पड़े हैं।'

'तब बताया क्यों नहीं था ? इतने दिनों तक अपने पास क्यों रक्खा था ?' लायली उसके हाथ से जेवर छीन लेती है।

'मालिक, उसी दिन से कमीज की जेब में पड़ा हुआ है। मुझे याद नहीं रही। यदि दोष हुआ है, तो मुझसे हुआ है।'

कुन्दन तैयार नहीं था। इसलिये क्रोधित था। 'जावेदी जाओ। गुलरूख जाओ।'

बजरंगी एक बार कुन्दन की तरफ देखता है, एक बार लायली की तरफ। बोलता है, 'उसे मारने के पहले एक बार मुझसे पूछ तो सकती थीं। बजरंगी कोई बेईमान आदमी नहीं है। बजरंगी सच बात ही कहता है।'

वह धम-धम कर नीचे उतर पड़ता है।

लायली बोलती है, 'कुन्दन वह मेरा अपमान कर गया और तुम एक बार भी कुछ नहीं बोले ?'

कुन्दन कपाल पर का पसीना पोंछ फेंकता है। उसी समय लायली चिल्लाकर नाराज होती है, वह एक कोहराम मचा देती है। इसके बाद कुन्दन उसे शांत करता है।

उस दिन बजरंगी बजरा पर गंगा की सैर करने नहीं जाता। शिरीन आती है, निसार आता है। उन लोगों के चले जाने के बाद बजरंगी अस्थिर पैरों से फुलवारी में चहलकदमी करता रहता है।

उस दिन कुन्दन जब गाड़ी पर चढ़ता है, बजरंगी उसके पास आकर खड़ा होता है। बोलता है, 'मैं भी जाऊँगा।'

'नहीं।' कुन्दन बजरंगी के साथ अकेले नहीं रहना चाहता।

'मालिक मेरी अर्जी है।'

'बाद में सुनूँगा।'

कुन्दन की गाड़ी चली जाती है। अकेले-अकेले खड़े रहकर बजरंगी का दिल दुःख से भर जाता है। अपने आपको बड़ा ही अकेला महसूस करता है। आज मालिक ने उसकी बात भी सुननी नहीं चाही। उसकी उपेक्षा करके चला गया। तब वह किससे अपने मन की बात कहेगा ?

बजरंगी कमरे में नहीं गया। कमीज उतार कर चबूतरे पर बैठा रहा। ऐसी-वैसी बातें सोचते-सोचते एक बार उसे नींद आ गयी। फिर बड़ी रात गये एक बार उसकी नींद टूटी।

'बजरंगी।'

बजरंगी की तन्द्रा टूट गयी। वह उठ बैठा। लायली! लायली उसके सामने खड़ी है। वही पन्ना की कंठी गले में चकमक कर रही है। आँख और मुँह लाल। नशे में लाल ढुलमुलाती आँखें, होंठ पर हँसी।

बजरंगी चुपचाप रहा।

'बजरंगी, तुम्हारे पास ही आयी हूँ।'

'बोलिये!'

'इतनी रात गये उतर आयी हूँ, कहीं आश्चर्य तो नहीं हो रहा है?'

'आपके ही ख्याल व खुशी के साथ ताल देने के लिये तो मालिक ने मुझे यहाँ रखा है। आश्चर्य क्यों होगा?'

'चुप। धीरे-धीरे बातें करो। आज निसार घर नहीं गया है। तुम्हारे कमरे के सामने वही तो सो रहा है।'

'धीरे-धीरे क्यों बोलूँगा? और आप भी धीरे क्यों बोलेंगी? नौकर के साथ भी क्या कोई इतनी रात में धीरे-धीरे बातें करता है?'

लायली हँसती रहती है। 'जानती हूँ, बहुत नाराज हो, जानती हूँ?'

'मैं आप पर नाराज हूँ? मुझमें इतना दुस्साहस क्यों होगा?'

'बजरंगी, तुम्हारी बातचीत का तरीका मुझे अच्छा नहीं लगता।'

'आप मालकिन हैं। मैं आपका नौकर हूँ।'

'बजरंगी, तुम फिर 'आप' कह रहे हो, अच्छा माफ किया। लेकिन मैं तुम्हें क्या नौकर की तरह देखती हूँ?'

'आप मुझे कैसी नजर से देखती हैं, वह तो आज बिलकुल साफ

हो गया है। भगवान ने मेरी आँखों में उँगली डाल कर दिखा दिया है, जावेदी और मैं, हम दोनों आपकी नजरों में बराबर हैं।'

'छिः बजरंगी !'

'बराबर ही तो। बराबर क्यों नहीं, बोलिये ? उसे आपने बचाया है, नहीं तो वह भिखारिन बन गयी होती। मुझे मालिक ने बचाया है, नहीं तो मैं उन्हीं मल्लाहों का नौकर बना रहता। सच, सच ही तो कोई फर्क नहीं।'

'बजरंगी, फर्क कैसी दशा में होता है ? फर्क होता है देखने वाली निगाहों से। तुम्हारा मालिक क्या तुम्हें उसी नजर से देखता है ?'

'यह सब बात आपके मुँह से शोभा नहीं देता।'

'क्यों ?'

'क्योंकि यह सब केवल आपके मुँह की बात है। आप इसमें विश्वास नहीं करतीं !'

'बजरंगी।'

'मुझे भी मारेंगी ? मारिये ! जावेदी की तरह मैं रोऊँगा नहीं।'

'तुम मेरी बातें तो सुनो। उस समय गुस्से में मैं जो-सो बक गयी थी। गुस्से में क्या आदमी की जबान पर लगाम रहती है ?'

'मैं क्या जानूँ कि आप लोगों का गुस्सा कैसा है ? गुस्सा होकर आप लोग आदमी को चोर कह सकते हैं, मार सकते हैं। हम लोग गुस्सा होने पर दिल की आग दिल में ही दबाकर रखते हैं। मालिक से कहकर मैं चला जाऊँगा।'

'जानती हूँ। तुम जाओगे, तुम शादी भी करोगे, सुख-शांति से भरा-पुरा तुम्हारा परिवार होगा।'

'शादी करूँगा ? मैं ? नहीं, नहीं !' बजरंगी का गला दुःख से भारी। दबा हुआ रुदन जैसे उसके गले में उमड़-घुमड़ कर उठता है।

'सुख-शांति शायद मेरे भाग्य को बर्दाश्त नहीं होगा। मालिक से कहकर मैं चला जाऊँगा।'

'कहाँ जाओगे ?'

'इतनी बड़ी दुनिया पड़ी है, जाने के लिये, किसी जगह की चिंता फिर क्या ? मुझे तो पालकी-गाड़ी, आगे-पीछे नौकर नहीं चाहिए। जिस तरफ दोनों आँखें जाती हैं,चला जाऊँगा।'

लायली हताश होकर लौट आयी।

ठीक यही बात कुन्दन से कहेगा, ऐसा ही निश्चय बजरंगी ने किया। लेकिन दूसरे ही दिन थोड़ी बेला चढ़ते ही उस मकान से भीम आया।

'बजरंगी, जल्दी चलो।'

'क्या हुआ ?'

'क्या हुआ ? अरे बाबूलाल का पोता, अभी भी क्या उसका शरीर बच्चे की तरह हल्का है ? कल कितनी रात गये घर लौटा ! सुबह मैं शायद नया घोड़ा खरीदने अलीपुर गया था। तेज घोड़ा भला बाग ही क्यों मानेगा ? अलीपुर से निकल कर बड़े मैदान में दौड़ाने गया था।'

बजरंगी कमीज पहनता है। पैरों में जूते पहनता है। पूछता है, 'क्या हुआ है ?

'गिर-पड़ा है।'

'भीम, ज्यादा चोट तो नहीं लगी है ?'

'लगी नहीं ? एड़ी की हड्डी में मोच आ गयी है, हाथ का मांस गिर गया है। इससे उसे क्या होगा ? अभी चीख-चिल्ला कर सभी को परेशान कर रहा है।'

भीम हो हो करके हँसता है। गले का कफ़ साफ करके बोलता है, 'अरे बजरंगी, अलीपुर के एक साहब हकीम ने कुंदन को सूई लगाई। अरे सूई लगा कर हाथ ही सी दिया। ठीक जिस तरह दर्जी छेद बंद कर देता है, उसी तरह। कलकत्ता आकर कितनी नई-नई बातें देखा

है रे बरंजगी !'

'चलो ।'

'चलो । अभी भी बिछावन पर बैठकर बुरी तरह चीख रहा है, कुंदन । मुझसे तुम्हें बुला लाने को कहा ।'

बजरंगी देखता है, निसार जगा बैठा हुआ है । निसार भीम को देखकर बोलता है, 'यह फिर कौन ? चेहरा देखने से लगता है कि कौन पक्का हत्यारा हो । कुंदन जुटाओ सबको, एक-एक करके ।'

'निसार साहब, मैं तो घर जाता हूँ । मालिक शायद घोड़े पर से गिर गया है ।'

निसार बोलता है, 'यह क्या बाबा ! अरे यही तो, कितनी रात तक तो हम लोगों के साथ ऐश-मौज में रहा । अभी-अभी तो सुबह हुई । इस बीच भला घोड़ा पर चढ़ा ही भला कब और गिरा ही भला कब ?'

'आप जरा ऊपर कहला देंगे ?'

'तुम भी तो नहीं सोये हो, बाबा ! कितनी रात तक यहाँ लेटे-लेटे तुम लोगों की बातचीत सुनी । तुम ही भला कब जगे ?'

बजरंगी घबड़ा जाता है । कुछ बोले बिना ही चला जाता है ।

कुंदन अपने कमरे में बैठा था ।

पाँव में हल्दी-चूना की पट्टी । हाथ बैंडेज से बँधा हुआ । कपाल, गाल, गला, सब जगह खरोंच । हँसता हुआ । वह गोपाल के मंझले और छोटे लड़के को विस्तारपूर्वक कहानी सुना रहा है । बिलकुल लड़ाई जीतने वाले की तरह भाव । कहता है, 'घोड़ा बड़ा ही अच्छा है ।' बजरंगी को देखकर वह हँसता हुआ देखता है । 'तुम्हें बुलाया है क्योंकि तुम्हारे साथ बातें करनी हैं ।'

'कब बाहर निकले थे ?'

'सुबह ।'

'हठात् ?'

'अरे शरीर तो ठीक रखना ही होगा !'

कुंदन बोलता है, 'तुम साथ नहीं थे, इसीलिये घोड़ा पगल गया ।'

'मालिक, घोड़ा तुम्हारी जान ले सकता था । वैसा धक्का लगने से हो सकता है यह बिछुआ तुम्हारे शरीर में घुस जाता ।'

'जाता तो जाता । सब झंझट खतम तो हो जाती ।'

बजरंगी बोलता है, 'दर्द नहीं हो रहा है ?'

'नहीं । सुनो, कल जो कुछ हुआ·········।' कुंदन चुप हो जाता है ।

'बोलो ।'

'लायली समझ नहीं सकी है । कहाँ क्या रखती है, उसे याद नहीं रहती ।'

'मुझे भी चोर कहा ?'

'यही देखो तो भला, तुम्हें भी चोर कहा । लड़की ही वैसी है । जाने कब गुस्साती है, कब हँसती है ।'

'मालिक, मालकिन को लेकर तुम किसी दूसरी जगह क्यों नहीं घूमने चले जाते ।'

'कहाँ जाऊँ ?' कुंदन अभी भी जैसे कुछ सोच रहा है ।

'मालिक, मेरी कई दिनों से इच्छा हो रही है, बाहर जाने की ।'

'जाओगे ।'

'मुझे काशी क्यों नहीं भेज देते ?' बजरंगी उदास होकर बोल उठता है ।

'काशी ? काशी क्यों जाओगे ?'

'यों ही ।'

कुंदन में और धीरज नहीं बचा था । रुखे गले से बोलता है, 'लायली जो कहती है, देखता हूँ वह झूठ नहीं है तुम्हारा मन समझ पाना कठिन है ।'

'मालिक, मैंने वह बात नहीं कही।'

'अरे तुम भी उन लोगों जैसे ही हो। बेईमान ! तकलीफ होती है, यों ही भाग जाना चाहते हो। मैं क्या नहीं समझता हूँ ? सब समझता हूँ।'

क्रोध में कुंदन बहुत कुछ कह गया। गुस्से की बात, दुःख की बात।

सुनते-सुनते बजरंगी दोनों हाथों से प्रणाम करता है। चिल्लाकर बोलता है, 'अच्छा नहीं जाऊँगा। हुआ तो ? नहीं जाऊँगा, नहीं जाऊँगा।'

'क्यों, जाना चाहते हो तो जाओ न ! तुम भी बड़े हो गये हो। तुम्हें अपने भले बुरे का ज्ञान है।'

'मालिक, अपने लिये नहीं कहा है। मैं तुम्हारे लिये....।' बोलते हुए भी बजरंगी नहीं बोल पाया।

'हा भगवन् !' अस्पष्ट कहकर वह रुक जाता है। क्या बोलेगा वह ! क्यों वह चला जाना चाहता है ?

कुंदन की बातें सुनकर वह डर गया।

'बजरंगी, लायली की बातों का बुरा मानकर चले जाना चाहते हो ?'

बजरंगी ने थोड़ा सोचा। मन ही मन साहस जमा किया।

'मालिक, मालकिन बड़ी ही ख्याली हैं। ख्याल व खुशी के साथ बराबरी न देने से ही गुस्सा जाती हैं।

'जानता हूँ, लेकिन उसके पास मैं तो हमेशा नहीं रह सकता हूँ।' उसकी ख्याल-खुशी की हजारों जिद कौन मानेगा, बताओ ? तुम हो, इसलिये मैं निश्चिन्त रहता हूँ।'

'मालिक उसे खुश रखने पर ही वह रहेगी, और खुशी की खुराक न जुटाने पर वह चली जायेगी, इसमें मेरा मन समर्थन नहीं देता।'

'क्या करूँगा, बताओ ? उसे खुश मुझे रखना ही होगा। नहीं

तो', शब्द का उच्चारण करने में कितनी लज्जा थी, फिर भी एक बार कुंदन अपने दिल की कमजोरी बजरंगी को दिखा देता है। मानो पल भर के लिये दिल खोल देता है। फिर बंद कर लेता है। मानो पल भर के लिये ही खोलता है। लेकिन उसमें ही बजरंगी ने देखने लायक जो है, देख लिया है। एक पुरुष, कठोर, निर्मम हृदय, मानो प्यास से हाहाकार कर रहा है। बंजर मरुभूमि ने जैसे काली-घटा की एक छाया देख ली है। कुंदन कहता है, 'नहीं तो, वह नहीं रहेगी।'

वह दूसरी तरफ देखता हुआ धीरे-धीरे बोलता जाता है, 'मैं क्या नहीं समझता हूँ ? सुख शांति के लिये यदि हमेशा दाम देना पड़े, तो पुरुष के लिये इससे बड़ी लज्जा की बात और कुछ भी नहीं। मुझे वह प्यार नहीं कर सकेगी, मेरे दिल को नहीं समझना चाहेगी, यह मैं जानता हूँ। फिर भी यह सोना, यह पन्ना, यह कमल हीरा दिये बिना मेरे पास कोई उपाय भी तो नहीं। आज मैं बड़ा ही निरुपाय हूँ। मैं उसे खोना भी नहीं चाहता।'

'मालिक, और कुछ कहने की अब जरूरत नहीं।'

'देखो बजरंगी, काशी में देखा है, यहाँ भी देखता हूँ, पुरुष उन लोगों के पीछे दौड़ते हैं। उन लोगों के पैरों पर, जो कुछ भी होता है, लुटा देते हैं। इसमें ही जैसे उन लोगों का परिश्रम सार्थक हो जाता है। मैंने देखा है कि········ये पुरुष सब जोड़ी-चौघोड़ी लेकर उन लोगों के दरवाजे पर हाजिर होते हैं। राधा-श्याम बाबू के बारे में कितना तो सुन चुका हूँ। किसी समय वह टप्पावेदाना को साथ लेकर आठ घोड़ों की गाड़ी हाँकते थे। घोड़ों की गर्दन में सुर बँधी हुई रूपा की घंटियाँ रहती थीं। टुंन टांन कर के बजतीं। टप्पावेदाना के पैरों में सब कुछ लुटाकर, वह रास्ते पर ही तो मरे न ! आज तुम्हें बहुत कुछ सुना रहा हूँ। क्या सुना रहा हूँ, कह नहीं सकता। शायद सब कुछ सुनकर तुम फिर लायली पर ही गुस्साओगे। लेकिन तुम्हें एक बात सोचने को कहता हूँ।'

कुंदन कहता है, 'उसका कोई दोष नहीं। उसका तो यही काम है, पेशा है।'

'मालिक!' बजरंगी पर जैसे किसी ने चोट की। किसी ने जैसे हठात् उसकी आँखों पर से चश्मा उतार दिया।

कुंदन जैसे देवता हो। कुंदन उसके दिल की ही बात कर रहा है।

'तुम आदमी को अच्छा देखना चाहते हो? तुम बच्चे हो। सफेद आँखों से देखो बजरंगी, बहुत कुछ समझ पाओगे।'

वह बजरंगी को पास बुलाता है।

उसके माथे पर हाथ रखकर कहता है, 'इस तरह कभी तुमसे बात नहीं की, क्यों? क्या मन में आया, आज बात की।'

'मालिक, तुम शराब पीते हो, तुम्हीं ने सफेद आँखों से देखना सीखा। मैं क्यों नहीं देख पाता?'

'देखने से क्या फायदा, बोलो?'

'मालिक मैं नहीं देखना चाहता हूँ। यह तुम क्या कह रहे हो? मैं खराब को खराब नहीं करूँगा। मैं अच्छा को अच्छा कहकर ही नहीं मानूँगा। कहाँ, क्यों इतने दिनों तक तुमने इस तरह की बातें नहीं की?'

'करने से ही भला क्या फायदा होता है? कहने से कुछ भी नहीं होता, समझे? जो जैसा है, वह दुनिया को वैसा ही समझता है।'

'मालिक, इतने दिनों तक मुझे डर नहीं लगा था। आज जैसे डर लग रहा है।'

'डर लग रहा है? तुम्हें डर लग रहा है?' हठात्, जैसे कुंदन को भी डर लगने लगा। कहता है, 'नहीं, नहीं, तुम मत डरना। तुम्हें डर लगने से मुझे बड़ी तकलीफ होगी। तुम कभी मत डरना। जो बुरा है, जो गंदा है, वह तुम्हारी आँखों में नहीं पड़ता, यही मेरे लिये बहुत बड़ा भरोसा है।'

बजरंगी ने कुंदन की एक भी बात नहीं समझी। वह मन ही मन केवल दो बातों का निश्चय कर लेता है। मालिक लायली को प्यार करता है। इसका ही नाम प्यार है। लायली को मालिक छोड़ न सकेगा, यह एक बात हुई।

मालिक का ख्याल करके लायली की सभी बातों व अत्याचार को बर्दाश्त कर लेना होगा, यह हुई दूसरी बात।

बजरंगी ने निश्चय कर लिया।

इसके बाद कुंदन के लिए दूध आया, कविराजी मोदक आया। मोदक के साथ कुंदन बीच-बीच में गोली खाता है। अधिक अफीम से शारीरिक व्याधि विष भरता है। एक बार बजरंगी बोला, 'अच्छा मालिक, यदि किसी ऐसी को लाते, जिससे शादी भी कर लेते, तब कैसा होता?'

जैसे हताश होकर कुंदन बोला, 'तुम्हारे साथ बातें करने का कोई मतलब ही नहीं होता। शादी करने से वह मेरे दोनों पैरों की पूजा करती, यही न? तुमने एक अच्छी बात याद दिला दी। तुम्हारी शादी करूँगा। दुल्हिन देख आया हूँ।'

'मैं शादी नहीं करूँगा।'

'क्यों?'

'पत्नी यदि मुझे प्यार न करे?' बजरंगी ने कुंदन की दलील से ही कुंदन पर वार किया है, यह जाहिर करके वह खुल कर हँसा।

'करेगी, करेगी। ज्यादा गुस्सा दिलाने पर दुल्हिन को मारना पीटना। खूब मिहनत कराना। खुद भी मेहनत वेहनत करके सुख से रहना। इसके अलावा शादी करना एक धर्म है।'

'हूँ, फिर तुम क्यों नहीं शादी करोगे?'

'फिर बेवकूफों की तरह तुमने बहस शुरू की। जाओ, जाओ।' जाते-जाते बजरंगी लौट गया। बोला, 'एक बात है। यह तुम्हें सुननी ही होगी।'

'क्या, कहों ? जो कुछ कहना है, झटपट कह डालो, लगता है कि बुखार आ रहा है।'

'मैं उस कमरे में नहीं रहूँगा।'

'क्यों ? बजरंगी और तंग मत करो।'

बजरंगी खामोश चला गया।

रास्ते में चलते-चलते उसका मन बड़ा हल्का हो गया। मालिक की बातें बड़ी अच्छी हैं। मालिक कहते हैं, उन बातों के लिये और चिन्ता न करो। मालिक की जो बातें उस समय सुनने में बुरी लगी थीं, अभी उन बातों पर विचार कर बजरंगी ने देखा। मालिक झूठ नहीं बोला है।

·········उसका धंधा ही यही है। उसका यही धंधा है। लायली आसमान। रूप बेचती है। लायली को यदि इसी उम्र में बजरंगी पहले पहल देखता तो उसके मन में कुछ न होता। लेकिन यही लायली जो एक दिन मुन्नी थी, उसे ही तो बजरंगी पहचानता था। मुन्नी के संबध में वैसी बातें सोचने की क्या इच्छा होती है ?

एक बात मालिक से बजरंगी नहीं कह सका था। वह उसे पहले से ही पहचानता था, यह नहीं बता सका है। उस समय जैसे संकोच ने आकर बाधा उपस्थित की।

मकान में घुसते ही बजरंगी झटपट ऊपर चला गया।

'मालकिन ! मालकिन !'

लायली चेहरे पर दूध और मैदा लगाकर नहाने जा रही थी। हैरान होकर बाहर निकल आई।

'मालिक घोड़ा पर से गिर पड़ा है। चोट आयी है, लेकिन डर की कोई बात नहीं।'

लायली चुपचाप। भौंहें टेढ़ी कर उसे देखा। किसे पता यह लड़का किस धातु का बना हुआ है। आकर कितने सहज रूप से बुला रहा है, देखो तो भला !

'आपको जब किसी चीज की जरूरत पड़े, मुझसे कहेंगी ।'

'इस तरह मत पुकारा करो जी ! सुनते ही छाती दहल जाती है ।'

'मुझे कहेंगी । मैं नीचे जाता हूँ ।'

'सुबह ही सुबह किसके साथ, कहाँ चला गया था ? एक बार भी नहीं कह गया ?'

'भूल हुई ।'

'आदमी कौन है, बड़ा चिल्लाता है ?'

'वह भीम है ।'

'ओ ! अच्छा बजरंगी, कुंदन कितने दिनों में चंगा हो जायगा ?'

'किस तरह बताऊँ ? छोटी-मोटी चोट से तो मालिक को कुछ होता नहीं ।'

लायली बोलती है, 'क्या बात है, कहो तो ? कल तो ऐसा लगा था कि बात ही नहीं करोगे । आज खुश होकर बातें करते हो ।'

'नहीं, नहीं, बात और क्या होगी !'

'बीच-बीच में 'तुम' कहकर ही बातें करो । मालकिन, मालकिन, सुनना बड़ा बुरा लगता है ।'

'बहुत अच्छा, कहूँगा ।'

बजरंगी अब लायली की सब बातें मानेगा, ऐसा उसने निश्चय लिया है ।

'तुम्हें किसी चीज की जरूरत पड़े, मुझे बताना, क्यों लायली ?' कुछ सोच-विचार कर बजरंगी बोलता है, 'जब जो मन में आये, वही बोलना ।'

लायली हैरान होकर देखती रहती है । इसके बाद झटपट भीतर घुसकर पर्दा खींच लेती हैं । गुलरुख उसके केश में कंघी कर के साफ करती है और खोंपा बाँध देती है । इसके बाद लायली नहाती है ।

उसके बचपने में उसकी नानी साबुन लगाया करती थी । वह सोचती कि एक गुलाबी पत्थर घिस कर बूढ़ी फेन निकालती है । लायली

साबुन लगाती है। हैदराबादी ने उसे साज-श्रृङ्गार नहीं सिखाया। उसकी माँ की आया उसे सजना-सँवरना सिखाती थी। बिल्कुल ठंडे पानी में नहाना नहीं चाहिये। गरम पानी में थोड़ा नमक और कपूर मिला देना। दूध व मैदा लगाने से चेहरे की चमड़ी पर एक भी शिकन नहीं पड़ेगी। गोआनीज बनिया सभी जैतून का तेल बेचते हैं। सरसों की खली बनिया की दूकान में पाओगी वही भिगाकर माथा घिस डालो। केश में नीबू का रस दिया करना। केश साफ होगा और साथ ही साथ रेशम जैसा मुलायम होगा।

दूध और मैदा फेंक कर लायली ने साबुन लगाया। शरीर और सिर पर ठंडा पानी डाला। नहाकर वह कपड़ा बदलती है। जंगले पर खड़ी होकर वह केश सुखाती रहती है।

गुलरूख एक बार नीचे जाती है। लायली से छिपकर हुक्का पी आती है। ऊपर जब आती है, उसका मुँह हँसता रहता है।

'बजरंगी साब् का दिमाग खराब हो गया है। माथे में गरम हवा लगी है।'

'क्यों ?

'फुलवारी के उस तरफ वाले कमरे में क्या वह रहेगा ? कंधे पर खाट उठाकर ले गया। बोला, दिन रात गंगा देखेगा।'

लायली ने जवाब नहीं दिया। देखती है। पेड़ की छाया में खड़ा होकर बजरंगी, नेवला को पता नहीं क्या खिला रहा है। एक-एक कर कितने ही पशु-पच्छी कुंदन ने लायली के लिए ला दिये हैं। बजरंगी ही उनके खाने-पीने का ख्याल रखता है। लायली को देखना भर अच्छा लगता है, देख-रेख करना अच्छा नहीं लगता। मकान के पिछवाड़े छोटी-छोटी कोठरियों में दिनभर चार डालकुत्ते बन्द रहते हैं। कसाई उन्हें मांस खिलाता है रात होने पर उन्हें खोल दिया जाता है। वे सब पहरा देते हैं।

लायली ने देखा है, अकेले बजरंगी को छोड़कर कोई भी उनके

कर झंझट मेरे कंधों पर आ पड़ेगी। वैसा काम न करो। अपने बड़े बेटे को तो पहचानती ही हो, पलभर में वह प्रलय मचा सकता है।'

'ऐसा तो है ही, पर इस बजरंगी को मैं नहीं देख पाती। वह बेटा, शायद जादू-टोना जानता है। निश्चय ही उसने जादू कर दिया है।'

कुंदन की माँ कोई दलील नहीं मानती। वह पुरानी बातों को लेकर दुखी हुआ करती है। अपने बेटे को जाने क्यों उसने कभी भी अपने पास नहीं पाया। एक दिन बाबूलाल ने उसे अपने अधिकार में रक्खा था। बाबूलाल के मरते न मरते यह छोकरा कहाँ से कहाँ से जा पहुँचा।

कुंदन की माँ फफक-फफक कर रोती है। उसका रोना सुनकर गोपाल की पत्नी घूँघट की ओट से चुपचाप अभिशाप देती रहती है। गोपाल की पत्नी, बिल्ली की तरह बिना कोई शब्द बोले तेज चलती है। कभी-कभी दो उँगलियों से घूँघट उठाकर भूरी आँखों से एकटक सास को देखती रहती है। उसकी पलकें तुरन्त नहीं गिरतीं। उन नजरों के सामने कुंदन की माँ बेचैनी महसूस करती।

बीच-बीच में कुंदन की दादी लाठी ठुक-ठुक करती हुई आती है। गोपाल की पत्नी से कहती है, 'तुम्हारी सास ने बहुत ही दुःख व शोक पाया है, उसकी बातों से दुखी मत होना।' वह घर में एक तरफ, एक छोटे से कमरे में घुसकर, उँगली मटका कर सास को शाप देती है। यह बात दो एक दासियों को छोड़कर और कोई भी नहीं जानता।

गोपाल की पत्नी बड़ी ही मिहनती है। वह इस घर का सब कुछ समझ गयी है। दादी यद्यपि बहुत सशक्त व समर्थ है, फिर भी बूढ़ी तो है ही। गोपाल की पत्नी के हाथों ही कुछ-कुछ कर के ही बहुतेरे खर्च-वर्च का हिसाब सौंप रखा है। कमरे में घुसकर उसने गोपाल के सामने घूँघट उठाया।

बोली, 'बजरंगी से कुछ मत कहने जाना, समझे। उस बार मनोहर की क्या कम दुर्दशा हुई थी, देखा तो ? इसके अलावा, हाथ

का नाखून खोंट-खोंट कर वह बोली, 'माँ अब पछताती हैं, यह सुनकर भी बुरा लगता है। लेकिन यह बात तो बिलकुल सच है कि बड़े लड़के का ख्याल उन्होंने कभी भी नहीं रखा।'

'तुम्हें इन बातों का पता कहाँ से लगा ?'

'सब जानती हूँ। यह बात भी सच है कि यह काम-धन्धा, यह कारोबार, घर-द्वार, सब तुम्हारे भैया के हाथों का बनाया हुआ है।'

'तुम क्या कहना चाहती हो ?'

'जिसका चाज है, वह चाहे जिस किसी पर विश्वास करे! हम तुम क्यों दखल दें ?'

गोपाल बोलता है, 'नहीं, नहीं, भैया की बातों में मैं भला क्यों दखल दूँगा ? तुम भी कैसी हो ?'

दीवार से सटकर छाया हट जाती है। इस घर में छाया का चलना-फिरना बहुत होता है। इसके कमरे के कोने में, उसकी दीवार के पास छाया कान लगाये रहती है।

कुंदन की दादी अपने कमरे में बैठी रहती है। उसके कमरे में दिन-रात वे सब आती जाती हैं। इस घर में कौन क्या मिलाकर भात खाता है, कौन किससे क्या बोलता है, किसके कमरे में कब कौन आता है, कुंदन की दादी को सब पता रहता है।

उधर दरवाजा बन्द कर कुंदन और बजरंगी बातें करते हैं। कुंदन हाल समाचार पूछता है, लायली कैसी है, क्या करती है ? उसके बाद दूसरी तरफ देखता हुआ यथासंभव उदास कंठ से वह बोलता है, 'क्यों रे, यह जो तुम आते-जाते हो, वह जानना नहीं चाहती कि मैं, यही मैं कैसा हूँ ?'

'चाहती तो है।'

'क्या कहती है ?'

'तुम क्या खाते हो, कैसे हो, यहाँ तुम्हारी देख-भाल होती है या

नहीं, सब जानना चाहती है ।'

कुंदन बोलता है, 'तुम जो कहते थे, वही करूँगा रे । उसे एक बार काश्मीर घुमा लाऊँगा । या तो बम्बई जाऊँगा । वह तो कहीं गयी नहीं है ।'

बजरंगी दरवाजा खोल देता है । कुंदन बोलता है, 'और चार-पाँच दिनों के अन्दर ही चल फिर सकूँगा ।'

फिर बजरंगी चला जाता है ।

खिदिरपुर वाले मकान में पहुँचते ही लायली उसे बुलाती है ।

लायली जैसे कुंदन का हाल जानने के लिये बड़ी बेताब रहती । बजरंगी को पास बैठाकर घुटनों पर ठुड्डी रखकर दिल लगाकर हाल-चाल सुनती है । कहती है, 'सच तो ! बेचारे को बड़ी चोट आयी है । एक बार जाकर देख आने की इच्छा नहीं होती, ऐसी बात नहीं । लेकिन उस मकान में मेरा जाना संभव नहीं होगा ।'

बजरंगी कहता है, 'चिन्ता न करो लायली, मालिक अब बड़ी जल्दी अच्छा हो जायेगा ।'

'किसने कहा ?' लायली कितनी खुश हुई, कहा नहीं जा सकता ।

'मुझे तो ऐसा ही महसूस होता है ।'

'नहीं-नहीं । मुझे तो ऐसा लगता है कि उसे और भी कुछेक दिनों अभी बिछावन पर पड़े रहना जरूरी है ।' लायली पूरे कमरे में चहलकदमी करती रहती है । चोटी एक बार खोलती है, एक बार बाँधती है ।

'तुम नहीं जानते, बजरंगी । पैर में चोट आना अच्छा नहीं । बिछावन पर पड़े रहना जरूरी है । आराम तो कुंदन करता नहीं । इसी बहाने से थोड़ा आराम भी मिलेगा ।'

बजरंगी लायली पर लक्ष्य करता है । लायली के गले में एक दबी चंचलता ।

'कहाँ हो, तुम कुछ बोल नहीं रहे हो ?'

'मैं क्या बोलूँगा ?'

बजरंगी डर रहा है। वह मानों हताश हो रहा है। उसने निश्चय किया था कि लायली की सारी बातें वह सुना करेगा, क्योंकि लायली को कुंदन प्यार करता है। लायली को खुश रखना होगा। इन कुछ दिनों से वह लायली की छाया बनकर लायली के साथ-साथ बना रहा है। लायली फुलवारी में टहलती है तब भी वह साथ रहता है।

'बजरंगी, यह फूल कितना सुन्दर है। क्या नाम है ?'

'दोपाटि।'

'बजरंगी मेरे फौवारे में कुमुद क्यों लगाया है ?'

'फिर कौन सा फूल लगाता ?'

'नीलकमल।'

कमल क्या नील होता है ? लगता है, यह सब केवल कहानी की बात है। कमल लाल भी नहीं होता, नीला भी नहीं होता। गुलाबी और उजला होता है। लायली छत पर बैठती है, वह पास बैठता है। सारंगी बजाता है। गाना गाता है।

ये कुछ दिन जैसे बड़ी सुख शांति में कटे। रोज-रोज बजरंगी ने भगवान से प्रार्थना की है ताकि लायली, कुन्दन को प्यार करे। लायली, कुन्दन को खुश रखे। शाम को लायली ने एक नये तरह का सिंगार-बनाव किया है। सज-धज कर, कमरे में बैठकर, बजरंगी के साथ बातचीत की। कितनी ही तरह की बातें। लायली की बूढ़ी दादी की बातें, मल्लाहों के पास बजरंगी के आदमी बनने की बातें।

लायली के साथ समय बिताने के समय मन ही मन बजरंगी बोला है, उसका मन जैसे भी स्थिर रहे। उसका मन प्राण जैसे भी ठीक रहे। कुन्दन के साथ उसका संबंध जैसे भी स्थायी रहे। ऐसा भी हुआ करता है ? इसी कलकत्ते में होता है, काशी में होता है। एक समाज-

पति, समाज का गौरव। और एक परिचयहीन अंधकार की संतान। फिर भी दोनों के बीच, प्यार का बंधन जीवन भर शिथिल नहीं होता।

उसने सोचा, यदि लायली और कुन्दन स्नेह का संबंध स्थापित कर सकें तो सबका भला होगा। उस दिन फिर बजरंगी निश्चिन्त होकर दूर जा सकता है।

लेकिन आज तो डर लग रहा है।

लायली की वह आन्तरिकता, कुन्दन के संबंध में वह उद्वेग, यदि सच है तो इस समय वह इस तरह बेताब क्यों होती है? इस चंचलता को देखते ही जैसे बजरंगी को डर लगने लगता है। छाती के भीतर जैसे सब सूख जाता है। कोई जैसे फुसफुसा कर कहता रहता है, होशियार, तुम होशियार हो जाओ।

'चुप क्यों हो गये, बजरंगी? बोलो न!'

बजरंगी ने लायली की ओर देखा। काली-काली आँखें अभी कुछ बड़ी-बड़ी दिखायी पड़ रही हैं। उन आँखों में जाने कितनी तरह की भाषाएँ हैं। बीच-बीच में भोले-भाले बच्चों जैसी सरलता। कभी-कभी कुछ भी समझ में न आता। क्या सोच रही है, क्या बोल रही है, कुछ भी समझ में नहीं आता।

अभी भी समझ में नहीं आ रहा है। बजरंगी को ऐसा लगा कि उन आँखों में थोड़ा आन्तरिक, उद्वेग, थोड़ी उत्कंठा, नहीं देख पाने से वह जैसे डूब जायेगा, बर्बाद हो जायेगा।

लायली हठात् हँस पड़ती है। बोलती है, 'इतना चिन्तित क्यों हो गये? कुन्दन, थोड़ा चंगा हो जाता, इसलिये कह रही थी। लेकिन इससे लाभ ही भला क्या? आज नहीं आया तो कल आयेगा।'

'लायली मालिक आए, यह क्या तुम नहीं चाहती हो?'

लायली भी जैसे डर जाती है।

पकड़ ली गई न ! उसके दिल की बात बजरंगी ने पकड़ ली, क्यों ? क्षण भर में ही उसका मुँह पीला पड़ गया। दोनों आँखें खुली की खुली रह गयीं। दूसरे ही क्षण उसने अपने आप को सम्भाला। हठात् आए हुए इस भावों को छुपाने के लिए ही वह गुस्सा हो जाती है।

'जाने क्या तुम कह रहे हो ? नहीं, बजरंगी बातें करना तुम नहीं जानते।'

'गुस्साओ मत। बोलो।'

'ओफ, बड़ा तंग करते हो तुम।'

बजरंगी चिन्तित मुँह लिये नीचे उतर पड़ता है। लायली के लिये एक बहुत बड़ा एहसान इन कुछ दिनों से उसके दिल में पल रहा है। तिल-तिल कर। लायली के बुलाने पर बजरंगी पास आया है। लायली जो कुछ कहती है, सुनता है। बजरंगी कहता है, 'जो कुछ कहोगी सब सिर झुकाकर सुनूँगा। लायली ! तुम्हारे लिए मेरी केवल एक ही प्रार्थना है। जो साधारण है, जो सुंदर है, उसे पेचीदा मत बनाओ।'

लायली की साँस सुनाई पड़ती है। दूसरी तरफ देखती हुई लायली कहती है, 'जो आसानी से पाया जाता है, उसके लिये मुझे कोई लालच नहीं। फिर भी तुम्हारी बात मान ली।'

इसके बाद दोनों के बीच कितनी ही घुल-मिल कर बातचीत हुई। एक दिन भी लायली ने बजरंगी के सामने कोई अंटसंट बात नहीं की।

लेकिन आज जैसे सब कुछ दूसरी ही तरह लगता है। बेचैन लायली अपने कमरे में जाती है। बिछावन पर औंधी लेट जाती है। उसे डर लग रहा है। क्यों डर लग रहा है, यह वह नहीं कह सकती। क्योंकि डर की वजह भी उसके पास बहुत स्पष्ट नहीं है।

भूल ! हम सभी भूल कर रहे हैं। अपनी इच्छा से ही भूल कर रहे हैं।

लायली पाँव फैलाकर दीवार से उठंग कर बैठी है। शिरीन कालीन छोड़कर फर्श पर जा बैठी। निसार उन दोनों के साथ झगड़ रहा है। झगड़ा शायद पहले ही हुआ है। निसार शायद अभी खेद जता रहा है। बजरंगी दरवाजे के बाहर खड़ा रहा।

'बजरंगी, इधर आओ।'

निसार जोर से हँसा। 'मेरी स्थिति बड़ी बुरी है, भाई! बड़ी मुश्किल में फँस गया हूँ। आओ! मुहब्बत को लेकर दो-चार बातें हो रही हैं।'

बजरंगी शीशे के ढक्कन से बंद सुराही उतार कर रखता है और थोड़ा आगा पीछा कर बाहर निकल जाने की कोशिश करता है।

'कहाँ जा रहे हो, कहाँ जा रहे हो? बैठो भई, बैठो! लायली उससे बैठने को कहो। बिना तुम्हारी इजाजत लिये वह नहीं बैठेगा।'

निसार हँसमुख चेहरे से सबकी तरफ देखता है। बोलता है, 'यह तो बाबा तुग़लक़ी कानून है। तुम अपनी खुशी से हँसोगे तो शूली पर चढ़ाऊँगा। मैं हुक्म दूँगा तब तुम हँसोगे।'

'फालतू मत बको।' नाक पोंछ कर शिरीन सीधी होकर बैठती है।

'हाँ! मैं फालतू बक रहा हूँ? लायली यदि बजरंगी को खुद बुलाकर अपने कमरे में बैठने को कहे तो इसमें दोष नहीं, मेरे कहने से ही शायद दोष होगा?'

शिरीन हैरान होकर बोली, 'क्या बकते हो? जो बोलो उसका माने भी समझना चाहिये। लायली भला उसे क्यों कमरे में बैठने को कहेगी?'

निसार थोड़ा हँसा। जैसे वह सब कुछ जानता हो। वह बोलता है, 'शिरीन तुम घने अंधकार में पड़ी हुई हो। तुम्हें भला और मैं क्या कहूँगा?'

शिरीन फिर भी नहीं मानी। 'नहीं, नहीं तुम्हारे मुँह में लगाम नहीं है निसार। उसके सामने सब कुछ बोलना ठीक नहीं। वह तो कुन्दन का दाहिना हाथ है। यदि कुन्दन जान पाये कि तुम यहाँ अड्डा जमाते हो....?'

अब लायली बोली। शान्त एवं साधारण कण्ठ से। नरम होकर बोली, 'खड़े क्यों हो? भीतर आओ।'

शिरीन की तरफ बिना देखे ही कहती है, 'शिरीन आयेगी, निसार आयेगा, यह तो जानी हुई बात है। इसके लिये बजरंगी भी शिकायत नहीं करेगा। और न तो कुन्दन ही इतना छोटा है जो यह सब लेकर मुझे कुछ कहेगा।'

बजरंगी एक तरफ बैठ जाता है। इन लोगों के आ बैठने से उसे बड़ी बेचैनी महसूस हो रही है फिर भी मन ही मन बड़ा एहसान महसूस करता है। इन लोगों के सामने लायली बोली, 'कुन्दन कोई बच्चा नहीं है।' लायली जैसे पलभर में ही कुन्दन और बजरंगी की अपनी बन गई। आँखें उठाकर बजरंगी उसे बस एक पलक देख लेता है। वह सामने की तरफ देख रही है। आँखों की निगाहें फिर उसी तरह। वह क्य सोच रही है, समझ में नहीं आता।

निसार ने जैसे कुछ ध्यान नहीं दिया। वह खुश होकर बोल उठता है, 'कुन्दन बड़ा ही दरियादिल है, भई। वह यह सब कुछ नहीं सोचता। अरे मुझे ही क्या बात-बात में कम रुपये देता है? लायली तो मुझे डाँटती है। बोलती है, निकाल बाहर करूँगी, दूर भगा दूँगी। उस समय कुन्दन ही तो मेरा अपना बन कर दो चार बातें करता है।'

कुछेक क्षण पहले ही, शिरीन रोयी है। उसकी ठुड्डी काँप उठी, नाक का शिरोभाग फूल गया। वह उबल-उबल कर बोली, 'मैं क्या कुन्दन को बुरा कहती हूँ? कुन्दन तो शरीफ आदमी है लेकिन उससे रुपये क्यों लेते हो निसार? मैं क्या तुम्हें रुपये नहीं देती?'

'दोगी क्यों नहीं? देती ही हो। लेकिन जब खर्च हो जाता है,

तब मैं क्या करूँ, बताओ तो। इसके अलावा, समझे बजरंगी, शिरीन में सब कुछ अच्छा है। सिर्फ जब तब प्यार की बातें सुनाना चाहती है, यही बात जो कुछ मुश्किल है। नहीं तो, शिरीन की तरह औरत तुम्हें कहीं भी नहीं मिलेगी। रस भरा चेहरा गाना भी जानती है, कबाब और कलेजी भी बनाना जानती है। इधर मुझसे बाजी लगाकर शराब भी पीती है, और फिर सुबह होने पर पीर-फकीर को बिना दान दिये पानी भी नहीं पीती।'

शिरीन सभी की ओर देखती है। किसे पता, निसार मजाक कर रहा है या प्रशंसा कर रहा है।

'शिरीन यदि मुझे थोड़ा, बस एक रत्ती कम प्यार करे तो क्या अच्छा न हो!'

'बाबा, कितनी बड़ी भूल की है मैंने निसार तुम्हें प्यार कर के?'

अब शिरीन को बजरंगी का ख्याल नहीं है। वह फिर उबलती है और दो बूँद आँसू गिराती है। बजरंगी तैयार नहीं था। निसार नये जोश के साथ बातें करने लगता है।

'भूल के बारे में ही तो कह रहा था। भूल सभी कर रहे हैं। हम, तुम, सभी कोई।'

'फिर शुरू हुआ? निसार कितनी बकबक आज तुम कर रहे हो?'

'क्यों लायली, तुम मुझे रोक क्यों देती हो? मैं उसी समय से यह बात कहने की कोशिश कर रहा हूँ। बजरंगी को तो इसीलिये पास बुला रहा था। वह बहुत समझता-बूझता है। उसके साथ बातें करने में सुख मिलता है।'

'बोलो।'

'मैं कह रहा था, हम सभी भूल करते हैं और झूठ-मूठ एक दूसरे को अपने में बाँधते हैं।'

'माने समझा देना।'

'बजरंगी, देख लो। लायली सोचती है कि वह बड़ी चालाक है।

ऐसा मत सोचो कि वह गलती नहीं करती।'

'मुझे मत घसीटो। मैंने क्या किया है?'

'लायली, हम और शिरीन, और हम लोगों का यह प्यार, इन सबों में शुरू से आखिर तक भूल भरी पड़ी है। मैं उसे प्यार नहीं करता लेकिन उसे छोड़ने के लिये राजी भी नहीं हूँ। समय पर खाना पाता हूँ, शराब मिलती है, जेब में पैसा, साफ बिछावनी, कौन भला छोड़कर जायेगा भई? इसमें यदि तुम मुझे बुरा समझो, तो मेरा ठेंगा।'

शिरीन पान खा रही है। अभी वह कुछ अटपटे शब्द उच्चारण करती है। लायली बोलती है, 'रुको शिरीन। निसार ने बड़ी अच्छी गप जमा रखी है।'

लायली का समर्थन पाकर निसार उछल पड़ता है और एक गिलास शर्बत मुँह में उँडेल कर अटक जाने से हिचकियाँ लेकर और खाँसकर बोलता है, 'गप? गप क्या? ये सब मूल्यवान सत्य है। जिसे जीवन देकर पाया हुआ कहते हैं। बड़े ही कष्ट से एक-एक को निचोड़ लेना।'

'बोलो।'

'शिरीन मुझे प्यार जरूर करती है। लेकिन उस प्यार के बीच में भी एक बहुत बड़ी फाँक है।'

'इसके क्या माने? अरे बेईमान, इसके क्या माने है?'

'शिरीन तुम मुझे बहुत ज्यादा प्यार करती हो। इतना प्यार करती हो कि मुझे आँख के ओझल होते देखकर ही मुझपर शक करती हो, मैं कहाँ जाकर बैठा हुआ हूँ। मैं वैसे तुम्हें सचमुच में कोई दोष नहीं देता। क्योंकि उम्र होने पर उस तरह का संदेह मन में होगा ही।'

'फिर उम्र का उलाहना देते हो?'

'नहीं भई, उलाहना कहाँ दे रहा हूँ? यही थोड़ी आलोचना करने की कोशिश कर रहा हूँ। दो-दो औरतों के साथ आलोचना करना

काकातुश्रा के साथ श्रालोचना करने के ही बराबर है। श्रौरतों को तो युक्ति बुद्धि की जरूरत नहीं। कहना चाहता हूँ, यही हमारे तुम्हारे सुख का घर, उस घर में काँच की झिलमिली लगाओ या फूल की झालर ही क्यों न झुलाओ, उस घर मे सुख नहीं मिलेगा।'

'इसका कारण तुम्हीं हो, रे बेईमान।'

'फिर वही अरसिक जैसी बातें? तुम्हारे साथ तो मैं बातें नहीं कर रहा हूँ। सुनो बजरंगी, तुम्हारे लिये सुनना जरूरी है, हम लोगों के प्यार की यह मंजिल सुख शांति की क्यों नहीं है? इसका कारण है कि हम दोनों शुरू में ही भूल कर बैठे हैं। तुम्हारा यह प्यार, जीवन व मरण मैं कभी नहीं भूलूँगा, ये सारी बातें सभी बर्बादियों की जड़ हैं। समझे बजरंगी, मैं भी जानता हूँ कि इसका नाम मुहब्बत नहीं, वह भी तो जानती है फिर भी हमलोग प्यार, प्यार खेलते हैं। मैं एक परले दर्जे का शैतान हूँ, उसकी बात भले ही अलग है।'

'लायली, तुम फिर निसार को चुप रहने को कहोगी या नहीं, बोलो?'

'बातें करने की लालच में वह फिर तुम्हारे घर भागा आयेगा। तुम फिर पसीना पसीना होकर हाजिर होओगी।'

'बजरंगी?'

'निसार साहब!'

'देखो, शिरीन बड़ी अच्छी औरत है।'

'जी।'

'उसे शादी करना चाहिये था।'

शिरीन और लायली दोनों ने निसार को डाँटा। निसार बिलकुल निडर बना रहा।

इतने दिनों में तो वह नानी-दादी बन जा सकती थी। अब सवाल यह है कि मुझे लेकर वह बहुतेरे प्यार की इच्छा मिटाना चाहती है। पति जैसा प्यार करेगा, बेटा जैसा प्यार करेगा, और फिर दिन में दस

बार आकर कबूल करा लेगी कि कलकत्ता शहर में ऐसे दूसरे आदर्श आशिक-माशूक नहीं हैं। क्यों बाबा, मैं अकेले-अकेले सबकी हाजिरी क्यों दूँगा ? मैं क्या कोई जादुई हरी गोली हूँ ? एक गोली मुँह में रखते ही भीतर बाहर सुख-शांति उछलने लगेगी ? ऐसा भी क्या भला होता है ?'

लायली चुपचाप। हताश होकर शिरीन पनबट्टा खोलती है और एक पान निकालती है। बजरंगी घबड़ा गया है, लेकिन न सुनने का भी कोई उपाय नहीं है।

प्यार की शर्त न रहने से हमलोग बड़ी अच्छी तरह रह सकते। यह शिरीन को कौन समझायेगा ? अब तो कदम-कदम पर डर लगता है। घर में जाने कहाँ-कहाँ से चुन-चुन कर वृद्ध नौकरानियाँ ले आयी है। मामला क्या है, जानते हो ? सभी यदि बूढ़े हों तो आप मेरी ओर से निश्चिन्त रहती हैं। आप अपने आप को बड़ी कमसिन समझती हैं। इसके अन्दर भी पेंच है, बजरंगी शिरीन बाई देखने में जितनी-सीधी सादी लगती हैं, उतनी सीधी नहीं हैं।

लायली जाने क्या सोच रहा है। घुटनों पर मुँह रखकर वह दूसरी तरफ देख रही है। लायली बोलती है, 'इतनी सारी बातों में कौन-सी बात चुन लूँ निसार ?'

'कौन-सी बात चुन लोगी ? कौन फूल तोड़ लूँ भई, कौन-सा मुक्ता पहचान कर लूँ ? वह बात कितनी अच्छी तरह बोली हो तुम, लायली।'

'वाह, कितना बक-बक कर सकते हो, निसार।'

'असल बात ही तो तुम लोगों को बताने की कोशिश कर रहा हूँ। हम सभी 'भूल' लेकर रहते हैं ! तुम्हारे और शिरीन के जीवन में यदि भूल का पहाड़ खड़ा हो गया है तो संसार भर को भूल-भ्रान्ति में भटकता हुआ क्यों समझते हो ? तुम दोनों जने बेवकूफ हो। संसार में सभी तो वेवकूफ नहीं हैं।'

धीरे और शांत कंठ। बजरंगी धीरे-धीरे मुँह उठाता है। इन लोगों की ओर वह नहीं देखेगा। निसार, शिरीन, इन लोगों को वह देखना नहीं चाहता। वह केवल एक बार लायली को देखेगा। लायली की बातों ने उसे हैरत में डाल दिया है।

लायली की तरफ वह नहीं देखेगा। क्यों देखेगा? इस आईना में ही तो लायली को देखा जा सकता है। उतना भर देखना ही बजरंगी को अच्छा लगेगा। लायली ढुन्दन के साथ बातें करेगी, हँसेगी। लायली गाना गायेगी, नाचेगी। बजरंगी केवल बीच-बीच में मुँह उठाकर आईना में उसकी परछाँई देख लिया करेगा।

लायली दूसरी तरफ देख रही है। लायली की आखों के नीचे कालापन। वह जैसे चिंता में डूबी हुई है। इतनी चिंता क्यों?

'निसार, काम के संबंध में तुम्हारी बातों की कोई कीमत नहीं। बस केवल एक निरर्थक आवाज जो सुनने में अच्छी लगती है, लेकिन उन बातों में कोई वजन नहीं।'

'बोलो लायली!'

'इन्सान की बातों में आश्चर्यजनक शक्ति है। ठीक तरह से व्यवहार करना जानने से एक ही बात की सहायता से हाँ को नहीं में बदला जा सकता है। तुम हमेशा सजा-बजाकर बातें करते हो। तुम्हारी बातें जैसे मुलम्मा किये हुए सस्ते जेवर हों। देखने से लगता है, जैसे बड़ी कीमती हो। असल में कोई कीमत ही नहीं। देखो निसार, दूसरा कोई यदि ये बातें कहता तो मैं सब मान लेती तुम्हारी बातें क्यों कर मानूँ?'

'लायली मैं सच्चाई जानता हूँ। इसलिये बुरा नहीं मानूँगा।'

'जानते हो! क्या जानते हो?'

'जानता हूँ, तुम भी एक बहुत बड़ी भूल को पनाह दे रही हो। अपने साथ झूठा व्यवहार करती हो। सच को मान लेने में क्या इतना डर लगता है?'

'निसार!'

लायली चीख उठी। बजरंगी ने फिर मुँह उठाया। निसार क्या बोलना चाहता है ?

लायली की आँखों में डर। लायली की आँखों में प्रार्थना। निसार ने उसकी आँखों की ओर देखा। इसके बाद जैसे कुछ मुस्कुराकर निसार उसे धीरज देता है।

निसार सिर हिलाता है। लंबी साँस छोड़ता है। इसके बाद कहता है, 'चलो शिरीन। रात हो गई है। घर चलें।'

शिरीन और निसार उठ पड़ते हैं और बाहर निकल जाते हैं। लायली एक बात भी नहीं बोलती।

उस दिन रात हवा ने कितना ऊधम मचाया था !

खिदिरपुर की बागानबाड़ी के झौवां गाछों में सों-सों आवाज। भीषण, अबाध्य हवा गाछों को हिलाना चाहती। डेवढ़ी के घड़ी-घर की घड़ी की आवाज नहीं सुनाई पड़ती। उस रात घर की बत्तियाँ एक-एक कर बुझ गयीं ?

खाट पर बजरंगी बाहर ही सोया था। उसे नींद नहीं आयी। वह बड़ी देर तक अंधेरे की तरफ देखता हुआ लेटा पड़ा रहता है। इसके बाद उठकर चहलकदमी करता है।

निसार की बातों से लायली क्यों डरी ? लायली कौन-सी भूल को पनाह दे रही है ? अपने साथ क्या झूठा व्यवहार करती है ? कितनी भयानक बातें ? लेकिन होगी सच ही। सच यदि न हो तो फिर लायली डरी क्यों ?

लायली से वह भी डरने लगा है। अकेले लायली के साथ रहने में उसे डर लगता है। अपने आप के पास बजरंगी जैसे थोड़ा-थोड़ा अनजान हो जाया करता है। आज दोपहर में लायली ने उसे नहीं बुलाया। शाम में एक बार बुलाया। वह भी निसार के कहने-सुनने पर।

लायली जैसे बड़ी शांत, बड़ी उदास।

बजरंगी धीरे-धीरे आगे बढ़ जाता है। गाछ में उठंगकर खड़ा होता है। ऊपर की तरफ देखता है।

हरे रंग का बड़ा जंगला। जंगले में सींकें नहीं। अंधेरे में शर्म भी नहीं। अंधेरा जो सारी शर्म ढँक देता है। यह जो बजरंगी अभी यहाँ खड़ा है, यह भी तो बेशर्म की तरह देख रहा है। अंधेरे ने ही उसे छिपा रक्खा है। नहीं तो यह कितनी शर्म की बात होती। संभवतः तब बजरंगी खुद ही अपने आपको देखकर चमक उठता।

'गुनगुन शब्द! लायली क्या रो रही है? इतनी रात गये अकेली, अकेली? नहीं, रो तो नहीं रही है! रो नहीं रही है, गाना गा रही है। 'लगता नहीं है जी मेरा, लगता नहीं है जी मेरा,' एक ही पंक्ति घूम फिरकर गा रही है। आहिस्ते-आहिस्ते, अपने ही मन में।'

शमादान की रोशनी। अब तो हवा तेज नहीं। बत्तियों के बुझने का डर नहीं। इसीलिये शायद एक बत्ती लेकर लायली चल फिर रही है।

बत्ती चल फिर रही है। यहाँ से लायली दिखाई नहीं पड़ती। वह धीरे-धीरे कमरे के इस तरफ से उस तरफ चल फिर रही है। उसे भी नींद नहीं आयी है। इसीलिये शायद चहलकदमी कर रही है। बजरंगी लायली के साथ एक गाढ़ा अपनापन महसूस करता है। वह देखती रहती है।

धीरे-धीरे पूर्वी आकाश साफ होता है। बजरंगी उस समय भी खड़ा रहता है।

काफी देर तक वह सोया रहता है। आँखें जल रही हैं, सिर भारी हो गया है। सोये-सोये एक बार थकावट में उसकी आँखें बंद होने लगती हैं, लेकिन जबर्दस्ती वह अपनी आँखें खोलता है।

भीम! भीम होंठ पर उँगली रखता है और उसे खींचकर उठाता

है। कहता है, 'उस मकान में बहुत बड़ी बात हो गई है, रे! जल्दी चलो।'

'क्या हुआ है?'

बजरंगी अपने परिवर्तन से ही हैरान है। कल तक ऐसी कोई बात होने पर क्या वह, 'क्या हुआ है' जानने के लिये बेताब होता? आज जैसे जीवन की कोई भी आकस्मिकता उसे विस्मित नहीं कर सकेगी।

वह शांत कंठ से बोला, 'चलो चलता हूँ।'

भीम जो कुछ बोला, वह सुनकर भी वह कुछ भी नहीं समझ सका। भीम बोला, 'कुन्दन को खाने में शायद किसी ने जहर दे दिया है।'

बाईस

कुन्दन के घर में जैसे प्रलय मच गया है। चिरंजीलाल की लाश जिस दिन मिली, बाबूलाल जिस दिन मरा, उसके बाद इतना बड़ा सर्वनाश जैसे कभी नहीं आया था। काशी में गणेशीलाल वगैरह ने कुन्दन की जान लेनी चाही है, उसके पीछे मुक्तेश्वर गुण्डा लगा है। लेकिन यह सब जैसे उतना अप्रत्याशित नहीं।

उस दिन कुन्दन इतना हैरान नहीं हुआ था।

वे सब तो कुन्दन को मारना ही चाहेंगे, यह तो जानी हुई बात है। उन लोगों के विरुद्ध होशियार रहा जा सकता है। लेकिन अब वह क्या करेगा? किस पर संदेह करेगा?

इन कुछ दिनों से कुन्दन के कमरे में उसके परिवार वालों का बराबर आना जाना लगा रहता है जब खुशी हुई है, वे सब चले जाते हैं। माँ, दादी, भाई, भतीजा, भतीजी, आश्रित, सगे-सम्बन्धी, सब आते जाते रहते हैं। बारहों महीने कुन्दन उन लोगों को अलग-अलग रख-कर चलता है। उन लोगों के साथ उसका कोई भी सम्बन्ध नहीं है।

घर के अन्दर पूजा-पोथी व भागवत-पाठ, रामायण-पाठ, बार-व्रत लगा ही रहता है। भिश्ती पानी भरता है। दासियाँ बर्तन माँजती हैं, कपड़ा साफ करती हैं। आश्रित रिश्तेदार स्त्रियाँ तरकारी काटती हैं, मैदा सानती हैं, बेसन उबालती हैं। कोई चीनी के शीरा में कुमढ़े का मुरब्बा बनाती हैं।

कोई गोपाल की पत्नी के केश में कंघी कर देती हैं। हाथ-पाँव की मैल घिसकर साफ करती हैं। कोई कुन्दन की दादी के पैर दबा देती हैं, कुन्दन की माँ के साथ-साथ रहती भी हैं।

शायद कुन्दन सभी को पहचानता भी नहीं।

इस बार की दुर्घटना के बाद उसका मन जैसे कुछ बदल सा गया है। उसकी माँ बोलती है, 'सभी आना चाहते हैं। तुम्हारी भयाहू की ताई कहती हैं, एक बार उसे देखूँगी। जेठी की लड़की देखने में बड़ी अच्छी है रे! ठीक यशोदा की तरह।'

'बहुत अच्छा, आने दो!'

'गोपाल की लड़की तुम्हारे लिये मलहम गरम कर देती है।'

'बाबा, वह कितनी बड़ी हो गई है?'

'देखोगे उसे?'

'लाओ तो एक बार!'

फिर सभी बीच-बीच में आते।

कुन्दन की माँ बार-बार पास आकर बैठती। बोलती, 'ये सब तुम्हारे अपने आदमी हैं। ये सब तुम्हें जितना प्यार करते हैं, उतना क्या कोई पराया कर सकता है?'

कुन्दन ने उसे रोका भी नहीं। बेमन से उसने माँ की बातें सुनी। सोचा 'जो मन आये बोले!'

इसी बीच की एक घटना।

घर में घुसकर बजरंगी सीधा कुन्दन के कमरे में आ जाता है। कुन्दन एक लाठी लेकर चहलकदमी कर रहा है। कुन्दन कहता है,

'दरवाजा बन्द कर लो।'

बजरंगी दरवाजा बन्द कर लेता है।

'जरा करीब आओ।'

बजरंगी कुन्दन के पास जाता है। कुन्दन बोलता है, 'मेरी चौकी वाली दराज खोलो तो!'

चौकी में एक ताला बन्द दराज। कुन्दन वहाँ अपनी बहुत जरूरी चीजें रखता है। उसे बिना मारे कोई दराज खोल नहीं सकेगा।

बजरंगी दराज खोलता है। हैरान होकर देखता रहता है। बोलता, है, 'मालिक, समझ नहीं पा रहा हूँ कुछ।'

दाँतों में उँगली दबाये पता नहीं वह क्या सोचता रहा। इसके बाद फिर कहता है, 'टोना किया गया है। लेकिन ऐसा काम कौन कर सकता है, तुम कह सकते हो?'

एक ढक्कन। उसमें एक केला, माँग में लगाने वाला सिंदूर, एक छोटा सा आईना।

'अंदर देखो।'

सिंदूर से टिपा हुआ और भी एक ढक्कन। एक कपड़े की बनी हुई गुड़िया, उसके गले में बँधा हुआ लाल सूत। सूखा हुआ उड़हुल का फूल, केला, एक छोटी सी लोहे की नहरनी।

कुन्दन बोलता है, 'यह सब देखकर मुझे थोड़ी भी चिंता नहीं हुई है रे। लगातार ही हर शनिवार को देखता हूँ कि ये सब चीजें फर्श पर पड़ी हैं। किसी से भी कुछ नहीं बताया। दराज में रख दिया है। सोचा है, घर में औरतें शायद कोई पूजा पाठ कर रही हैं। लेकिन वह? जंगले से बाहर तो देखो।'

जंगले के बाहर चौड़ी कार्निश। वहाँ ऊपर दो आदमी पास-पास चल सकते हैं। उस कार्निश पर एक बिल्ली पड़ी हुई है।

'इसे भी तो यों ही नहीं उड़ा दे सकता। रात में मेरी आँखों में नींद भरी। जैसे किसी ने आकर कहा, दूध। मैंने कहा, रख जाओ। लगा

जैसे किसी औरत की आवाज हो। मैंने कल ब्राँडी पी थी। मेरी दोनों आँखों में नींद भरी थी। सुबह जाने क्या मन में आया, बिल्ली के सामने दूध ढाल दिया। विश्वास नहीं करोगे, बीस मिनट के अन्दर ही वह मर गया।'

'उसे फेंक देना जरूरी है, मालिक।'

'उसे फेंक देना होगा, कमरा भी साफ करवाना होगा।'

'किसने ऐसा काम किया, इसका पता क्या नहीं लगाया जा सकता ?'

'नहीं।'

कुंदन चीख उठता है। वह जैसे डर गया है। बोलता है, 'नहीं, नहीं, पता नहीं लगाना होगा!'

'किसने ऐसा काम किया, मालिक ?'

'चुप रहो!'

हठात् कुंदन एक काण्ड कर बैठता है। बजरंगी को एक तमाचा मारता है। बोलता है, 'किसने किया ? बेटा, मूर्ख कहीं का! दीवार के भी कान होते हैं, यह नहीं जानते ?'

बजरंगी का हाथ पकड़कर कुन्दन जंगले के पास ले जाता है। बोलता है, 'पता लगाने को कहते हो! पता लगाने से ही क्या जान जाऊँगा रे ? खोजबीन करने से, किन लोगों के बीच खोज बीन करूँगा ? यदि जान पाऊँ कि मुझे मारने की इच्छा रखने वाले मेरे अपने ही....।'

कुन्दन अपनी बात खतम नहीं करता। लाठी की मूँठ जोर से पकड़कर पता नहीं क्या सोचता रहता है। इसके बाद जैसे अपने आपको कहता है, 'होगा! इसी तरह मरना होगा। इस तरह नहीं तो क्या रुई भरी तोशक पर सोये-सोये मरूँगा ? हुँ, हुँ, ऐसा भाग्य लेकर इस जन्म में नहीं आये हो। मैंने खुद को अलग कर लिया था, सब पर विश्वास किया था।'

बजरंगी दरवाजा खोलता है।

घर में बिल्ली मरी है, यह सोचकर कुन्दन की दादी शायद नमक की समाधि देने की बात कहने आ रही थी, लेकिन बजरंगी का चेहरा देखकर चुप रह जाती है।

बिल्ली, दूध, गिलास और खाने-पीने की चीजें, राख की ढ़ेर में बड़ा सा गड्ढा खोदकर भर दी जाती हैं। दोनों ढक्कन को कपड़ा में बाँधकर बजरंगी गंगा में फेंक आता है।

कुन्दन का कमरा साफ करता है। कुन्दन नहाता है। बजरंगी उसे शरबत बना कर देता है और अपने कमरे में जाकर बैठता है।

अचानक गहनों की झन्-झन् सुन पड़ती है। गहनों की आवाज, साड़ी का खस-खस, बहुत से आदमियों के पैरों की आवाज।

जैसे एक शोभा-यात्रा आ रही हो।

देव-मन्दिर में प्रसाद लेने जाने के ढंग से एक ढँकी हुई थाली। गोपाल की पत्नी ने सिर पर उठा रखी है। चेहरा घूँघट में ढँका हुआ है। हाथ में, गले में, सिर में, पैरों में कितने ही जेवर। सफेद साड़ी का आँचल मिट्टी में लोटाती हुई कुन्दन की माँ आ रही है। उसके हाथ में भी एक थाली है।

गोपाल की मासूम बच्ची भी कुन्दन की दादी का हाथ पकड़े आ रही है। उसके हाथ में भी एक चौकोर चाँदी की थाली है।

कुन्दन दिन में नहीं खाता है। गोपाल की पत्नी जेठ के सामने नहीं पड़ती। लेकिन आज जैसे सब कुछ उलट-पलट गया है। आज मानो गोपाल पर विपत्ति का पहाड़ टूट पड़ा है। आज नियम मानने से नहीं चलेगा। सबको कुन्दन के पास जाकर रो देना पड़ेगा। विश्वास करो, हम लोगों पर विश्वास करो। हम लोगों ने तुम्हें जहर नहीं दिया है। आज बजरंगी की भी उपेक्षा नहीं की जा सकती।

गोपाल बजरंगी की तरफ देखता है। कहता है, 'भैया ने कल रात से नहीं खाया है। ऐसे तो परसों रात के बाद फिर खाना ही नहीं

हुआ।'

कुन्दन की माँ, दादी, गोपाल की पत्नी, गोपाल की बेटी, उनमें से कोई भी बजरंगी को नहीं देख सकीं। सीधे कुन्दन के कमरे में चली जाती हैं।

बजरंगी के मन में केवल एक ही बात आती है।

उन लोगों के इस अपनेपन का काश एक तिल भी सच होता! ढोंग केवल ढोंग! हो सकता है कि जहर इन लोगों ने न दिया हो, किसी दूसरे ने दिया हो। फिर भी यदि जहर खाकर कुन्दन मर जाता है तो ये सब तीन दिनों में ही शोक भूल जायेंगे। जरा भी अफसोस नहीं होगा।

कुन्दन मरा नहीं, बचा हुआ है। इसलिये उद्वेग दिखाना होगा, अपनापन दिखाना होगा। कुन्दन के असंतुष्ट हो जाने से बहुत बड़ी विपत्ति आयेगी। यह जेवर की रुमुझुन, फिर इस तरह नहीं बजेगी। शरीर की चमड़ी तक नहीं दिखती, इतना सोने का गहना। मिट्टी में आधो लोटा दी जाने वाली रेशमी साड़ी, यह सब तो उसी आदमी की बदौलत है।

बजरंगी को दुःख होता है। कुन्दन बड़ा ही अभागा है। सब कुछ उसे खरीदना पड़ता है। गहना, कपड़ा और बहुतेरे आराम की चीजों को घूस देकर, उसे घरवाली की माया-ममता ख़रीदनी पड़ती है। इनकी सभी तरह की खुशी पूरी करके तब लायली का प्यार भी खरीदना पड़ता है।

गोपाल आकर खड़ा होता है।

कुन्दन के हाथ में लाठी की मूँठ। कुन्दन खड़ा है। उन लोगों का देखता है।

वे सब खड़ी होती हैं। किस तरह भीतर जाएँगी, किस तरह बातें करेंगी, जैसे सब कुछ सीख-पढ़कर ही आयी थीं। लेकिन लग रहा है कि इन बातों का असर कुन्दन पर नहीं हो सकेगा।

कुन्दन एक-एक आदमी की तरफ देखता है।

उसकी आँखें लाल और उन आँखों में दर्द। जिसकी आशा नहीं थी, वैसा आघात उसने पाया है। पर किसने यह दिया है?

माँ! एक समय इस महिला के प्रति उसमें जाने कितना आकर्षण था। माँ नफरत करती। दूर न भगाती, लेकिन बार-बार ठुकराती। ससुर से उसे आघात मिला था, वह उसी आघात का बदला ले रही थी।

एक दिन ससुर और बहू के हार जीत की वह बाजी खतम हो गयी। उतने दिनों, कुन्दन के दिल पर एक मजबूत परदा पड़ा रहा। माँ पर उसे बहुत अधिक गुस्सा है। आज कोई नई बात नहीं है। आज तक भागा-भागा फिरा है। आज क्यों पास जाये?

वह गुस्सा जाने कब उदासीनता में बदल गया, यह कुन्दन नहीं जानता। रूखे-सूखे बाल, दुबला-पतला गोरा शरीर, बात और काम में मेल नहीं। इस महिला से वह पूछ सकेगा क्या? नहीं। नहीं पूछ सकेगा। माँ तुमने ही मुझे विष दिया है। यह बात वह नहीं पूछ सकेगा?

तब फिर, क्या गोपाल ने?

गोपाल की तरफ उसने देखा। उम्र का अंतर चाहे जितना हो, उसे हमेशा से छोटा, बहुत छोटा, कुन्दन ने समझा है। जितना भी पाप हो, मुझे लगे, तुम लोगों को उसकी आँच तक नहीं लगेगी।

हाँ, कुन्दन ने बहुत पाप किया है।

गोपाल तो बुद्धिमान है, शान्त व स्थिर है। बड़े-बड़े बाल-बच्चों का बाप है। सुरीले सुर से 'रामचरितमानस' का पाठ करता है। उसे सभी चाहते हैं। कुंदन जानता है कि उससे ज्यादा उसकी माँ और दादी उस पर ही भरोसा करती हैं।

तुमने मुझे विष देना चाहा था। यह बात पूछना बड़ा ही कठिन है।

और वह तो पत्नी को ले आया है, बेटी को भी ले आया है। और यदि भाई, भाई को जहर ही दे तो क्या वह यह बात बता भी सकता है ? भैया, तुम्हें रास्ते से हटाने के लिये टोना कर रहा था, इतने दिनों बाद विष भी दिया। यह बात भी भला कोई बताता है ! कुन्दन ने सिर हिलाया।

वे सब खाना सामने रखती हैं। गोपाल आकर उसका हाथ पकड़ता है।

'परसों रात के बाद से अभी तक खाया नहीं। आओ, खा लो, आओ।'

कुन्दन देखता रहता है। वही गोपाल है। स्वर्गीय चिरंजीलाल जी मिश्र की प्याऊ पर बैठा रहता। घर में गाय और बछड़े। एक दिन गाय के पेट के नीचे दूध पीने गया था।

विश्वास करने की बात नहीं।

सगे भाई के सामने मन खोलने से भी नहीं चलेगा। ओ गोपाल, मैंने कब से कमर में बिछुआ बाँध रखा है। अब उतारना चाहता हूँ। इन्सान पर विश्वास करना चाहता हूँ। मरने से मैं नहीं डरता। बाबूलाल का मैं पोता हूँ। बिछावन पर सोये-सोये तो मरूँगा नहीं। एकदम मार दिया जाऊँगा या फाँसी पर चढ़ूँगा। इससे क्या घर के अंदर भी तुम लोगों पर विश्वास नहीं कर पाऊँगा ?

कुन्दन एक लंबी साँस छोड़ता है।

'खाना उठाकर ले जाओ। एक बार रात में खाता था, अब वह भी छोड़ दिया।'

वह धीरे-धीरे बिछावन पर बैठ कर पाँव फैला देता है। बोलता है, 'मैं किसी को कुछ भी नहीं कहता हूँ। बस इस घर में नहीं रहूँगा। चला जाऊँगा।'

'मैं भी तुम्हारे साथ जाऊँगी।'

कुन्दन की दादी खूब जोर देकर बोलती है। मन से जोर नहीं पा

रही है। और कुन्दन जैसे सुनकर भी नहीं सुनता है।

'अकेले बजरंगी के रहने से ही मेरा काम चलेगा।'

उसकी माँ, दादी सब एक दूसरे का मुँह देखती हैं। इसके बाद गोपाल धड़ाम से कुन्दन के पैरों पर गिर पड़ता है। कहता है, 'तुम्हारे नहीं खाने से मैं, पत्नी, बाल-बच्चों को लेकर उपवास करके मरूँगा।'

दादी काँपती हुई आवाज में बोलती है, 'इतनी बड़ी विपत्ति के समय तुम बच्चों की तरह क्यों जिद कर रहे हो? तुम्हारे पास ही तो हम सब भागे आये हैं।'

उसकी माँ सिर हिलाकर सम्मति जताती है।

'आगे तो महाराज रसोई बनाता था, अब से मैं ही बनाऊँगी। आज मैंने ही तुम्हारे लिये रसोई बनायी है, कुन्दन। बैठो, आसन पर बैठो। देखो गोपाल की पत्नी का मुँह सूख गया है।'

'आप लोग मेरे लिये कष्ट न करें!'

'तुम्हारे न खाने से हम लोगों का भी उपावास रहा।'

कुन्दन क्षण भर सोचता है। इसके बाद बोलता है, 'खाना रहने दें। आप लोग जायँ।'

उन लोगों के चले जाने के बाद बजरंगी उठकर आता है। बोलता है, 'मैं थोड़ा खाकर देख लूँ।'

'देखकर क्या मरोगे?'

'मरना ही होगा तो मरूँगा।'

'नहीं। एक दिन न खाने से भला क्या होता है रे? मान लो कि आज मेरा शिवरात्रि का उपवास है। बीच-बीच में उपवास न रखने से क्या कहीं तन्दुरुस्ती ठीक रहती है?'

सो कुन्दन ने नहीं खाया।

गोपाल ने इतनी आसानी से बात नहीं खतम होने दी। वह नौकर नौकरानियों को बुलाकर जिरह करता है। कुन्दन के पास आकर कहता है, 'मेरी नाक कट रही है। लोग मेरी बदनामी करेंगे!'

'तुम यदि अपने मन से अपने को निर्दोष समझते हो तो फिर लोगों की बातों का डर क्यों ?'

'डर ? इतनी बड़ी बदनामी से भी क्या नहीं डरूँगा ?'

'नहीं। यदि अपने आपको निर्दोष समझते हो तो डरना नहीं चाहिए ? और फिर बात क्या है, जानते हो ? मैं जान गया हूँ, किसने मुझे जहर देना चाहा था !'

'जान गये हो ? क्या बोल रहे हो ? भैया, उसे पकड़ो, सजा दो।'

'नहीं, सजा देने से क्या होगा ?'

बजरंगी के कहने पर भी कुन्दन ने नहीं खाया। उसने बता दिया कि वह कल सुबह उस घर जायेगा।

बजरंगी लगभग तीन बजे खिदिरपुर पहुँचा। भूख प्यास का जैसे ख्याल ही न हो। वह नहाता है और महाराज से खाना माँगता है। फिर अपने कमरे में आकर वह खाट पर लेट जाता है।

कितनी देर तक वह लेटा रहा, यह वह नहीं जानता।

सोते-सोते वह जैसे नींद में खो गया। हठात् आँखें खोलने पर वह नहीं समझ सका कि कितनी रात है।

गुलरूख होंठ पर उँगली रखती है, फुसफुसा कर बोलती है, 'रात के दस बज रहे है। साहेबान ऊपर बैठी हुई हैं।'

'धीरे, धीरे क्यों बोल रही हो ?'

'जी, साहेबान ने कहा है।'

खिदिरपुर की बगानबाड़ी के फाटक पर ताला लग गया।

चारों ओर घुला-मिला अंधकार। जुगनू उड़ रहे हैं, हवा बह रही है। नींद तोड़कर बजरंगी उठ गया है। अभी भी आँखों से नींद का जोर नहीं घटा है। गुलरूख उसे ले चली है। उसने जैसे भाग्य के हाथों खुद को छोड़ दिया। लेकिन इस तरह जाने से तो नहीं होगा। बजरंगी लायली के पैरों में सिर झुकाने नहीं जा रहा है। लायली ने

बुलाया है, इसलिये जा रहा है ।

एकाएक बजरंगी रुक जाता है । बोलता है, 'तुम जाओ । मैं अभी आ रहा हूँ ।'

'चलिये, साहेबान बुला रही हैं न !'

दो-तल्ले तक बजरंगी को पहुँचाकर झटपट गुलरुख उतर आती है । बजरंगी अपने मन-ही-मन बोलता है, रोशनी क्यों नहीं है ? इन लोगों ने रोशनी क्यों नहीं जलायी ?

लायली फर्श पर, गलीचा पर, औंधी लेटी पड़ी है । सामने एक बड़ी लालटेन जल रही है । उसे देखकर लायली ने मुँह घुमाया । बोली, 'बैठो ।'

तेईस

बजरंगी चुपचाप कमरे में आकर बैठ जाता है ।

'तुम्हें क्यों मैंने बुलाया है, सुनकर तुम हैरान होगे । शायद मेरे संबंध में तुम एक बुरा ख्याल भी कर बैठो ।'

बजरंगी हैरान होगा ? आज सुबह की बात के बाद भी ? माँ, भाई, आदि के बीच कुंदन है, फिर भी पता नहीं कौन उसे जहर देता है । जो लोग उस कमरे में आते हैं, सब उसके अपने आदमी हैं । फिर भी पता नहीं कौन तंत्र-मंत्र से उसकी जान लेने की कोशिश कर रहा है ।

'नहीं, हैरान नहीं होऊँगा । तुम बोलो ।'

'कहूँगी नहीं । तुम यह कागज पढ़ो ।'

'यह क्या लायली ? यह तो मालिक के नाम की चिट्ठी है ।'

'तुम पढ़ो न !'

'मेरा क्या यह चिट्ठी पढ़ना उचित है ?'

'पढ़ो। नहीं तो कुछ भी नहीं जान पाओगे।'

'छोड़ो भी।'

'तब रहने दो। तुम जब कहते हो तो यही सही।'

लायली चिट्ठी लेकर तकिया की खोल के भीतर रहती हैं। केश बाँध लेती है।

'मैं अब जाऊँ लायली।'

'नहीं, नहीं, जाओ मत! अकेली-अकेली मुझे डर लगता है। इतना घबड़ा क्यों रहे हो? कल रात भले ही नहीं सोये हो, लेकिन आज तो सोये हो।'

'कल रात मैं नहीं सोया हूँ, तुमसे यह किसने कहा?'

लायली उसकी तरफ नहीं देखती है। बत्ती की तरफ देखती हुई फुसफुसा कर बोलती है।

'जानती हूँ, मैं सब जान सकती हूँ।'

'लायली, मालिक कल आयेगा।'

'कल! आना है तो आये। कल नहीं तो परसों तो आयेगा ही, उसे तो रोका नहीं जा सकता।'

बजरंगी के मन में सारी बातें इकट्ठी होकर छा जाती हैं। उसने निश्चय किया था कि वह नहीं बोलेगा, फिर भी बोल उठता है, 'मालिक का यहाँ आना ही तो अच्छा है, लायली। उस घर में रहने से मालिक शायद नहीं बचेगा।'

लायली कुछ भी नहीं बोलती। बजरंगी बोलता जा रहा है। 'मरते-मरते कुंदन बच गया है', यह बोलता है। इसके बाद उत्सुक कंठ से बोलता है, 'लोग कहते हैं, इस तरह की दुर्घटना से बच जाने से मरने का डर नहीं रहता। यह बात क्या सच है?'

लायली का जवाब सुनकर वह हैरान रह जाता है।

'यह तुम क्या कह रही हो, लायली? यह क्या बोल रही हो?'

'सोच कर देखो। मैं झूठ नहीं कहती हूँ।'

लायली कहे जाती है, 'कुंदन के जीवन का वही तो सबसे अच्छा समय है। वह समझता है कि मैं उसे प्यार करती हूँ। तुम उसके लिये जान दे सकते हो। यहाँ तक कि उसके घर वाले भी उसके लिये चिंतित हैं। यह सब विश्वास लेकर यदि वह मर जाता तो उसकी क्या क्षति होती ?'

'लायली', जहर दिया गया है, जानने से शायद उसकी जबान न खुलती। 'लेकिन दिल जो टूट ही जाता। क्षणभर के लिये भी उसके मन में जो शक का जहर घुसता, लायली, उससे वह मर कर भी शांति न पाता।'

लायली की हँसी में फिर बच्चों जैसी सादगी। लेकिन मुँह की कुछ बातें सुनकर शरीर शिथिल पड़ने लगता है।

'क्या बोलते हो बजरंगी ? कुंदन कुछ सोचने का मौका ही नहीं पाता। पलभर में आँखों के सामने अँधेरा छा जाता है। नींद आती है। उस जहर में भी क्या कोई जलन या दर्द है, भला ?'

बजरंगी मंत्र-मुग्ध। कोशिश करके भी आँखें नहीं हटा सकेगा। गोरा रंग, काली आँखें, बिल्कुल काले केश। दक्षिणी हवा में केश डोल रहे हैं। जैसे रात के इस अंधेरे में केश ने आजाद जीवन पा लिया है। इसलिये हिल-डुलकर वे जीवित हो उठे हैं। आँख, केश, कपाल, होंठ में बत्ती की रोशनी नाच रही है।

'जानते हो, बजरंगी, रात ज्यादा नहीं हुई है। शायद साढ़े दस बज रहा है। लेकिन आज यह कैसी तूफानी हवा ? झाड़ झंखाड़, नारियल के गाछों में हवा लग रही है, जिससे ऐसा लगता है कि समुद्र का गर्जन सुनायी पड़ रहा। मेरे नाच घर का दरवाजा धड़ाम-धड़ाम कर टक्कर खाता था, दिल जैसे कैसा सा हो उठा। इसलिये तुम्हें बुलवाया है।'

'लायली, गुलरुख मुझे पहुँचाकर चली क्यों गयी ?'

'उन लोगों को नीचे ही रहने को कहा है।'

'रोशनी क्यों नहीं जलायी है ?'

'मैंने मना किया है।'

'मैं रोशनी जलाऊँ ?'

'क्यों, अंधेरे में डर क्यों लगता है ? रोशनी जलाने से क्या सचमुच अंधेरा भाग जाता है ? क्यों बजरंगी ? अंधेरा जाकर दिल के अंदर डेरा जमाता है। वहाँ घुसकर क्या तुम रोशनी जला सकते हो ? यदि ऐसा नहीं कर सकते तो बकबक मत करो। इतनी सुन्दर तूफानी हवा की रात, सुनसान घर में, अंधेरा मुझे अच्छा ही लगता है। देखो न, देखो ! कैसी नरम-नरम, ठंडी-ठंडी हवा है !'

लायली हाथ बढ़ाकर अँधेरा छूती है। उसका हाथ बिछावन पर ही गिर जाता है। हवा में पता नहीं किसकी गंध।

'लायली, तुमने शराब पी है ?'

'क्या पता, शायद पी हो ! याद नहीं रहती। लेकिन यह सब बात छोड़ो। मेरे दिमाग में एक सवाल चक्कर लगा रहा है। जवाब दे सकते हो ?'

'कैसे कहूँ, मैं कोई पंडित तो नहीं।'

'पंडित ही तो सब कुछ नहीं जानते। ईश्वरलाल रहता तो जरूर ही कोई जवाब देता। वह सभी बातों का जवाब जानता था।'

'क्या बात है, बोलो न !'

'ईश्वरलाल कहा करते थे, मुझमें अनेक, नाना रकम के खून आकर मिले हैं। मेरी नानी थीं, फ्रांसीसी मेम। नाना थे अयोध्या के नवाब के वशंज। मेरे पिता के बारे में माँ ने कभी नहीं बताया। सुना है कि वह माँ के गोत्र के ही थे। बड़े सुन्दर इन्सान। बजरंगी मैं सोच रही थी, मुझमें इतनी जातियों, इतने धर्मों का खून आकर मिला है, उसमें कहीं हिन्दू का भी खून है या नहीं ?'

'लायली, यह सब बात सोचने की क्या जरूरत है ?'

'मेरे नाना के वंश में क्या किसी ने हिन्दू लड़की से विवाह नहीं

किया था ? जानने की इच्छा होती है ?'

'जानकर क्या होगा ?'

'इच्छा होती है, जानने की इच्छा होती है, बजरंगी !'

'इन बातों का जवाब मैं किस तरह दूँगा ? मैं भला क्या जानता हूँ ?'

'बजरंगी, तुम्हें अपने माता पिता के बारे में जानने की इच्छा नहीं होती क्या ?'

'नहीं।'

'सचमुच में इच्छा नहीं होती ?'

'जानने की इच्छा रखकर ही भला क्या होगा, लायली ? भीम कहा करता था कि मेरे माता पिता स्नान करने के समय डूब गये। उस पर ही मन ही मन सच मान कर विश्वास किया है। उससे ज्यादा जानकर क्या होगा ?'

'किसी दिन तुम्हें जानने की इच्छा नहीं हुई है ? किसी भी दिन ?'

'लायली जब मैं बिल्कुल बच्चा था, बीच-बीच में मेरा मन खराब होता था। उस समय सोचता, यह गंगा ही मेरी माँ है। सोचने में बड़ा अच्छा लगता।'

'तुम एक अजीब इन्सान हो, बजरंगी।

'अधिक जानकर क्या होगा, लायली ? जितना जानोगी, उतना ही दुःख होगा। मैं एक साधारण आदमी हूँ, इसी तरह दिन काट लूँगा। बहुत कुछ जानकर दुःख का बोझ बढ़ाने से क्या लाभ ? इतना बोझ लेकर क्या भला चला जा सकता है ?'

'नहीं।'

'इसीलिये तो मैं सोचता ही नहीं। सोचकर क्या लाभ ?'

'फिर भी तो चिन्ता होती ही है। जानते हो, मैंने बहुतों को दुःख दिया है। कठोर चोट पहुँचायी है। अभी वे सब आते हैं।'

'कौन लायली ? कौन आता है ?'

'तुम नहीं जानते, वे सब जो आते हैं।'

'मैं तो यही जानता हूँ कि इस घर में कोई नहीं आता।'

'बजरंगी, तुम बड़े ही बेवकूफ हो। वे सब क्या यह गेट खोलकर, सीढ़ियाँ चढ़, पैदल ऊपर आते हैं?'

'तुम्हारी तो कोई भी बात मैं नहीं समझ पा रहा हूँ।'

'आओ, मेरे साथ आओ।'

लायली उठ पड़ती है। बत्ती हाथ में लेती है। बजरंगी उसके साथ-साथ चल रहा है। कमरा, बरामदा, नाच-घर।

नाच-घर में घुसकर आईना के सामने लायली खड़ी होती है। कुछ तो नहीं, आईना में केवल लायली की परछाईं। बत्ती की रोशनी में मुरझाया सा चेहरा। काली आँखें। 'बजरंगी, मैं अपने इसी आईना में उन लोगों को देखती हूँ।'

'किन्हे देखती हो?'

लायली चिराग रख देती है। उसके पास आती है। इतना पास नहीं आना चाहिये लायली! इतना पास क्या आना चाहिए? दूर रहना चाहिये। दूर से ही थोड़ा देख लेगा बजरंगी। पास आने पर दिल के अन्दर के सब नियम व मनाही मोम की तरह गल जाते हैं।

लायली उसके कंधे पर हाथ रखती है। ठंडा हाथ। पसीने से तरबतर हाथ, फुसफुसाती आवाज। जैसे धीरे-धीरे हवा बह रही है, जैसे रात की हवा में गाछ के पत्ते हिल रहे हैं।

'इसी आईने में वे आकर खड़े होते हैं।'

'कौन सब?'

'मेरी माँ। ईश्वरलाल। अपनी माँ को मैंने भयानक चोट पहुँचायी थी। माँ बातें नहीं करती। माँ की निगाहें देखकर मैं समझ जाती हूँ, जैसे माँ हँस रही है। माँ मेरा दुःख देखकर हँस रही है। ईश्वरलाल हँसता है, माँ हँसती है।'

'लायली, यह तुम्हारी निरी कल्पना है।'

बड़ी ही मुश्किल से यह बात बजरंगी कह सका ।'

'कल्पना ! वही होगी ! दिल में जो बात चोट पहुँचाती है, वही बात शायद आईना में तस्वीर बनकर हाजिर हो जाती है ।'

'यही होता है, लायली, यही होता है ।'

'लेकिन बजरंगी, उन लोगों को मैं प्रत्यक्ष देखती हूँ । वे सब मेरी छाती फाड़कर निकल आते हैं । कहा करते हैं, हम लोगों का दुःख देखकर हँसी थीं ! अब तुम्हारा दुःख देखकर हम सब हँसेंगे । तुम्हें बहुत बड़ी कीमत चुकानी होगी, लायली ।'

'तुम्हारे दिल में इतना दुःख किस बात का है ?'

'है, दुःख है । आओ, और पास आओ । आह, इतने सख्त होकर मत खड़े रहो । पास आओ । मेरी छाती पर कान लगाओ । सब सुन पाओगे ।'

बजरंगी अब अपने वश में नहीं । उसके हाथ में लायली का हाथ । उसकी साँस में लायली की गंध । अब पास आना ही होगा । लायली ! लायली, उसकी नहीं, लायली उसके मालिक की है । मालिक पहले मेरी जान लेगा, फिर तुम्हारी छाती में छूरा भोंकेगा । वे सब मुझे पहले मारेंगे, इसके बाद तुम्हारे पास आयेंगे । लेकिन मालिक कहाँ है ! मालिक का चेहरा भी तो याद नहीं आता ।

ठीक उसी समय नीचे का फाटक खुल गया । डरकर नौकरों का भाग-दौड़ करना । 'चिराग लाओ, मालिक आया है, चिराग लाओ ।'

बजरंगी लायली का हाथ झटक देता है । छिटक कर अलग हो जाता है ।

'लायली, मालिक आया है । लायली !'

लायली के मुँह में जैसे जबान नहीं । मशीन से चलने वाली गुड़िया की तरह उसने चिराग उठा लिया । बाहर निकल आयी ।

बजरंगी पल भर चुपचाप पत्थर की तरह खड़ा रहा ।

इसके बाद टटोल-टटोल कर दियासलाई उठाता है । चिराग जलाता

है। हाथ काँप रहा है। दिल के अंदर जैसे कोई ढेंकी चला रहा है। वैसा ही शब्द हो रहा है।

हाथ में लाठी। एक पैर थोड़ा खींच-खींचकर चलना पड़ रहा है। दूसरे हाथ में एक चिराग।

गंभीर गला। कंठ में उद्वेग। व्याकुलता। 'लायली, लायली, लायली !'

लायली बाहर निकल आयी। हरा दुपट्टा। सिर पर घूँघट।

'आओ कुन्दन, यह जो मैं रही। इस कमरे में आओ।'

'नाच-घर में कौन है रे ? कौन वहाँ बत्ती जला रहा है ?'

'नाच-घर में ? कौन ?'

'बजरंगी तुम ? आवाज क्यों नहीं दी ?'

'सच तो, बजरंगी यहाँ कब आया ? मैं तो जान ही नहीं पायी ?'

लायली की आवाज में मामूली सी हैरानगी। आँखों में अनजानेपन का झीना परदा।

'मैं आया हूँ, सुनकर चिराग जलाने आये हो ?'

'जी।'

'सभी चिराग जला दो। उन सबको बुलाओ। गुलरुख कहाँ है ? जावेदी। उन लोगों को आने को कहो, बजरंगी ! कहो कुन्दन बुला रहा है।'

'लायली, तुमने जरा भी मेरे बारे में सोचा था ?'

'कुन्दन !' लायली उसका हाथ पकड़ती है। नाच-घर की तरफ जाती-जाती बोलती है, 'सारंगी लाओ, बजरंगी ! गुलरुख से आलमारी खोलने को कहो। महफिल जमेगी, कुन्दन आया है।'

'महफिल जमेगी, लायली ?'

'हाँ, कुन्दन। तुम आये हो, महफिल जमेगी। हसूँगी, गाना गाऊँगी, नाचूँगी। तुम जो आये हो।'

हँसते-हँसते उसके हाथ से बत्ती लेकर लायली ने नीचे फेंक

दिया। हँसते-हँसते नाच-घर के शीशे के गुलदस्ते को गिराकर फोड़ दिया। कुन्दन के गले से लिपटकर बोली, 'शीशा फूटने की आवाज, कितनी सुन्दर!'

नाच-घर की बत्तियाँ जलने लगीं। शीशे का गिलास, बर्फ शैम्पेन? लायली जैसे बिना शराब पिये ही नशे में डूबी सी।

'पायल ले आओ, गहने ले आओ।'

लायली ने गहना पहना, पैरों में पायल बाँधी। सारंगी लेकर बजरंगी बैठा। लायली लहँगा फैलाकर सामने बैठी। एक हाथ माथे पर रखकर दूसरा हाथ फैला दिया।

'उनसे पहले कह दिया जाये'

'यहाँ आँसू बहना है मना।'

ग़जल के सुरों में ही रात बीत गयी।

चौबीस

कुन्दन और लायली। लायली और कुन्दन। रोज रात में महफिल। रोज दिन भर आनन्द और उत्सव। उस उत्सव में बजरंगी की पुकार नहीं होती। बजरंगी अपने मन से फुलवारी में घूमता फिरता है। कभी-कभी पास जाकर खड़ा होता है।

'प्याला, मुझे भर-भर कर दो।' गज़ल के सुर उसके कानों में फँस-फँस कर आते हैं। और बीच-बीच में कुन्दन उसे बुलाता है, 'बजरंगी, बजरंगी।'

'मालिक!'

'शराब खत्म हो गयी है। गाड़ी लेकर जाओ।'

'जी।'

बजरंगी शराब ले आता है। नौकर शराब लेकर ऊपर चला

जाता है ।

बजरंगी अपने कमरे में लौट आता है । सारंगी उठाता है । धीरे-धीरे बजाता है, 'लगता नहीं है जी मेरा ।' इतने सुर बजरंगी ने सीखा है, इतने गाने सुना है । कुछ भी याद नहीं आता । बस इसी एक सुर के अलावा जैसे सब सुर वह खो बैठा है ।

लायली शराब पीती है । आँखें लाल, जोर-जोर की साँस । मुँह पर हँसी ।

कुन्दन बोलता है, 'और शराब मत पीओ, लायली ।'

'वाह, शराब नहीं पीने से हसूँगी क्यों कर ?'

'तुम्हारी तंदुरुस्ती खराब होगी ।'

'क्या बोलते हो ? देखो न, जरा भी हाथ काँपता है ?'

'तुम बात नहीं मानतीं ?'

'तुम्हारी बात नहीं सुनती ? तुम्हें छोड़कर मुझे कोई भी प्यार नहीं करता । तुम्हारी बात नहीं मानती ?'

'तुम मुझे, प्यार करती हो ?'

'निश्चय । देखो, मेरी आँखों में देखो ।'

'आँखें तो चुन्नी की तरह लाल हैं, लायली ।'

लायली तालियाँ बजाकर हँसती है, 'सुनो, निसार, तुम सोचते हो, कुंदन चिकनी-चुपड़ी बातें नहीं कर सकता । सो सुनो, वह क्या बोला । कुंदन फिर तो बोलो ।'

'चुनरी की तरह लाल ।'

'फिर बोलो ।'

'तुम क्या पागल हो गयी हो ?

'हाँ जी, हाँ तुमने मुझमें पागलपन पैदा कर दिया है, पागल बना दिया है, इसीलिये तुम्हारे पास इस तरह बँधी पड़ी हूँ, जी ।'

'बहुत अच्छा, यदि मुझे प्यार करती हो तो मेरी बात रखो । और शराब मत पीओ । तुम जो चाहो, वही दूँगा ।'

'जो चाहूँगी, वही दोगे ? नहीं, नहीं कुंदन इतनी बड़ी शपथ न लो।'

'बोलो न क्या चाहती हो ?'

'कुंदन मैं आकाश का चाँद चाहती हूँ।'

'आईने में देखो।'

'आईने में देखूँगी ? नहीं, नहीं, आईने में क्यों देखूँगी। बिलकुल सच्चा चाँद चाहती हूँ।'

'तब तो तुमने मुझे हरा दिया लायली।'

'कुंदन, जो नहीं हो सकता है, मैं वही चाहती हूँ।'

'बोलो।'

'नहीं। नहीं बोलूँगी।'

लायली कुंदन के पास बैठती है। कुंदन के गाल पर उँगलियाँ लरजाती है। बोलती है, 'तुमने तो मुझे सब कुछ दिया है। सब कुछ। कुछ भी बाकी नहीं रखा है। मैं अब और क्यों मागूँगी, कहो तो ?'

'कोई एक असंभव चीज माँगोगी, अभी कहा न !'

'नहीं कुंदन। यों ही मजाक कर रही थी।'

लायली हठात् उठ पड़ती है। बोलती है, 'तुम लोग हँसते क्यों नहीं हो ? निसार, तुम मेरी तरफ इस तरह क्या देखते हो ?'

वह निसार के पास आती है। झुककर बोलती है, 'यह क्या ? तुम्हारी आँखों में यह दुःख की छाया ? क्यों, दुःख क्यों ? नहीं निसार, तुम हँसो। रोना मैं नहीं देख सकती।'

वह जरा-जरा डगमगाती है। ढुलमुलाती आँखों से मीठी हँसी हँसकर बोलती है, 'कुंदन, निसार अभी बच्चा है। हँसना देखकर खुश होता है। हँसी की ओट में रोना सुनकर वह दुःखित होता है। भैया, मेरे छोटे भैया।'

लंबी साँस छोड़कर निसार दूसरी तरफ मुँह फेर लेता है। उसकी भौंहें टेढ़ी, आँखों में चिंता की छाया।

'निसार, मैं तो हँस रही हूँ। फिर भी तुम क्यों दुखी हो रहे हो ?'

'लायली और मत हँसो। थोड़ा बैठो।'

'वाह, बैठूँगी क्यों। देखते हो कुंदन, निसार कविता बनाते-बनाते जैसे बहुत बड़ा कवि बन गया है। भाव देख रहे हो न ? शिरीन तुम उसे डाँटती क्यों नहीं ?'

'लायली, तुझे क्या हुआ है ?'

'क्या हुआ है ? तुम सभी मेरी तरफ क्यों देख रहे हो ? मेरे दिल में कोई दुःख नहीं। जानते हो कुंदन, जानते हो निसार ? सभी को आनंद की महफिल में बुलाया है। तुम लोग महफिल में आये हो। इस समय दिल का दुःख प्रकट नहीं करना चाहिये। यह बड़ी बेअदबी होती है।'

अचानक दो गिलासों के किनारों को एक दूसरे से टकरा-टकराकर टुंग-टांग की आवाज सुनती रहती है। उसके होंठ थर-थर काँपते हैं। वह बोलती है, 'मैंने तो महफिल में बेअदबी नहीं की है। तुम्हीं सब तो मेरी तरफ बार-बार देख रहे हो। मैं हँसती हूँ, गाना गाती हूँ, नाचती हूँ, फिर भी तुम लोग खुश नहीं। तुम लोग अंदर आना चाहते हो। क्यों निसार ? दिल के अंदर क्या किसी को आने देना ठीक है ? ये लोग क्यों मेरे जखमे-जिगर को देखते हैं ? क्यों देखते हो ? जानते नहीं, उस तरह देखना नहीं चाहिए। तुम यदि देखो निसार, तुम यदि देखो शिरीन तब दूसरे भी तुम लोगों के दिल के भीतर आना चाहेंगे।'

लायली दोनों गिलास दे मारती है। हँसती है। उँगली दिखाकर बोलती है, 'अच्छा होगा, बहुत अच्छा होगा। सभी अंदर महल देख लेंगे। बोलेंगे, भई, रोशनी कहाँ, आनंद कहाँ, यही केवल अंधेरा कमरा। उस कमरे में लंबी साँस रोती फिरती है।'

कुंदन हैरान होकर देखता है। धीरे-धीरे फँसे गले से बोलता है, 'लायली तुम्हारे महल के अंदर भी क्या लंबी साँस व रोना है ?'

को दोनों हाथों से गोद में उठाकर ऊपर चला जाता है।

महाराज बजरंगी के पास आकर फुसफुसाकर कुछ बोलता है।

'रात दो पहर बीत गयी, बजरंगी साहब। मालिक आज अब नहीं खायेगा। रोशनी बुझ गयी, नहीं देखते?'

'तुम खा लो, जाओ।'

'आप नहीं खायेंगे?'

'नहीं!'

'बजरंगी साहब, मालिक इतने दिनों बाद धन-दौलत लुटा रहा है।'

'तुम अपने काम पर जाओ महाराज।'

'बजरंगी साहब, कलकत्ते में मैंने बड़ों-बड़ों को देखा है। बड़ी-बड़ी जमींदारी, कारोबार सब एक ही आदमी फूँककर दिवालिया बन गया है। हमारे मालिक को वह सब खरीद सकते हैं।'

'जाओ, तुम जाओ तो महाराज।'

'जा रहा हूँ, बजरंगी साहब। तुम मेरे बेटे के बराबर हो। दिल में दुःख होता है, इसलिये दो बातें कह देता हूँ। मालिक जिस रास्ते पर जा रहा है, उससे यह कारबार अधिक दिनों तक टिकने का नहीं।'

महाराज चला जाता है।

बजरंगी हँसता है। महाराज का शक यदि सच होता। महाराज नहीं जानता कि कुन्दन ने और भी नाव खरीदी है, और भी कारोबार बढ़ाया है। रिश्तेदारों को लगाया है। वे सब गया और चुनार में पत्थर के बर्तन का कारबार शुरू कर रहे हैं। बनारसी कपड़ों के कारोबार में भी रुपया लगाया है।

कलकत्ता के बड़े-बड़े बाबुओं की बातें महाराज कर रहा है। वे सब ही तो उसके पास बार-बार आदमी भेजते हैं। कुसमय पर जरूरत होने से कुन्दन रुपये भी कर्ज देता है। वे सब कुन्दन को सूद का कारबार करने को कहते हैं। बहुतेरे तो सूद का ही कारबार करके

लाल हो गये हैं।

गोपाल की बड़ी इच्छा है। गोपाल कहा करता है, 'मनोहर का ऐसा दिमाग है कि वह अच्छी तरह हिसाब रख सकेगा।' कुन्दन कहा करता है, 'नहीं, नहीं यह बड़ा बुरा काम है।'

गोपाल साहस करके कहता है, 'घर बैठे का कारबार है। इस कारबार में लोग करोड़पति हो जाते हैं, भैया।'

'तुम सूद का कारबार कर करोड़पति बनोगे?'

'भैया, तुममें शक्ति है, इसलिये आज गाजीपुर, कल चुनार, परसों गया जाते हो। तुम्हें सभी मानते हैं, इसलिये नाव और सुपारी का कारोबार करते हो। हम लोग क्योंकर कर सकेंगे।'

'अरे गोपाल, तुम्हीं न तुलसीदास की रामायण लेकर सोने जाते थे। सूद का कारोबार बड़ा ही नीच काम है। यह काम करते करते आदमी चूहा बन जाता है। हजार-हजार रुपये लेने वाले लोग भी आते हैं और फिर लोटा-कटोरा देने भी गरीब आदमी आते हैं। वह मैं नहीं करूँगा। मुझे इन सब से नफरत होती है।'

बजरंगी को याद आयी।

कुन्दन जितने दिन तक है, वस उतने ही दिन। इसके बाद गोपाल शायद सूद का ही कारबार करेगा।

महाराज का शक बेकार है। अभी कुन्दन के पास दोनों हाथों से रुपये आ रहे हैं। कलकत्ता के बाबुओं जैसी दशा उसकी क्यों होगी! सारी जिन्दगी जो कुछ रोजगार किया है, सब जमा किया है, अब खर्च हो रहा है। वह हो। कुन्दन घरवालों का सर्वनाश नहीं करेगा।

नहीं। बजरंगी रुपयों के खर्च होने की बात नहीं सोचता है, असल में कुन्दन मर गया है। इसी लायली ने उसे मारा है।

बाबूलाल कहा करता था, 'औरतों की तरफ नजर मत उठाना।' कुन्दन ने छोटा-मोटा बुरा काम कभी नहीं किया है। औरतों के मुँह की तरफ भी अच्छी तरह देखता था या नहीं, बजरंगी को शक है।

कुन्दन दुस्साहसी, लापरवाह, निडर। किसी विपत्ति से भी वह नहीं डरता।

उसी कुन्दन ने प्रौढ़ावस्था में सर्वनाश का फँदा बुन दिया।

कुन्दन सुखी रहे। लायली उसे धोखा भर न दे। बजरंगी और कुछ भी नहीं चाहता।

कुन्दन इन दिनों बजरंगी की तरफ नहीं देखता। बजरंगी की कमीज मैली-कुचैली, उसके बाल बढ़े हुए। वह अपने मन से रहता है, अपने मन से घूमता-फिरता है। कुन्दन उसकी खोज भी नहीं लेता।

न ले। वे सब अच्छे रहें। इतने भर से ही बजरंगी खुश रहेगा।

नाच-घर में बड़ी रात तक लायली और कुन्दन शतरंज खेलते हैं। बीच-बीच में आँखें उठाकर कुन्दन लायली को देख लेता है। लायली आज जैसे गंभीर हो, दोनों आँखें तीखी कर, बीच-बीच में पता नहीं क्या सोच रही है। उँगलियाँ काट रही है।

रात के बारह बजे कुन्दन नहाने गया। नहाकर उसने एक पतली पंजाबी और धोती पहनी। घने, छोटे-छोटे, कच्चे-पक्के बालों को अच्छी तरह पोंछा।

'कुन्दन अपनी कमर से बिछुआ क्यों नहीं निकालते हो, बोलो तो?'

'नहीं निकालना चाहिये।'

'मेरे ही पास तो हो भई, फिर इतना डर क्यों? मुझ पर विश्वास करते हो तो?'

'हूँ।'

'तब फिर, दिन रात किसी भी समय क्यों नहीं निकालते हो?'

'लायली, खा आऊँ।'

'वाह कुन्दन, जाति-धर्म रखने की कितनी कोशिश है! नीचे

वाले कमरे में महाराज के सामने बैठकर खाने से ही क्या जाति रह जायेगी ? ज़ाति तो तुम्हारी चली ही गयी है।'

'चली गई तो क्या करूँ, बोलो ? लेकिन यह जाति नहीं, संस्कार है। यही देखो न, तुम ही क्या धर्म-कर्म करती हो ? फिर भी मरने पर तुम्हें कब्र में दफनाना ही होगा। यदि कोई कब्र न दे, तब शायद तुम उसे रात में आकर डराओगी।'

'आहा, मुझे खूब पहचाना है। मुझे कब्र मत देना भई। सात हाथ मिट्टी के नीचे अँधेरे में मत गाड़ देना।'

'अभी से यह सब चिंता क्यों ?'

'बल्कि मुझे एक बजरा पर चढ़ा देना। बजरा फूल से सजा देना।'

'इसके बाद ?'

'बीच नदी में ले जाकर बजरे में आग लगा देना !'

'लायली, जग-जगकर तुम क्या-क्या सपना देख सकती हो ?'

'सचमुच कुन्दन, तुम लोगों का नियम बड़ा ही सुन्दर है। मुझे बहुत अच्छा लगता है।'

'हाँ, श्मशान में बैठकर कुछेक दिन बिताने से माया-ममता कट जाती है।'

'अच्छा कुन्दन, एक बात कहूँ ?'

'कहो।'

'सुनने से शायद हँसोगे।'

'हसूँगा क्यों ?'

'नहीं रहने दो। बाद में बताऊँगी।'

'वैसा ही करो।'

नीचे बैठकर खाते खाते बहुत दिनों बाद कुन्दन ने बजरंगी की खोज की। बोला, 'बुलाओ तो उसे।'

बजरंगी आया। कुन्दन उसकी ओर एक अपराधी की तरह देखता

है, उसके बाद अपनी बेचैनी ढँकने के लिये उस पर बिना कारण ही गुस्सा हो जाता है।

'ऊँहूँ, तुम्हें आदमी नहीं बनाया जा सकता। रहते हो फुलवारी वाले कमरे में। इस कमरे में आठों पहर ताला क्यों भूलता रहता है?'

'तुम्हारा रुपया जो रखता हूँ।'

'बहुत अच्छा करते हो! ताला खोलकर दो तीन धोती कमीज निकालो। उस घर भी जाते हो?'

'नहीं।'

'कल एक बार जाना। मैं बहुत दिनों से नहीं गया हूँ, इस बार समय निकाल कर आऊँगा, कह देना।'

'अच्छा।'

'क्या हुआ है, रे? लायली ने शायद फिर तुम्हें कुछ कहा सुना है? लेकिन वह तो तुमसे ज्यादा बातचीत नहीं करती।'

'नहीं, नहीं। किसी ने कुछ नहीं कहा।'

'तब फिर आँख मुँह भारी-भारी क्यों हैं?'

'मालिक अब मैं जाऊँगा। तुम मेरा बन्दोबस्त कर दो।'

'जाना, जाना। समय आने पर मैं खुद ही भेजूँगा।'

'तुम बाहर जाओगे, कहा था न?'

'वह भी जाऊँगा। गर्मी में, बरसात में, सब सुख कलकत्ता में है रे। ऐसी दक्षिणी हवा, बर्फ, ऐसा आनंद और कहाँ पाऊँगा? जाड़ा में जाऊँगा। तुम्हारी शादी करने के लिये गाजीपुर जाऊँगा।'

'शादी? शादी की बात किसने कही?'

'मैं कह रहा हूँ। तुम बड़ा बढ़-चढ़ गये हो बजरंगी, अपनी राय देने के लिये जैसे हर समय तैयार रहते हो। इतनी जिरह क्यों करते हो?'

'नहीं। और नहीं करूँगा।'

कुन्दन हाथ धोते-धोते कहता है, 'लायली कहती है, मैं कवि बनता जा रहा हूँ। तुम भी तो कवि बन गये। बातचीत करने का ढंग

जो उलट-पलट गया।'

'मालिक आजकल तुम बहुत शराब पीते हो, शरीर पर ध्यान नहीं देते।'

'कौन कहता है?'

'मैं क्या देख नहीं रहा हूँ? शरीर नहीं खराब हो जायेगा?'

'हाँ, शरीर खराब होगा।'

'उम्र हो रही है न!'

'जाओ, खा लो। देरी मत करना।'

उम्र की बात उठते ही, कुन्दन के दिल में कहीं जैसे एक खोंचा लगता है। उम्र! छियालीस वर्ष की उम्र भी कौन-सी बड़ी उम्र है? बाल पक रहा है। खिजाब लगाने में शर्म आती है। लायली कभी भी उसकी उम्र की बात नहीं उठाती, बल्कि कभी कभार बोलती है—मर्दों की थोड़ी ज्यादा उम्र मैं पसंद करती हूँ। नहीं तो वह मर्द नहीं जँचता।

शिरीन पर तो वह जाने कितने ही ताने कसती है। निसार की उम्र लेकर शिरीन को ऐसी चोखी-चोखी बातें सुनाती है कि बीच-बीच में शिरीन जार-बेजार रोने लगती है। बोलती है—'समझोगी, समझोगी। ऐसा रूप हमेशा नहीं रहेगा। यह केश सफेद होंगे। इस चमड़ी में झुर्रियाँ पड़ेंगी।'

लायली और भी हँसती है। बोलती है, 'भैया री भैया, वह दिन इन आँखों न देखूँ। उसके पहले ही आँखें बन्द कर लूँ।'

'हाँ, आँखें मूँद लेना जैसे तेरे हाथ में है!'

'नहीं शिरीन, गुस्साओ या जो कुछ करो, हम लोगों के लिये रूप खतम होते ही विदा ले लेना जरूरी है। इस दुनिया में हम लोगों का तो कहीं ठौर ठिकाना नहीं। गृहस्थ घर की औरतों के बूढ़ी होने पर भी कोई उन्हें दुर-छिः नहीं करता। मैं तो भई बूढ़ी होकर कमरे में बैठकर काकातुआ को 'अल्ला-खुदा' सिखाने के लिये जिंदा नहीं रहना

चाहती हूँ ।'

'तुम्हारी यह दशा क्यों होगी ?'

'कौन जाने बाबा ! उस समय की बात क्या कोई कह सकता है ? अरे यही देखो न, मेरी माँ का केश एक दासी बाँधती, उबटन एक दासी लगाती । गुलाब के फूलों से जोड़ी गाड़ी सजाकर माँ घूमती । किसी एक बड़े गाँव में जाकर मरी, मरने के समय कोई पास भी नहीं रहा ।'

'कुन्दन तुम्हें अच्छी तरह रखेगा ।'

'नहीं कुन्दन, इस तरह डर-डर कर मत देखो । बूढ़ी होने पर बैठी-बैठी नहीं खाऊँगी । दिन बीतते ही विदा ले लूँगी ।'

लायली समय-समय पर यह सब बातें बोलती हैं । शिरीन से बोलती है, 'यदि खोज पाओ तो प्रौढ़ पुरुष को प्यार करना । मनमाना सुख पाओगी । यही जैसी मैं हूँ ।'

ऊपर जाकर कुन्दन देखता है, लायली नाच-घर में सोयी है । उसे गोद में उठाकर कुन्दन लाता है । सोने के कमरे में सुला देता है । एक-एक कर गहने उतार देता है । जँगला अच्छी तरह खोल देता है ।

कुन्दन बरामदे में आकर खड़ा होता है ।

नहीं । बजरंगी का इंतजाम बड़ा पक्का है । दरबान सब पहरा दे रहे हैं । डाल कुत्ते घूम रहे हैं । नीचे के हर कमरे में ताला लगा है । किसी भी तरफ जरा भी कमी नहीं ।

वह कमरे में आकर सो जाता है ।

एक हलचल से उसकी नींद खुल जाती है । कुन्दन की नींद पतली है । भीतर से जैसे कोई उसे खोंचा मार रहा है । उठने के लिये कह रहा है । वह उठ बैठता है ।

लायली उठकर जा रही है । कुन्दन उसकी तरफ देखता रहता है । लायली की दोनों आँखें बन्द । हाथ दोनों झूल रहे हैं ।

लायली धीरे-धीरे चहलकदमी करती रहती है । कमरे के इस

तरफ से उस तरफ। वह एकटक देख रहा है। नींद में आदमी जब चलता फिरता है जब उसे भूत बुलाता है। लायली को क्या भूत ने बुलाया है? या सपने की अवस्था में वह उठ पड़ी है?

लायली के होंठ जरा-जरा हिल रहे हैं। वह बोल रही है। 'दुःख मत देना, मुँह मत फेर लेना, सुनो। नहीं, नहीं, मैंने तो शांति नहीं पायी है। नहीं मैं शांति....।'

कुन्दन ने उसके दोनों हाथ पकड़ लिये।

कुन्दन ने उसे झकझोरा। आँखें खोलकर कुन्दन को देख लायली दर्द भरी आवाज में चीख उठती है। हाँफती-हाँफती बोलती है; 'यह क्या, तुम मुझे कहाँ ले जा रहे हो?'

कुन्दन ने उसके आँख मुँह पर पानी छिड़का। बोला, 'सोओ, अच्छी तरह सोओ।'

'क्या हुआ है, कुन्दन?'

'क्या हुआ है।'

कुन्दन भी चिंतित हुआ, डरा। सपने में चलना-फिरना, यह तो अच्छा नहीं। चारों तरफ देखकर कुन्दन विपत्ति की ही संभावना देखता है। बड़ा-बड़ा जंगला। जंगले में छड़ नहीं। यदि किसी तरह गिर पड़े! इसके अलावे जब हठात् उसकी नींद टूटेगी, उस समय अपने को अनजान, अपरिचित जगह में पाकर लायली बहुत डरेगी। आज न सही। कुन्दन पास था।

लेकिन यह सब बात कुन्दन कहे किस तरह?

'लायली तुम नींद में बोल रही थीं?'

'बोल रही थी?'

लायली जैसे बहुत डर गयी है। क्या 'बोल रही थी, कुन्दन?'

'क्या पता! मतलब नहीं समझ सका। सपना देख रही थीं?'

लायली पलभर मुँह बाए डर भरी आँखों से देखती रहती है। इसके बाद बोलती है, उसका हाथ पकड़ती है। बोलती है, 'बड़ा भयानक

सपना देख रही थी, कुन्दन। जाने कौन जैसे मुझे पकड़कर लिये जा रहे हैं। तुम मेरे पास ही रहो।'

'पास ही तो हूँ। अच्छा लायली, तुम्हें अकेली छोड़ देना तो खतरे से खाली नहीं। अब से जब मैं नहीं रहूँगा, तुम्हारे कमरे में गुलरुख सोयेगी, जावेदी सोयेगी। तुम्हारी दोनों अलग बगल।'

'बहुत अच्छा, ऐसा ही होगा।'

'अब सोओ तो।'

कुन्दन उसका हाथ पकड़े रहा। लायली ने आँखें बन्द कीं।

'कहाँ, कुन्दन तुम नहीं सोओगे ?'

'नहीं। एक रात न सोने से मुझे कुछ भी नहीं होगा।'

कुन्दन उसका हाथ पकड़कर, उसके मुँह की तरफ देखता रहा। उसका यदि कोई अपना होता तो उसे पास आकर रहने को कहता। दूर के रिश्ते में उसका कौन कहाँ है। इस नवाब महल में है। लेकिन लायली तो उन लोगों को बुलाना नहीं चाहती।

'शांति नहीं पाती हूँ, दुःख मत देना।' बातें उसे याद आयीं।

आहा, घोर नींद में बुरा सपना उसे कष्ट देता है। उसके लिये कुन्दन ने एक गाढ़ा ममता महसूस की। बहुत बार एक गहरा तर्जुबा उसे ढँक लिया करता है। लायली को यह बात बताने में उसे शर्म लगती है। किसे पता, यदि वह हँसे ? यदि वह निसार आदि को बुलाकर कुछ कहे ?

दूसरे दिन सपने की बात कहने पर कुन्दन को थाह नहीं मिली। लायली हँसने लगी। बोली, 'चिंता होती है, तुम पास रहो। गुलरुख और जावेदी को साथ लेकर कमरे में मैं नहीं सो सकूँगी ?'

'लेकिन अचानक कोई भी तो खतरा हो सकता है।'

'तुम्हारे मुँह में फिर कैसी बात कुन्दन ? खतरा तो हर समय ही हो सकता है। और फिर सपना तो मैं रोजाना देखती नहीं। अचानक ही हुआ तो किसी दिन। इसके लिये क्या होशियार होओगे, बोलो ?'

कुन्दन ने पता नहीं, फिर क्या बोलना चाहा, लेकिन लायली ने उसके मुँह पर हाथ रख दिया। बोली, 'और यह सब लेकर बातें मत करो।'

'अच्छा नहीं करूँगा। लेकिन बजरंगी को एक बार बुलाऊँगा। वह लौट आये।'

'उसे क्यों बुलाओगे?'

'एक अच्छा कारीगर बुलाऊँगा। तुम्हारे कमरे के जंगले में जाल लगवा दूँगा।'

'यह कमरा छोड़कर उसी समय मैं, दूसरे कमरे में चली जाऊँगी।'

'अच्छा नहीं, बुलाऊँगा। कितना जिद करती हो लायली?'

'बजरंगी कहाँ गया है?'

'उस घर में।'

'अच्छा कुंदन, तुमने घर जाना बिल्कुल क्यों छोड़ दिया?'

'जाऊँगा, कल जाऊँगा।'

'मुझे लगता है, दूध में विष दी जाने वाली बात तुम नहीं भूल सके हो।'

'तुम्हें यह बात किसने बताई?'

कुंदन के मुँह से एक गुस्सा भरी दबी आवाज निकल पड़ती है।

'बजरंगी।'

'सचमुच में वह आजकल बड़ा बढ़-चढ़ गया है। बहुत बढ़-चढ़ गया है। आज वह आए तो जरा। बुद्धि-सुद्धि जैसे खो बैठा है। इस बार उसे भगाना ही होगा।'

'इतना गुस्सा क्यों कर रहे हो? कौन तुम्हें विष देने गया था? माँ? भाई?'

'यह सब बात भी उसने बतायी है? शैतान।'

कुंदन साँप की तरह फुँफकार उठता है।

लायली उसकी तरफ देखकर बोलती है, 'उसे क्या करोगे? उसके

छलने से तो तुम छाती बिछा देते हो। सच, कुंदन एक मल्लाह का गरीब नौकर। उसे उठा लाकर सर पर इस तरह चढ़ा रखा है!'

कुंदन हठात् पलटकर खड़ा होता है। लायली की तरफ शक भरी आँखों से देखता रहता है।

'तुम सच कह रही हो तो?'

'मैं झूठ क्यों बोलूँगी?'

'नहीं। यह भी तो ठीक ही कहती हो।'

कुंदन मुँह पोंछता है। भौंहें कड़ी कर, वह फर्श की तरफ देखता रहता है। लगता है कि उसका दिमाग खराब हो गया है। कोई भी बात, कोई भी शिकायत बिना अच्छी तरह जाँचे तो कुंदन विश्वास नहीं करता। लायली की बातों पर विश्वास क्यों करता है? या तो उसकी बुद्धि सठिया गयी है या वह लायली को प्यार कर रहा है।

विश्वास नहीं करता कुन्दन, विश्वास करने में ही खतरा है। काशी की गंगा की धारा। तपती हुई बालू। छाती के अन्दर हड्डियों के कोटर में वह शिक्षा सुरक्षित पड़ी है। वह विश्वास नहीं कर सकता।

लेकिन लायली को देखने से तो दिल में विश्वास करने की इच्छा होती है। उसकी बात यदि सच हो तो बेलगाम बात करने के लिये बजरंगी को शिक्षा देनी होगी। बजरंगी को।

'लायली, सच बात बोलो।'

लायली ने लम्बी साँस छोड़ी। बोली, 'कुन्दन वही बोला है। लेकिन मन के आवेग से। तुम्हें कितनी तकलीफ है, यह बात कहते-कहते वह रो पड़ा है।'

'आह, बचा लिया। दिल से जैसे बहुत बड़ा भार उतर रहा है। भयानक सजा देनी पड़ती बजरंगी को। लायली, उसे तुमने बचा लिया है।'

उदास होकर लायली ने सिर हिलाया। बोली, 'मैं तुम्हें बजाकर

देख रही थी। मेरी बात का विश्वास करके उसे सजा नहीं दी, बड़ा अच्छा किया। लेकिन कुन्दन मैं डरती हूँ, जिस दिन जरूरत होगी, उस दिन भी तुम सजा नहीं दे सकोगे।'

कुंन्दन गंभीर होकर बोलता है, 'लायली, आज मैं खुद ही को देखकर सिहर उठा।'

'क्यों ?'

'तुम्हारी बात सुनते ही मैंने सजा देनी चाही थी। भगवान ही जानते हैं, कुन्दन कम लोगों के मुँह की बातों पर विश्वास करता है। तुम मुझे जबान दो।'

'क्या ?'

'जबान दो, इस तरह छल करके तुम बातें नहीं करोगी। हो सकता है, तुम्हारी बातों का विश्वास कर बैठूँ। हो सकता है, तुम्हारी बातें सुन कर कोई ऐसा काम कर बैठूँगा, जिसकी याद तुम्हें जिन्दगी भर जलायेगी।'

'जबान दो। जबान माँगा, इसलिये जबान दी कुन्दन, लेकिन मुझपर तुम विश्वास मत करो।'

'विश्वास नहीं करूँ तुम्हारा ?'

'नहीं कुंदन, मैं क्या अपने वश में रहती हूँ ? मुझमें जैसे कोई बैठा हुआ है। रह-रहकर मुझे पागल बना देता है। हो सकता है किसी दिन फिर छल कर बैठूँ।'

'ऐसा नहीं करना लायली।'

'अच्छा।'

'लायली, तुमने मुझे बड़ी शांति दी। शायद उसे मारता। वह जैसा लड़का है, चुपचाप मार खा लेता। कुछ भी न कहता।'

'कुंदन, बजरंगी तुम्हारा कौन है ?'

'बजरंगी ? नहीं जानता।'

'मैं जानती हूँ। मैं तुम्हारी मुहब्बत हूँ। वह तुम्हारी विचार-शक्ति

है। तुम यदि मनुष्य का खून भी करो तो कोई दोष नहीं, उसकी कठोर बातें सुनकर तुम्हारे पैरों तले की मिट्टी खिसक जाती है।'

'लायली, यह तुम क्या कह रही हो?'

'कुंदन, कुंदन यह तुम क्या कर रहे हो? तुम्हारी देह में कितना भी कीचड़ क्यों न लगे, उसे साफ सुथरा रहना ही होगा? वह क्या देवता है? वह भी तो आदमी है। उससे भी भूल-चूक हो सकती है, यह तुम क्यों सोचोगे कुंदन? लायली जैसे भटक जाती है। वह टूटे-फूटे गले से बोलती है, उस पर तुमने एक बहुत बड़ा बोझ चढ़ा दिया है।'

'किसका बोझ?'

कुंदन लायली की सभी बातों का माने अच्छी तरह नहीं समझ सकता।

'वह आदमी है। लेकिन उसे तुम लोगों की कहानियों के देवता की तरह साफ-साफ रहना होगा। यह उस पर बहुत बड़ा बोझ है।'

कुंदन दिल्लगी करने की कोशिश करता है। 'हम लोगो के सभी देवता पाक-साफ नहीं हैं, भई। उन लोगों में तरह-तरह की कमजोरियाँ भी हैं।'

'मजाक मत करो।'

दोनों चुप। लायली एक लंबी साँस छोड़ती है। बोली, 'रहने भी दो। तुम दोनों में कितने दिनों की जान पहचान है। मैं बात ही क्यों करती हूँ? असली बात तो जैसे भूल ही गई। कुन्दन बात क्या सच ही है?'

'सच।'

'किसने ऐसा काम किया?'

'नहीं जानता। दुश्मनों की तो कोई कमी नहीं, बाहर से भी कोई आ सकता है।'

'घर का भी कोई हो सकता है?'

'वह सब बात रहने दो ।'

'सुनने में अच्छी नहीं लगती ? लेकिन सब कुछ संभव है ।' नहीं हो सकता है—कह कर इस संसार में कुछ भी नहीं । और फिर आदमी को आदमी सिर्फ विष देकर या छुरी भोंक कर नहीं मारता है । कुन्दन मारने के और भी कितने तरीके हैं । अपना ही आदमी अपने आदमी को मारता है । लेकिन यह सब बात भी छोड़ो । यह जो बजरंगी आया है । उसे ऊपर बुलाओ ।'

बजरंगी ऊपर आता है ।

लायली कहती है, 'बजरंगी रंग कराओ । भीतर की गद्दी की खोल से शुरू कर के सब नीले कपड़े के होंगे । सात दिन के अन्दर-अन्दर हो जाना चाहिये । हम लोग गंगा से होकर कुछ दूर तक सैर करने जायेंगे । इच्छा है कि तीन-चार दिनों तक सैर करेंगे । तुम्हारे पास यदि कपड़ा लत्ता नहीं हो तो बनवा लो । तुम भी साथ चलोगे । अपनी बात करो कुन्दन । मैं नहाने चली ।'

लायली चली गयी ।

उसके अंदर न जाने तक तो बजरंगी चुप रहा । इसके बाद बोला, 'मालिक, अभी-अभी एक बार जाओ ।'

'क्यों ?'

'माँ और गोपाल जी में झगड़ा हो गया था । माँ कुएँ में धम् से कूद पड़ी थीं । मैं उनके पास गया था । उन्हें ज्यादा चोट नहीं आयी है । लेकिन मालिक वह तुम्हें बुला रही हैं ।'

कुन्दन जैसे दुःख की अथाह गहराई में डूब गया ।

फिर घर । माँ और गोपाल । बुरी अवस्था । वह लम्बी साँस छोड़ता है । बोलता है, 'चलो ।'

कुन्दन की दादी फफक-फफक कर रो रही थी ।

'हे माँ, यह कैसा सर्वनश है ? यह कैसा सर्वनाश है ? अरी

अभागी तुम बड़ी ही एहसान फरामोश हो। तुम्हारा दुःख देखकर मैं अपनी एकलौती संतान का शोक भूल गई थी। तुम्हें क्या कोई बात ही नहीं याद आती है ?'

कुन्दन के जूते की आवाज कमरे में आती है और वह सबको बाहर निकाल देता है। दादी कहती है, 'मैं रहूँ ?'

'क्यों रहोगी ? मजा देखने के लिये ? कोई जरूरत नहीं। तुम लोग एक-एक घटना की सृष्टि करोगी और मैं तुम लोगों के लिये मजाक की खुराक दूँगा, यह तो कोई अच्छी बात नहीं। जाओ, बाहर जाओ।'

वह दरवाजा बन्द कर लेता है। उसकी माँ बिछावन पर लेटी हुई है। कपाल पर एक पट्टी बँधी है।

'कुन्दन सुनो। जानती हूँ, तुम मुझपर बहुत गुस्सा हो। पर एक बात सुनो।'

'बोलो ! सुनूँगा, इसीलिये तो गाड़ी जोतकर यहाँ आया। तुम लोगों में तो आदमी-जैसी दया-माया कुछ नहीं है। ख्याल आया, कूद पड़ीं। इतनी भी अक्ल नहीं हुई की घर भर में नौकर-नौकरानी हैं। कलंक लगने में देरी नहीं लगेगी।'

माँ चुपचाप। आँखों में आँसू की बूँदें। वह बोलती है, 'पास आओ। तुम्हें याद है, गोपाल की पत्नी के लिये रूक्मा नाम की एक लड़की रक्खी थी ?'

'अब क्या दुल्हिन की नौकरानी की बात भी सुननी होगी ?'

'नहीं, नहीं। रूक्मा आवारा थी, इसलिये छुड़ा दिया था, वह उस घर में काम के लिये कई दिन गयी थी।'

कुन्दन के कपाल की नस मोटी हो गयी। लेकिन वह कुछ बोला नहीं। लड़ाई झगड़ा कर जो कुआँ में कूदने जाती है, उसके साथ दलील कोई काम नहीं देती।

'वह फिर आकर मेरे पैर पड़ने लगी। मैंने उसे रख लिया। अब बाद की बात सुनो। किसने तुम्हें दूध दिया था, यही सोच रही थी। सोंचकर कोई किनारा ही नहीं पाती थी। गोपाल की पत्नी से दूध का गिलास लेकर तुम्हारे नौकर के हाथ देने की बात थी। मैं यही पूछने गयी। अब देखो मामला। गोपाल की पत्नी कहती है कि उसका पैर दर्द कर रहा था। उसने साफ सुथरा देखकर गिलास दिया है। रूक्मा दूसरे ही दिन भाग गयी रे। अब पता चलता है कि बहू के पास एक जुँड़वा बाला देखा था। बहू कहती हैं, वह दूध का गिलास रूक्मा को देना नहीं चाहती थी। रूक्मा आकर माँग ले गई थी। मैं गोपाल से इस मामले की तहकीकात करने को कहती हूँ। किसने उसे गहना दिया, किसने उसे दूध ले जाने को कहा, वह कहाँ भागी, यह सब पता लगाना जरूरी है या नहीं, बोलो ? इस पर गोपाल बोला। मैं क्या यह सब बातें तुम्हें बताऊँ ? तुम्हारे मन में संदेह होगा। मैं क्या तुम्हारा कान भरा करती हूँ। बोलो, यह सब बात सही जा सकती है ?'

'माँ तुम कहना चाहती हो, गोपाल उस विषय में कुछ नहीं जानता है ?'

'नहीं बेटा, मैं कुछ भी नहीं समझ सकी, तुम बिना खाये उस रात को गये। मैंने खाया पिया नहीं, केवल बैठी-बैठी मैं सोचती रही। मेरे वंश में फिर यह सब क्यों ? वह तो जो होने को था, हो ही चुका है।'

माँ को देखकर कुन्दन को दया आती है। वह जहाँ तक हो सकता है, प्यार भरी आवाज में बोलता है, 'मैंने तो जान लिया, जो कुछ करना है, मैं करूँगा। तुम अब कुछ भी मत सोचो। गोपाल, बहू, मनोहर, किसी से भी बातचीत मत करो।'

'तुम कह रहे हो ?'

'हाँ !'

'अच्छा, अब बातें नहीं करूँगी।' माँ आँखों से आँसू पोंछती है।

कुन्दन बाहर निकल आता है। गोपाल के कमरे के सामने जा खड़ा होता है और गोपाल को बुलाता है।

घर भर में बात फैल जाती है। हर कमरे का दरवाजा खुल जाता है। बहू बेटियाँ दरवाजे की फाँक से देखती रहती हैं।

कुन्दन कहता है, 'इस घर में तुम लोगों को तकलीफ होती है। इच्छा हो तो, जहाँ भी हो, तुम लोग जा सकते हो। मकान मेरा है। माँ को जलील करते वक्त तुम्हें यह बात याद नहीं थी ? लगता है तुम यह बात अक्सर भूल जाते हो। इसलिये याद दिला दी।' गोपाल कान पर हाथ रखता है। भैया का घुटना पकड़कर बड़बड़ा कर माफी माँगता है।

कुन्दन ऊब कर पैर छुड़ा लेता है और फिर एक बार गोपाल को धमका देता है। इसके बाद बाहर निकल पड़ता है।

पच्चीस

बाहर नीला रंग, भीतर नीला रंग। नीले रंग पर छोटा चमकदार तारा बना हुआ। खिले कमल जैसी एक सुन्दर बत्ती झूल रही है। छत पर चढ़ने के लिये सीढ़ियाँ हैं। छत रेलिंग से घिरी हुई है। अच्छा दिन देखकर आसमान तारा पानी में उतरा।

वह अच्छा दिन लायली ठीक करती है। छत पर खड़ी होकर दूरबीन लेकर आकाश देख रही थी। ईशान, पूरब और उत्तर के बीच की दिशा। और नैऋत दक्खिण और पश्चिम के बीच की दिशा। काली-काली डोंगी-नावों जैसी सीधी गढ़न की तेज दौड़ने वाली घटाओं को देखकर उसने ठीक किया, बस अभी-अभी निकलना पड़ेगा।

'आकाश में जो यह मेघ छाया है ?'

'इसीलिये तो जाना चाहती हूँ। नदी के बीच तो तूफान नहीं

देखा है। अभी न सही, नाव मत खोलो। नाव पर बैठकर हम लोग तूफान देखें। तूफान रुकने पर जायेंगे।'

नाव पर बैठकर कुन्दन बोला, 'मुझे लगता है, तुम हम लोगों को डुबाकर मारने लायी हो।'

'यह भी हो सकता है। पहले मैं कूदूँगी। मुझे निकालने के लिए तुम कूदोगे। तुम्हें निकालने के लिये वह। तीनों एक साथ मरेंगे।'

'चूहों की तरह पानी में डुबाकर मारोगी लायली ?'

'बुरा क्या है ? मुझे तो सोचने में अच्छा ही लगता है, हम लोग बहते-बहते समुद्र में पहुँच जायेंगे !'

बारिश देखकर कुन्दन बोलता है, 'खूब कहती हो। आदमी पानी में डूबने से बड़ा ही कष्ट पाता है, जानती हो !'

'कष्ट नहीं पायेगा, मृत्यु आयेगी। यह तो बड़े आश्चर्य की बात है।'

'इसीलिये क्या पानी में डूब मरूँगा ? यह देखो, बारिश रुक गयी। घटा छँट रही है। अब क्या हुक्म है, बोलो ?'

'हुक्म फिर क्या, नौका छोड़ दो।'

'तीन चार दिन तक नाव पर सैर करना चाहती हो ? इसके लिये इंतजाम नहीं किया है ?'

'इंतजाम और क्या करूँगी, बोलो ?'

'सामान लेकर तो निकलना पड़ेगा लायली। नहीं तो फिर तीन चार दिन रहेंगे कैसे ?'

'वह फिर किसी दिन होगा। अभी चलो।'

'क्यों लायली, आज रुक कर कल निकलने से भी तो एक ही बात है। तुमने कहा इसलिये कितनी अच्छी तरह नाव सजायी गयी।'

कुन्दन जैसे दुःखित हो गया है। लायली बोली, 'बहुत अच्छा होगा, वही होगा। आज चलो थोड़ा -घूम आयें। बजरंगी उतर जाये।'

'नहीं, नहीं, वह चले। उसके रहने से एक भरोसा रहता है।'

'मैं डर हूँ और वह है भरोसा?'

'नदी की हालत तो अच्छी नहीं है। फिर वर्षा तूफान भी आ सकता है। बाबूघाट की तरफ जाने पर देखोगी, लंगर वाले पीपे नाच रहे हैं; बजरंगी रहेगा तो सम्भाल सकता है।'

'तब चले।'

'कपड़ा बदलोगी, क्यों?'

'नहीं, नहीं, चलो।'

वे छत पर बैठते हैं। तूफानी झपेटों से कितनी ही टूटे-फूटे भूले-भटके बादल पुरवैया हवा में तैर रहे हैं। नदी, नाव, माँझी, मल्लाह, डोंगी, वोट, स्टीमर, गंगा-तट के घर-द्वार, बड़े-बड़े मकान, सबके ऊपर एक कुदरती लाल रोशनी, पता नहीं कौन जैसे डाल रहा है।

'इधर नहीं, बज-बज की तरफ चलो।'

'लौट सकूँगा, क्या? रात नहीं हो जायेगी?'

बजरंगी संकोचपूर्वक बोलता है।

'अभी तो चलो। बाद में वापस आने की बात सोचूँगी। कुंदन क्या कहते हो?'

'कुछ भी नहीं कहता। मैं सोया हुआ हूँ।'

'मालिक अंधेरा जो हो जायेगा?'

'बजरंगी तुम बड़े ही अजीब हो। अंधेरा क्यों होगा? शुक्ल पक्ष की रात है न।'

बजरंगी और कुछ भी नहीं बोलता। 'बेंत की टोकरी ऊपर पहुँचा देना।' लायली बोलती है।

बेंत की टोकरी बजरंगी ऊपर पहुँचा देता है। कुंदन से कहता है, 'मालिक धार के मुँह पर पड़ने से वापस आना मुश्किल होगा। चार-पाँच घंटों के बाद ही कहीं लौट पाऊँगा।'

'आह, बजरंगी तुम बहुत तंग करते हो।'

कुंदन चिंतित होता है। कहता है, 'लायली वह ठीक कह रहा है। पानी के साथ खेल होशियारी का काम नहीं।'

'बहुत अच्छा, जो अच्छा समझो, वही करो।'

लायली शराब ढालती-ढालती, कान की बाली हिलाकर थोड़ा हँसी। बोली, 'मैं तो अच्छी तरह तैरना नहीं जानती। यदि नाव उलट जाये तो मैं शायद पहले ही मरूँगी।'

कान की बाली की चमक देखकर कुंदन को जैसे कोई बात याद आ गयी। भौंहें टेढ़ी कर उसने बाली देखी। बोला, 'इस तरह की बाली तुम्हारे पास और कितनी हैं।'

'क्यों?'

'हिसाब रखती हो?'

लायली सिर हिला देती है। बोलती है, 'हिसाब रखकर क्या करूँगी? जो है सो मेरा ही है। उसमें तो और कोई हाथ नहीं लगाता।'

इसके बाद मजाक के स्वर में बोलती है, 'क्यों, मेरे गहने-जेवर की खोज खबर क्यों? चोरी करोगे क्या?'

'सोच रहा हूँ, बुरा नहीं होगा। तुम्हारे हाथ और गले की एक दो चीजें लेने से ही मेरे कारोबार की छोटी-मोटी कमी पूरी हो जायेगी।'

'चुराओगे क्यों? माँग लेना, मैं सब कुछ दे दूँगी।'

'हुश्।'

'नहीं दे सकती? तुम सोचते हो कि गहना के लिये मुझमें बहुत लोभ है, यही न?'

'सोचता नहीं लायली, यह सब नहीं सोचता। आओ, दिल भर कर शराब पी जाये।'

कुछेक क्षण तो कोई भी बात नहीं हुई।

नीचे खड़ा होकर बजरंगी दबी हँसी, फुसफुसाती बातें मीठी आवाज में कपट व भर्त्सना सुन पाता है। शाम हो जाती है। और

कुछ दूर जाने के बाद नाव लौटायी जाती है। ऊपर से कोई मनाही नहीं की गयी है। कुंदन सो रहा है। लायली चुपचाप घुटनों पर मुह टिकाये बैठी हुई है।

उलटी धार में डाँड़ चलाकर आने में मल्लाहों के कंधे और बाँहें फटने सी लगीं। पल भर में शरीर पसीने से चकचक करने लगा।

'धीरे चलो। किनारे-किनारे चलो।'

बजरंगी उन लोगों से कहता है और खुद उठंग कर खड़ा रहता है।

रात, टूटे-फूटे मेघ, चाँदनी। किनारे पर गाछ वृक्षों के फाँक-फाँक में जुगनू। एक बार नाव फुलवारी के पास आयी कुंदन सो रहा है। लायली बैठी हुई है।

'तुम लोग उतर आओ। मैं बोट बाँधूंगा।'

मल्लाहों ने आपत्ति की। वे रात में इसी बोट पर रहते हैं। अभी काम पूरी तरह खतम नहीं हुआ है। गद्दी ढँकी बेंच के नीचे रंग की शीशी, ब्रुश, इसके अलावा बढ़ई के औजार अभी यहीं पड़े हैं। सुन-सान दोपहरी में अभी भी बैठकर काम किया जाता है।

'मालिक को बुलाइये। बोट बाँध कर जाऊँ।'

'नहीं। इससे अच्छा है कि तुम लोग अभी ही जाओ। खाकर आना।'

वे सब एक दूसरे का मुँह देखते हैं। अभी जायेगा, रसोई बनायेगा, खायेगा, बड़ी देर लगेगी। लेकिन मालिक खुद सो रहा है। किसकी मजाल है जो बात करे। बोट लगाने वाले मचान से कुछ दूर पर लंगर लगाकर चले जाते हैं।

बोट लगाने वाले मचान में रंग पोता गया है। उसके ऊपर एक बहुत बड़े झाऊ गाछ की डाल और पत्तियाँ झूल रही हैं। पानी में छोटी-छोटी छाया काँप रही है। ढेर के ढेर जुगनू। झींगुर की आवाज। गाछ की डालियों पर चिड़ियों के घोंसले में फटफटाहट की

आवाज ।

'बजरंगी !'

लायली उतर रही है । उसकी आँखें, मुँह जैसे किसी चीज के नशे से भरे हुए । सपना देखने वाले आदमी की तरह फुसफुसा कर बातें करती है ।

'बजरंगी, मैं नहाऊँगी ।'

'नहाओगी ?'

'हाँ, मेरा शरीर जल रहा है । देखो, मेरा हाथ भी जल रहा है ।'

'यहाँ क्यों नहाओगी लायली ? घर चलो ।'

'नहीं, नहीं । मेरी देह जल रही है ।'

'लेकिन········।'

'अपने कमरे से एक कपड़ा ले जाओ ।'

बजरंगी उतर गया । कमर भर पानी और किनारे के करीब भी जैसे लहरों के छोटे-छोटे धक्कों का अनुभव कर रहा है ।

वह किनारे आकर कपड़ा लाने कमरे में जाता है । कपड़ा बहुत साफ सुथरा नहीं । एक बार मन में आया कि घर जाकर उसकी ही साड़ी ले आवे । लेकिन, गुलरुख और जावेदी तब भागी-भागी आयेंगी ।

वह घर जाता है । अपने कमरे का ताला खोलकर एक धुली धोती लेता है । चाभी लगाकर भागा-भागा आता है ।

लायली नहीं है । किनारे पर से बजरंगी देख पा रहा है । बजरा के कमरे में तो कहीं नहीं घुस गयी ? कुंदन भी भला इतना क्यों सो रहा है ? कुंदन की नींद तो इतनी गाढ़ी नहीं ?

'लायली ?'

दबी आवाज । डरी-डरी बुलाहट । अभी-अभी, हो सकता है, कुंदन जग जाय । क्या जवाब देगा बजरंगी ? वह कपड़ा लाने गया था, इसी नौका पर से लायली गंगा में कूद पड़ी है ?

'लायली ।'

'आह, चिल्ला क्यों रहे हो ? यह तो मैं हूँ ।'

'कहाँ ?'

'यहीं तो ।'

सच तो । गाछ की छाया में लायली खड़ी है । माथा से होकर शरीर तक पानी टपक रहा है ।

'पानी में कब उतर पड़ीं ?'

'तुम्हारे जाते ही ।'

'क्यों उतर पड़ीं ? यदि डूब जातीं ?'

'डूबूँगी क्यों ? बड़ी अच्छी तरह तैर कर निकल आयी ।'

लायली उसके पास आती है । फुसफुसाकर बोलती है, 'पानी कितना ठंडा है । मैं डर रही थी ।'

'अकेली ? अकेली तुम्हारा पानी में उतर पड़ना अच्छा नहीं हुआ ।'

'बातें मत करो । मुझे कपड़ा दो ।'

लायली मुँह, माथा और हाथ पोंछती है । इसके बाद पीछे पलटती है । कहती है, 'पीठ पोंछ दो ।'

'यह क्या ?'

'पोंछ दो ।'

'मैं नहीं····।'

'ओफ, झटपट करो ।'

लायली पीछे पलटती है । कुरती नहीं है । दुपट्टा ढँका है । दाँतों पर दाँत बैठाकर बजरंगी पीठ पोंछता रहता है । लायली माथा पीछे की तरफ झुका देती है । बजरंगी यथासाध्य भींगे हुए केश का बोझ पोंछता है ।

लायली चादर लेती है । शरीर पर लपेटती है । उसकी तरफ देखकर बोलती है, 'मेरे साथ आओ ।'

बजरंगी चुपचाप विना कुछ कहे-सुने पीछे-पीछे चलता है । थोड़ा आगे रुककर लायली उससे कहती है, 'बजरंगी, और मत जाना ।

रुको। सुनो, तुम भागोगे ?'

'कहाँ ?'

'जहाँ खुशी हो, जिधर भी दोनों आँखें जायें।'

वह कान के पास मुँह ले जाकर फुसफुसाकर कहती है। 'बजरंगी समय रहते भागो·····।'

'क्यों ?'

लायली उसे पकड़कर खड़ी होती है। बोलती है, 'कुंदन के पास से भागो। वह तुम्हें आदमी नहीं बनने देगा, देवता बनाकर रखेगा। मेरे पास से भागो। मैं किसी की भी सुख शांति नहीं सह सकती। बचना चाहो तो भागो।'

'लायली घर जाओ। तुम्हारा दिमाग खराब हो गया है।'

'मूर्ख ! तुमसे अच्छी बात कही तो तुमने नहीं सुनी।'

'शराब पी-पीकर अब तुममें थोड़ी भी इन्सानियत नहीं बची।'

लायली हँसी। बोली, 'आओ न, ऊपर आओ।' गाना गाऊँगी, गपशप करूँगी, आओगे ?'

बजरंगी ने उसकी तरह नहीं देखा। पीछे पलट गया। बोट पर जाकर कुंदन की नींद तोड़ने में उसे बड़ा कष्ट हुआ।

कुंदन खुद ही बोला, 'शराब क्या बहुत ज्याजा पी ली थी ?'

'नहीं जानता।'

बजरंगी उदास भाव से ही बोलता है। वह उत्साह दिखाकर करेगा ही क्या ? उन लोगों की जो इच्छा है, करें। बजरंगी चला जायेगा।

उसने कुंदन से यही बात कही। आश्चर्य ! कुंदन ने कोई विरोध नहीं किया। गंभीर होकर बोला, 'पहले काशी जाना। बाद में गाज़ी-पुर। मुझे भी लगता है, कलकत्ते में तुम्हारा रहना ठीक नहीं।'

'गाजीपुर क्यों ?'

'शादी करोगे। घर बसाने का खर्च दूँगा। दो नाव दहेज में दूँगा। बस, और कुछ भी नहीं दूँगा। उतने भर से ही चला लेना। एक नाव खुद चलाना। एक नाव के लिये आदमी रख लेना।'

'मालिक यही अच्छा है।'

उसके चले जाने के बाद कुंदन ने चैन की साँस ली। लायली से बोला, 'वह इतनी आसानी से राजी हो जायेगा, मैंने यह सोचा भी नहीं था। राजी तो हो गया?'

लायली कुछ न बोली। धूप में हाथ बढ़ाकर हाथ का कंगन घुमाने लगी। कंगन के छोटे-छोटे हीरे के टुकड़ों पर धूप पड़कर एक चमक पैदा कर रही है।

'कुछ बोलती नहीं हो, क्यों?'

'क्या बोलूँगी?'

लायली एक हाथ खींचती है। अलसायी आवाज में बोलती है, 'मैं तो हमेशा ही कहती हूँ, नौकर-चाकर से थोड़ा अलग रहना ही अच्छा है।'

'वह तो नौकर नहीं है।'

'न हो। असल बात क्या है, जानते हो, कहा जाता है कि प्यार नीचे की तरफ दौड़ता है। तुम उसे जितना अपनी तरफ खींचते हो, वह भी क्या उतना तुम्हें अपनाता है? यह भी क्या कभी होता है?'

'वह सचमुच थोड़ा बदल गया है।'

'मैं तो यही कहने की कोशिश कर रही थी। मेरे मुँह की तरफ मौका पाते ही मुँह बाए देखता रहता है।'

कुन्दन की भौंहें टेढ़ी हो गयीं। लायली की बातें उसे पसन्द नहीं। लेकिन कुछ कह भी नहीं सकता। बजरंगी का बार-बार जाने के लिये हठ करना, सुनकर उसे बड़ा ही गुस्सा आया है। यह भी वह प्रकट नहीं कर सकता।

बजरंगी को वह फिर पास बुलाता है। प्यार भरी आवाज में कहता

है, 'और कुछेक दिन धीरज रखो, बजरंगी। जाड़े में चले जाना।'

यह बात सुनकर बजरंगी मानो डर गया। कुन्दन के घुटनों पर हाथ रख कर बोला, 'नहीं मालिक। देरी करने को मत कहो। तुम समझ नहीं पा रहे हो, मैं शायद कोई बुरा काम कर बैठूँगा।'

'करोगे तो करोगे ही। इससे क्या हुआ ?'

'जो भी हो, तुमसे नहीं कह सकूँगा। तुम जाने दोगे या नहीं सो कहो।'

'बजरंगी तुम जाना चाहते हो, सचमुच ?'

'हाँ मालिक।'

अचानक झुक कर बजरंगी ने कुन्दन के पैरों पर माथा रख दिया। मुँह उठाकर बोला, 'मेरे नहीं जाने से, मेरा मंगल नहीं। मेरे पास नहीं रहने से तुम्हें तकलीफ होगी। लेकिन और तो कोई खतरा नहीं होगा! तुम तो अच्छे रहोगे मालिक।'

'बजरंगी, क्या हुआ है ? मुझे खोलकर नहीं बताओगे ?'

'नहीं। बोलने के लायक कुछ भी नहीं है।'

'तब तुम जाओगे ?'

'हाँ मालिक।'

'मेरे कहने के अनुसार शादी करोगे ? लड़की बड़ी अच्छी है रे! मैं देख आया हूँ।'

'शादी ?'

अनमना होकर बजरंगी कुछ सोचता रहता है। इसके बाद हँसता है। बोलता है, 'अच्छा ही तो है। अच्छी तरह एक जंजीर पैरों में पड़ेगी। मन होते ही भागा-भागा नहीं आऊँगा। इसके अलावा... ।'

'क्या रे ?'

'इसके अलावा सभी यह तो जानेंगे कि बजरंगी आज दूसरे का है। उसे अब बात-बात में तंग नहीं किया जा सकेगा। उसकी आशा रखने में कोई लाभ नहीं। क्या कहते हो!'

'जो कहो, तुम्हारी आधी बातों का तो मैं मतलब नहीं समझता, और बाकी बातें पहेलियाँ हैं।'

'मालिक एक काम करो। तुम सभी को बता दो न कि बजरंगी जा रहा है। इस घर के माली, नौकर सबको एक दिन भोज दे दो।'

'तुम जब कह रहे हो तो करूँगा।'

कुन्दन ने उसके सिर पर हाथ रखा। बोला, 'तुम्हें मैं जाने नहीं देता रे! लेकिन तुम्हारा भी भला होगा। इसलिये जाने दे रहा हूँ। देखो बजरंगी, समय रुका नहीं रहता। कितने दिन बीत गये। तुम निरा बच्चे से अब बड़े हो गये हो। आदमी तो अकेले-अकेले रह नहीं सकता। एक साथी की जरूरत पड़ती ही है।'

कुन्दन ने उसका हाथ दोनों हाथों में लेकर सिर पर रखा। कुन्दन को पहले दिन की याद आयी। काशी का मकान, सुबह की धूप। एहसान जताने के लिये किस तरह उसने कुन्दन का दोनों हाथ पकड़ रखा था।

आगे की और भी बातें याद आ रही हैं। लेकिन वह सब बातें ही हैं। कुन्दन कहता है, 'तुम काशी जाओ। मैं दो महीने बाद रवाना हो जाऊँगा।'

'क्यों?'

'मेरे न रहने से तुम्हारी शादी कौन करायेगा?'

बजरंगी कलकत्ता के बाहर जा रहा है। बजरंगी की शादी होगी। यह बात सभी जान गये।

बजरंगी चला जा रहा है, जानकर सभी पूछने लगे, 'क्यों बजरंगी, यह जो जा रहे हो, फिर कब आओगे?'

'मालिक जानता है।'

भीम उसके पास आकर गाँजा के नशे में जार-बेजार रो पड़ा।

'अरे बजरंगी, तुम तो चालाक लड़के हो। मैं तो एक बार काशी

जाने पर अगर बचूँ तब जानो।'

'दूसरी नाव के मल्लाह तुम्हारे कलेजे में चाकू भोंक देंगे, नहीं कहते थे ?'

'अरे इसलिये नहीं जाना चाहता हूँ। एक बार लंगड़ा रामेश्वर की गली में मौज करने की इच्छा होती है रे।'

'तब चलो।'

'नहीं रे।'

भीम ने धोती के कोने से आँख पोंछा। बोला, 'तुम जाओ। तुम्हारा विवाह होगा। मालिक तुम्हें बेशक गाजीपुर वाला मकान दे देगा। सोच कर ही खुशी होती है। एक दिन, इसी भीम ने तुम्हें पानी से उठाया था। इतने बड़े थे। अपने डेरा में ले आया। मेरी एक भाभी थी, उसने सेंक-साँक कर तुम्हें बचाया। सब बातें याद आती हैं रे।'

आँखें बन्द कर भीम बोलता गया, 'उन लोगों का पुण्य कितना बड़ा था! चंद्र-ग्रहण के दिन गंगा में समा गये। वे सब स्वर्ग के सिंहासन पर बैठे हुएं हैं। उन लोगों के लिये चिन्ता ही क्या ? मैंने तो कह ही दिया है, तुम खुद को गंगा मैया का लड़का समझो। अरे, उस समय मेरे दिल में माया किसने पैदा की ? गंगा मैया ने ही तो! दिल में माया-ममता आयी, तुम्हें उठा लिया बजरंगी, छाती पर हाथ रखकर कहो तो, कभी भी जिन्दगी में भीम को नरम पड़ते देखा है ? बस वही एक बार। हा, हा!'

भीम सभी दाँत निकालकर हँसा।

बागानबाड़ी के माली, नौकर, महाराज, सभी मिठाईयाँ खाकर संतुष्ट हुए। गुलरुख ने नीचे आकर थोड़ा खेद जाहिर किया। बजरंगी उन दोनों को लायली के गुस्से से बचाता था। अब क्या होगा, पता नहीं।

बजरंगी ने उसे ढाढ़स बँधाया। जाबेदी, गुलरुख के पीछे-पीछे

छलछलाती आँखें लिए घूमती रहती है। लायली की वह खास दासी है, इसलिये उसकी बर्बादी की संभावना ही अधिक है। बजरंगी ने उसे उस दिन गहने की चोरी की बदनामी से बचाया था। बजरंगी के प्रति वह बहुत कृतज्ञ है।

बहुत दिनों से बजरंगी कुन्दन के मुँह से सुनता आ रहा है, 'तुम्हें कुछ भी नहीं दूँगा। तुम्हारे लिये खर्च नहीं करूँगा।'

संभवतः कुन्दन वह सब भूल गया। हठात्, अच्छा बक्सा और अच्छे बिछावन की फरमाइश हुई। बजरंगी को बुलाकर बोला, 'एक अँगूठी पहनो। हाथ में रखना अच्छा है।'

बजरंगी उस समय रूठ गया।

'तुम तो ऐसा कर रहे हो जैसे मैं जिन्दगी भर के लिये जा रहा हूँ।'

'अरे ओ पंडा महाराज, चुप रहो!'

बजरंगी बड़बड़ाता हुआ फुलवारी तक चला जाता है। चिड़ियों के खोंता के पास खड़ा होकर माली को जाने क्या-क्या समझाता है। उसकी तरफ देखकर कुन्दन के दिल के अंदर जैसे दर्द होने लगता है। दिन बीत रहा है। आज है, शुक्रवार। एक दिन, दो दिन कर के ठीक आठ दिन बाद बजरंगी चला जायेगा। और नहीं आना चाहता। जबर्दस्ती नये बंधन में बँधना चाहता है। वही बजरंगी जो दोष कर पास आता और कुन्दन के घुटनों पर हाथ रख बैठ जाया करता था।

अचानक कुन्दन को कोई बात याद आयी, उसने बजरंगी को बुलाया।

'बजरंगी, उस घर पर बुलाकर माँ तुमसे क्या कह रही थीं रे?'

'मालिक पूजा घर जाने को कहती थीं।'

'क्यों रे?'

'वृहस्पतिवार, ग्रहण का स्नान। ग्रहण-दान में पुजारी को एक गाय देंगी, कहती थीं?'

'ग्रहण का स्नान?'

'हाँ मालिक, चंद्र-ग्रहण ।'

बजरंगी ने आँखें झुकाकर बिना वजह ही थोड़ा हँसने की कोशिश की, 'मुझे गंगा में नाव पर ले जाने को कहती थीं ।'

'खबरदार बजरंगी !'

'मालिक इतना नाराज क्यों हो उठे ?'

'ग्रहण स्नान करेंगी, ग्रहण स्नान !' कुन्दन ने गरज कर कहा 'फोर्ट विलियम से बता दिया गया है कि दक्खिन से एक बहुत बड़ा तूफान आ सकता है । उधर आराकान, चट्टग्राम, संदीप में जोर की आँधी-वर्षा हुई है । समुद्री तूफ़ान ! यहाँ तूफान आने से नहाना निकल जायेगा ।'

कई दिनों तक आकाश में बादल का नाम भी नहीं ।

मंगलवार की सारी रात, बादल वाली हवा बही और आकाश में बादल छा गये । बुधवार की सुबह से ही वर्षा शुरू हुई । बूँदा-बाँदी, तेज हवा । इसके बाद बारिस बढ़ी । हवा का वेग भी बढ़ा । बुधवार तक पूरी तरह साइक्लोन शुरू हुई । मैदान में, बैरकपुर ट्रङ्क रोड, डायमंडहार्बर रोड और पार्क स्ट्रीट में बड़े गाछों की बड़ी-बड़ी डालियाँ टूट कर गिर पड़ीं ।

गंगा का पानी वर्षा और हवा में बढ़कर किनारे तक आ गया । आदिगंगा, कैनिंग झील और बड़ी झील में पानी भर गया । गाँव में गरीब गृहस्थों के फूस के घर द्वार गिर कर बर्बाद हो गये । वर्षा यद्यपि कम हो गयी थी, फिर भी हवा का कितना तेज झोंका ! पुलिस साहब और सेरिफ ने घोषणा कर दी कि इस अवस्था में ग्रहण-स्नान करना नहीं होगा । गोरा पुलिस और गोरखा सब रास्ता घाट से टूटे हुए गाछों की डालियाँ हटाने लगे । मटमैला आकाश । पता चला कि साइक्लोन अचानक अपनी दिशा बदलकर बंगाल की खाड़ी की ओर चला गया है । जाने के पहले धक्का दिये जा रहा है ।

आबहवा देखकर बजरंगी का मन खराब हो गया है। बिदाई का दिन करीब आ रहा है। और मन क्रमशः भारी होता जा रहा है।

बृहस्पतिवार की ठीक आधी रात को लायली उसके कमरे में आयी।

छब्बीस

बजरंगी जानता था, वह आयेगी। बजरंगी जैसे घड़ियाँ ही गिन रहा था।

लायली आयी। तेज हवा। गाछ-वृक्ष पछाड़ खा रहे हैं। शाम से ही शहर सुनसान, वीरान। बूँदा-बाँदी, बारिस। ऐसी बारिस में शरीर नहीं भींगता। केश और मुँह पर मोतियों की तरह बूँदें बिछी रहती हैं। मटमैला आकाश। उसकी फाँक में चाँद भी दिखाई पड़ता है। चाँद की चाँदनी ने अंधकार को तरल मटमैला बना दिया है। लायली आयी। उसके सामने आ खड़ी हुई। बोली, 'तुम नहीं जा सकते। यदि जाना ही हो तो मुझे भी साथ ले चलो।'

बजरंगी उसके ठीक सामने। कमरे का दरवाजा और जंगला खुला हुआ। छिटकनी तूफान की चोट से टूट गई हैं। धड़ाम-धड़ाम कर के दरवाजे पछाड़ खा रहे हैं। गंगा का कल-कल शब्द।

बजरंगी उसकी तरफ देखता रहता है। जवाब नहीं देता।

'मैं तुम्हें प्यार करती हूँ। मैं तुम्हारी हूँ।'

लायली घुटनों के बल बैठ जाती है।

धम-धम कर छाती पर मुक्का मारती रहती है। केश नोचती है और फर्श पर सिर धुनती है।

'किस मुँह से तुम मुझसे रहने को कहती हो? क्यों कहती हो?'

बजरंगी उसकी तरफ देखता है, 'बजरा के लिए तकिया लाने

गया था। नयी तकिया की खोल में एक चिट्ठी मिली। समझा कि तुमने ही रखी है। उस चिट्ठी के लिखने के बाद भी तुम मुझसे इस तरह की बातें करती हो? लज्जा, भय, कुछ भी क्या तुम्हें नहीं है?'

'कुछ भी नहीं, कुछ भी नहीं बजरंगी! मैं तुमसे मुहब्बत करती हूँ।'

लायली उसका हाथ जोर से पकड़ लेती है। बोलती है, 'मैंने उसी दिन तुमसे चिट्ठी पढ़ने को कहा था। तुमने पढ़ा क्यों नहीं?'

'इस चिट्ठी में तुमने क्या लिखा है, लायली?'

'सच बात ही लिखी है।'

लायली उठ खड़ी होती है। बोलती है, 'हाँ। रुक्मा को मैंने ही गहना दिया था और उसने जहर दिया था। इसके पहले उससे जादू-टोना भी मैंने ही करवाया था। मैं अपनी नानी की नतनी हूँ। जादू-टोना पर विश्वास करना चाहा था। जब कोई काम नहीं आया, तब जहर दे दिया। भयानक जहर। जलन नहीं, कष्ट नहीं। पल भर में ही सभी इच्छाओं का अन्त। रुक्मा डर गयी। वह आसानी से राजी नहीं हुई थी। सात दिनों तक उसे मैंने मनाया था। मैंने मोहर दी, जेवर दिया। घोड़ा गाड़ी भी ठीक कर दी, जिससे वह भाग सके।'

लायली हँसती है। चाँद की मटमैली चाँदनी। गंगा के मटमैले पानी की तरह। लायली के केश फिर लहरा उठे। साँप की तरह झूल रहे है। कपाल खून से भरा हुआ और होंठ के पास भी खून।

'उसके घर पर सभी ने सब पर शक किया। किसी को पता न चला कि मैंने उसे मारना चाहा था। लेकिन जो चाहा था, वह नहीं हुआ। वह नहीं मरा। मैं तुम्हें नहीं पा सकी।'

'मेरे लिये तुमने उसे मारना चाहा था?'

'हाँ। तुमसे ज्यादा प्यारा आज मेरे लिए कुछ भी नहीं। आज तेरह वर्षों से प्यार ने मुझे थोड़ा-थोड़ा करके गलाया है। हाँ, बजरंगी। शायद आज ही नहीं, लगता है उसी दिन से प्यार कर रही हूँ।'

'लायली, इसीलिये तो मैं चला जा रहा हूँ।'

'इसीलिये ?'

'हाँ। मेरे रहने से तुम उसे फिर मारना चाहोगी। यह एक बड़ा भयानक नशा है। हाय लायली! एक आदमी को मार कर क्या तुम सुखी हो सकती हो ?'

'हो सकती थी।'

फुसफुसाती आवाज। बजरंगी का हाथ लेकर लायली गले पर घिसती है, छाती पर घिसती है।

'मैं और तुम।'

'बीच में मालिक था। उसे किस तरह अलग करते ? लायली इसीलिये मैं चला जाऊँगा। उसके न रहने से तुम और मैं ? छिः छिः स्वर्ग में भी शांति नहीं पायेंगे। पाप की याद हमें जला जलाकर मारेगी।'

'पाप! इतनी मुहब्बत के बीच वह कैसे आकर खड़ा हो गया ? पाप उसने किया है।'

'उसने कोई पाप नहीं किया है। मुहब्बत हम लोगों के लिये पुण्य और उसके लिये पाप ? यह भी कभी होता है ? मुझे जाना होगा। नहीं जाने से चैन नहीं।'

'मत जाओ।'

'उसे दुःख देकर ? नहीं। कोई भी सुख नहीं पाओगे। बहुत सोच विचार कर देखा है, लायली मुझे अलग होना ही होगा।'

'कहाँ जाओगे ?'

'कहीं दूसरी जगह। जानता हूँ, तुम उस समय भी मेरी आशा नहीं छोड़ोगी। इसलिये मैं शादी करूँगा।'

'उस समय भी मैं उसे किसी क्षण भी छोड़कर जा सकती हूँ, बजरंगी।'

'मैं जो नहीं छोड़ सकता।'

'तुम कहाँ भाग कर बचोगे ? कहाँ मैं नहीं हूँ ?'

बजरंगी के गले में मानो भरी हुई नदी का ज्वार उठ रहा है। हाहाकार कर रहा है, किनारे पर फैल कर सिर धुन रहा है।

'तुम कहाँ नहीं हो लायली ? तुम्हें तो मैंने कब का पा लिया है। आँख खोलने से तुम्हें देखता हूँ, हवा में तुम्हारी साँस महसूस करता हूँ, कान में तुम्हारी ही बात गूँजती है। जिस दिन बीच गंगा में मेरे पास खड़ी होकर आकाश के तारे देखती थीं, उसी दिन से तो तुम मेरी हो !'

'तब फिर मुझे अपना लो न !'

'तुम्हें तो मैं कब का अपना चुका हूँ लायली ! देखो, मेरी छाती पर हाथ रखकर देखो।'

बजरंगी के खून की हर बूँदों में लायली का नाम।

'एक बार मेरी आँखों में झाँक कर देखो।'

सब जगह, ऊपर, नीचे, सामने, पीछे, केवल लायली ! लायली !

'इस तरह तुम्हें पा गया हूँ, फिर भी खून और माँस की मुन्नी को पाने की लालच में उसके दिल पर चोट पहुँचाऊँगा ?'

'बजरंगी मैं तुम्हें प्यार करती हूँ।'

'मैं नहीं करता ? प्यार करता हूँ, इसीलिये तो चला जाऊँगा। लायली उसके जीवन में केवल दो ही आदमी हैं। उनकी ओर देख-कर ही वह बचा हुआ है। हम दोनों लोग उसके आश्रित हैं। फिर मालिक के दिल को मैं चोट नहीं पहुँचा सकता।'

'बजरंगी।'

'तुमने चिट्ठी में लिखा था, वह पापी। कौन पापी, कौन पुण्यवान, नहीं जानता। बस इतना ही जानता हूँ कि उसे आघात नहीं पहुँचा सकता। लायली प्यार की जरूरत आज उसे हम दोनों से ज्यादा है।'

'मुझसे भी ज्यादा ?'

गोरी और फूली हुई देह। उसमें नाखून के खरोंच। दोनों आँखों

में निराशा की आग। भयानक निश्चय की आग।

बजरंगी ने हाथ से मुँह ढँक लिया। हाय भगवान, मुझे शक्ति दो। मैं लायली को प्यार करता हूँ। इतना प्यार करता हूँ कि वह यदि बदले में प्यार न करे तो मुझे जरा भी दुःख नहीं।

उस समय लायला जोर से दर्दभरी आवाज से चीख पड़ती है। तूफान भी जैसे वह दर्दभरी चीख सुनकर गर्जन बन्द कर देता है। तेज दौड़ती हुई मटमैली घटाएँ, दर्दनाक चीख सुनकर छितर-बितर होकर भाग रही हैं। गाछ की डालियाँ टूटती हैं, पानी उछल-उछल पड़ता है, प्रलय सूचित होता है।

लायली भागती रहती है।

अंधेरी फुलवारी, घास, रास्ता। बरामदा, सीढ़ी, कमरा और नाच-घर। सोये हुए कुन्दन की छाती पर वह पछाड़ खाकर गिर पड़ी, फिर उठी। जार बेजार, रो-रोकर वह नाचघर की दीवार पर सिर धुनती है।

वह दर्दभरी चीख सुनकर सभी की नींद खुल जाती है। हाथ में चिराग लिये दासियाँ भागी-भागी जाती हैं। नीचे कुत्ता भूँक रहा है, लोग भाग दौड़ करते रहते हैं।

लायली की छाती पर कुरती फटी हुई। छाती और कपाल पर खून। केश खुला हुआ। लहँगा फटा हुआ।

'किस पर विश्वास किया था, कुन्दन ? उसने मेरा सर्वनाश किया है, सर्वनाश किया है।'

'लायली फिर तो कहो।'

'बजरंगी ने मेरा सर्वनाश किया है।'

'फिर।'

'बजरंगी ने मेरी इज्जत लूट ली है।'

'फिर तो कहो।'

लायली हँसी। लायली ने शमादान उठा लिया। छाती के सामने

रखा। गोरी छाती। नाखून की खरोंच से बूँद-बूँद कर खून गिर रहा है। कुन्दन उठ खड़ा हुआ। सभी अलग हो गये। सभी ने रास्ता दे दिया।

इस कुन्दन को वे सब नहीं पहचानतीं। बजरंगी का मालिक नहीं, लायली का आशिक नहीं। यह कुन्दन, बाबूलाल का पोता है। जंच्चाखाने का न बुझने वाला चिराग, भवानी की पूजा। चंद्रमा के ठीक राहुग्रस्त होने के समय बीच गंगा में कुन्दन की भयानक भवानी-मंत्र दीक्षा। इसके खून में है बेनाप भयंकरता।

कुन्दन सीढ़ियाँ उतर गया। फुलवारी। घास, कंकड़, रास्ता।

'बजरंगी उठो।'

बजरंगी उठ आया। कुन्दन ने उसका हाथ पकड़ा।

निसार की कहानी यहीं समाप्त हो गयी।

लायली के बचपन से यहाँ तक का हाल निसार जानता है। वह जो कुछ जानता था, लायली से सुना था, सब कुछ बता गया है। इसके बाद निसार चला गया।

नाच-घर। कुन्दन अकेला। फिर एक बरसाती शाम। एक बार नौकर आकर बिना कोई आवाज किये चिराग रखकर जाता है।

बाकी जो कुछ है, कुन्दन को बताने की जरूरत नहीं।

छोटी से छोटी, सब घटना उसे याद है।

बादल, टूटा-फूटा बादल। फीकी और पीली रोशनी। सुनसान रास्ता। घोड़ागाड़ी की आवाज। खप-खप, खप-खप। घोड़ों के खुर की आवाज, तेज हवा बह रही। कहीं जैसे गाछ की डाली मरमर कर टूट पड़ी। एक गीदड़ बीच सड़क से चला जाता है।

कुन्दन और बजरंगी। गाड़ी में हाथ रखने वाली चमड़े की लटकन झूल रही है।

बजरंगी का सिर झुका हुआ। कुन्दन अपनी छाती पर हाथ घिस रहा है। बोल रहा है, 'तुम, बजरंगी तुम!'

बजरंगी के मुँह में बात नहीं। कुन्दन बोल रहा है। बात भी हवा के हाहाकार जैसी।

....'चन्द्रग्रहण....डूब गया।....तुम्हारा बाप, तुम्हारी माँ। तुम मेरी तरफ देखकर हँसे थे। तेरह वर्षों बाद तुम्हें फिर से पाया। उसी दिन से....।'

बजरंगी ने कुन्दन के घुटनों पर हाथ रखा। कुन्दन ने ठेल कर वह हाथ अलग कर दिया।

'ऐसी ही ग्रहण की एक रात। ऐसे ही ग्रहण की रोशनी। याद आती हैं, सब बातें याद आती हैं। बजरंगी, यह काम क्यों किया?'

कुन्दन के मकान के बाहर कोई भी नहीं है। अंधेरा मकान, अंधेरी डेवढ़ी। कुन्दन दबी आवाज में बुलाता है। कोई भी जगा नहीं है, कोई कहीं नहीं है।

कुन्दन खुद ही फाटक खोलकर डेवढ़ी खोलता है।

कोई भी जगा नहीं। कोई भी आगे बढ़कर नहीं आया।

पानी वाले कमरे के बड़े-बड़े पत्थर के गगरों पर साँप सरक कर जा रहा है। पानी वाले कमरे के पीछे वाली सुरंग में कितनी हवा। हवा रो रही है। हवा हाहाकार कर रही है। हवा ठहाका मारकर फटी जा रही है।

'मालिक तुम मुझे कहाँ लिये जा रहे हो? हाथ थामो। तुम मेरा हाथ पकड़कर ले चलो।'

'हाथ पकड़ेगा? ऐसे समय में भी कुन्दन का हाथ पकड़ना चाह रहा है?' कुन्दन के गले में दर्दनाक उमड़ घुमड़।

'तुम्हारे हाथ पकड़े रहने से मुझे डर नहीं लगेगा।'

'भगवान!' कुन्दन ईश्वर को शाप देता है। ईश्वर को व्याकुल इच्छा बताता है।

चंद्र-ग्रहण देखो, । चाँद लाल हो गया है । तैयार हो जाओ ।'

'मालिक !'

'बजरंगी तुम्हें कुछ कहना है ?'

'तुम तो मेरे मालिक हो ।'

उसी क्षण कुंदन दो कदम बढ़ आया ।

बिछुआ की मूँठ बाहर थी । शराबी की तरह बजरंगी डगमगाने लगा । दोनों हाथ सामने बढ़ा दिये ।

इसके बाद अपार असीम प्यार से उसने दोनों को पुकारा ।

'मेरा मालिक, मेरी मुन्नी, मेरी मुन्नी । मेहरबान मालिक मेरा ।'

इसके बाद बादल ने आकर ग्रहण के चाँद को ढँक लिया । क्षण-भर में ही जैसे सृष्टि, स्थिति, सबको एक में मिलाकर प्रलय उतर आया ।

इसके बाद और कुछ भी नहीं ।

'बजरंगी, बजरंगी, बजरंगी !' कुंदन के गले से कुरूप दर्दनाक चीख किसी ने जैसे छीन ली ।

कुंदन मुँह उठाता है ।

अब वह सब कुछ समझ रहा है । लायली अंधेरा नहीं सहन कर सकती थी । रात में लायली बिछावन छोड़कर फुलवारी में, छत पर घूमती-फिरती थी ।

लायली इस आईना के सामने विभोर होकर बैठी रहती ।

लायली चिराग लेकर इस आईने में जैसे किसी को खोजती रहती ।

इसके बाद एक दिन उसने पूरा मकान रोशनी से सजाया । अनेक आदमी, अनेक गाने, मोमबत्ती की रोशनी के इर्द-गिर्द बड़े-बड़े हरे कीड़े मर कर पड़े रहते । लायली के शरीर पर कमल हीरा, लायली के नागरा में सोने का काम । लायली सीढ़ियाँ उतर गयी । उसके घाघरा

के किनारे सोने का फूल दिखाई पड़ता।

दूसरे ही दिन, मकान में रोशनी नहीं। दूसरे दिन, कोई मेहमान नहीं, कोई उत्सव भी नहीं।

दोपहर रात में लायली उठी थी। इसी आईना के सामने बैठी थी। एक दिन उसकी माँ ने उसे विष की डिबिया दी थी। बजरंगी के पास आने के लिये लायली ने वही डिबिया हाथ में ले ली थी।

'बजरंगी!'

आवाज नहीं।

'लायली!'

आवाज नहीं।

कुन्दन थोड़ा हँसा और हाथ में बत्ती उठा ली। कमरे में चमेली की सुंगध और धूप की गंध। सारंगी का अति क्षीण स्वर और गाने का पद।....लगना नहीं है जी मेरा।

कुन्दन फुसफुसाकर बोला, 'मुझे क्यों नहीं बताया? क्यों? क्यों?'

गाने का सुर जैसे स्पष्ट और सारंगी की छड़ खींचने की आवाज। कुन्दन के मन में हुआ, वह अभी-अभी गाना सुन पा रहा है, अभी-अभी नहीं सुन पा रहा है। अभी-अभी चमेली की गंध उसकी साँस बँद कर दे रही है, अभी-अभी खो जाती है। अभी-अभी उसके कान के पास कौन गा उठी, अभी-अभी कौन हँस पड़ी? हँसी, गाना, टूटी-फूटी बात, सब जैसे सुनायी पड़ रहे हैं, सुनायी नहीं पड़ रहे हैं।

लायली! बजरंगी! लायली! बजरंगी! बजरंगी! लायली, लायली! वह कमरे की तरफ भागा गया। उधर गया। बरसाती हवा, तूफानी हवा। धूल उड़ रही है। पर्दा उड़ रहा है। जंगला के किवाड़ टकरा गये। लेकिन कोई नहीं, कहीं नहीं!

गाने का सुर, सांरगी का बजना, टूटी-फूटी हँसी और फुसफुसाती बातें। सब जैसे उसके साथ खेल रहे हैं।

बत्ती लेकर कुन्दन सामने की तरफ दौड़ा गया। आईने के ढक्कन को उठाया। बत्ती ऊँची की।

लायली और बजरंगी। आमने-सामने। इसके हाथ में सारंगी, उसके गले में गाना।

कुन्दन दोनों आँखें और दिल भर कर देखता रहता है।

नीचे का फाटक खुल जाता है और जैसे किसी के पैरों की आवाज दौड़ती हुई आती है।

कुन्दन फुसफुसाकर बोला, 'बजरंगी, लायली !'

उन दोनों ने पलटकर नहीं देखा। उन दोनों ने थोड़ी भौंहें टेढ़ी की और कुन्दन की आँखों के सामने आईना धुँधला-सा हो गया।

कुन्दन ने देखा, बत्ती की रोशनी में उसका अपना चेहरा दिख रहा है। पीछे का दरवाजा थोड़ा खुल गया।

कुन्दन बाहर निकल आया।

'मालिक, नहीं जायेंगे। गणेशीलाल।'

कुन्दन आरजि का हाथ ठेल देता है और उतरने लगता है।

'भैया, उन लोगों को पता चला गया है कि बजरंगी नहीं है।'

'चले जाओ गोपाल, मुझे जाने दो।'

वह फाटक से बाहर निकल पड़ता है। फाटक बन्द कर देता है। रास्ते पर बढ़ता जाता है। अचानक रुक जाता है।

बीच सड़क पर गणेशीलाल खड़ा है उसके पीछे एक आदमी, और फिर एक आदमी।

कुन्दन थोड़ा हँसा। वे सब खड़े हैं।

वह कमर से बिछुआ निकाल लेता है और बघनखा बाहर कर लेता है। फेंक देता है।

डेवढ़ी की रोशनी से सड़क का पानी चकमक-चकमक कर रहा है। वे सब छुरा निकाल कर एक साथ ही कुन्दन की ओर दौड़ पड़े।